जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

(भाग-2)

लेखन एवं सङ्कलन :
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

प्रकाशक :
श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षुमण्डल, देहरादून
एवं
पण्डित कैलाशचन्द्र जैन परिवार, अलीगढ़

ॐ

॥ परमात्मने नमः ॥

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन ग्रन्थमाला, पुष्प-2

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

(भाग-2)

कारण-कार्य व्यवस्था का प्रश्नोत्तरात्मक संग्रह

लेखन एवं सङ्कलन :

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़ (उ०प्र०)

प्रकाशक :

श्री दिगम्बर-जैन मुमुक्षुमण्डल, देहरादून

एवं

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन परिवार, अलीगढ़

पाँचवाँ संस्करण : 1100 प्रतियाँ (सम्पादित)
(दशलक्षण महापर्व के पावन अवसर पर प्रकाशित, मंगलवार, 03 सितम्बर 2019)

मूल्य –

— मुमुक्षुता की प्रगटता अथवा भावना/संकल्प ही
इस पुस्तक का उचित मूल्य है।

Available At -

- **TEERTHDHAM MANGALAYATAN**
  Aligarh-Agra Road, Sasni-204216, Hathras (U.P.)
  www.mangalayatan.com; info@mangalayatan.com
- **TEERTHDHAM CHIDAYATAN**
  Dusari Nasiyan se Aage, Hastinapur, Distt. Meerut-250404 (U.P.)
  Shri Mukeshchand Jain, Mob, 9837079003
- **SHRI KUNDKUND KAHAN DIG. JAIN SWADHYAY MANDIR**
  29, Gandhi Road, Dehradun-248001 (Uttarakhand)
  Ph. : 0135 - 2654661 / 2623131
- **AZAD TRADING COMPANY**
  Jain Mandir ke Neeche, Lal Kauyan, Bulandshahar-203001 (U.P.)
  Ph. : 9897069781
- **SHREE KUNDKUND-KAHAN PARMARTHIK TRUST**
  302, Krishna-Kunj, Plot No. 30,
  Navyug CHS Ltd., V.L. Mehta Marg,
  Vile Parle (W), Mumbai - 400056
  e-mail : vitragva@vsnl.com / shethhiten@rediffmail.com

टाइप सेटिंग :
मङ्गलायतन ग्राफिक्स, अलीगढ़

मुद्रक :
देशना कम्प्यूटर्स, जयपुर

प्रकाशकीय

जगत के सब जीव सुख चाहते हैं और दुःख से भयभीत हैं। सुख पाने के लिए यह जीव, सर्व पदार्थों को अपने भावों के अनुसार पलटना चाहता है, परन्तु अन्य पदार्थों को बदलने का भाव मिथ्या है क्योंकि पदार्थ तो स्वयमेव पलटते हैं और इस जीव का कार्य, मात्र ज्ञाता-दृष्टा है।

सुखी होने के लिए जिनवचनों को समझना अत्यन्त आवश्यक है। वर्तमान में जिनधर्म के रहस्य को बतलानेवाले अध्यात्मपुरुष पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी हैं। ऐसे सतपुरुष के चरणों की शरण में रहकर हमने जो कुछ सीखा-पढ़ा है, उसके अनुसार पण्डित कैलाशचन्द्रजी जैन (बुलन्दशहर) द्वारा गुंथित जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला के सातों भाग, जिनधर्म के रहस्य को अत्यन्त स्पष्ट करनेवाले होने से चौथी बार प्रकाशित हो रहे हैं।

इस प्रकाशन कार्य में हम लोग अपने मण्डल के विवेकी और सच्चे देव-गुरु-शास्त्र को पहचाननेवाले स्वर्गीय श्री रूपचन्दजी, माजरावालों को स्मरण करते हैं, जिनकी शुभप्रेरणा से इन ग्रन्थों का प्रकाशनकार्य प्रारम्भ हुआ था।

हम बड़े भक्तिभाव से और विनयपूर्वक ऐसी भावना करते हैं कि सच्चे सुख के अर्थी जीव, जिनवचनों को समझकर सम्यग्दर्शन प्राप्त करें। ऐसी भावना से इन पुस्तकों का चौथा प्रकाशन आपके हाथ में है।

इस दूसरे भाग में छह कारक; एवं कारण-कार्य रहस्य के अन्तर्गत निमित्त-उपादान; निमित्त-नैमित्तिक; व्याप्य-व्यापक; योग्यता एवं स्वतन्त्रता

की घोषणा जैसे वस्तु स्वातन्त्र्य को दर्शानवाले विषय समायोजित किये गये हैं। इसी ग्रन्थ में समयसार कलश 211 का पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी का प्रवचन 'स्वतन्त्रता की घोषणा' प्रकाशित किया गया है। विदित हो कि कारण-कार्य व्यवस्था का सही ज्ञान न होने से या तो अज्ञानी जीव निमित्तरूप परद्रव्य को कार्य का कारण मान लेता है अथवा कार्य के काल में अनिवार्यरूप से उपस्थित निमित्त के अस्तित्व से ही इनकार कर देता है। ये दोनों बातें समीचीन नहीं हैं। वस्तुतः कार्य तत्समय की योग्यतारूप क्षणिक उपादान कारण से ही होता है, तब उसमें अनुकूलरूप निमित्त की उपस्थिति भी होती ही है।

हमारे उपकारी आदरणीय पण्डित कैलाशचन्द्रजी के जन्म-शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में, तीर्थधाम मङ्गलायतन में आयोजित **मङ्गल समर्पण समारोह** के अवसर पर यह सम्पादित संस्करण प्रकाशित किया गया था, जिसका मुमुक्षु समाज में अत्यन्त समादर हुआ और शीघ्र ही इसकी सभी प्रतियाँ समाप्त हो गयीं, फलस्वरूप सम्पादित संस्करण का यह दूसरा संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है, इसका हमें हर्ष है। प्रस्तुत ग्रन्थ को सुव्यवस्थित सम्पादितरूप में उपलब्ध कराने का श्रेय पण्डितजी के सुपुत्र श्री पवन जैन, अलीगढ़ एवं पण्डित देवेन्द्रकुमार जैन, बिजौलियां को है। तदर्थ मण्डल की ओर से आभार व्यक्त करते हैं।

सभी जीव इस भाग में समाहित कारण-कार्य व्यवस्था का सम्यक् स्वरूप समझकर स्वरूपानुभूति प्राप्त करें - यही भावना है।

निवेदक
दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल
देहरादून

03 सितम्बर 2019
दशलक्षण महापर्व के
पावन अवसर पर प्रकाशित

भूमिका

वीतरागी जिनेन्द्र परमात्मा की दिव्यध्वनि में प्रवाहित कारण-कार्य व्यवस्था प्रत्येक वस्तु की स्वतन्त्रता का दिग्दर्शन कराती है। विश्व में जो-जो भी कार्य होता है, वह अपनी तत्समय की योग्यतारूप समर्थ कारण से ही होता है। उस समय त्रिकाली उपादानकारण अनन्तरपूर्व -क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण के साथ संयोगरूप निमित्तकारण की उपस्थिति होती है। अज्ञानी जीव इस रहस्य को न जानने के कारण निमित्तकारण को ही कार्य का वास्तविक कर्ता मानकर निमित्ताधीन दृष्टि से, संसार की चार गतियों में परिभ्रमण करता हुआ निगोद चला जाता है। कारण-कार्य की वास्तविक व्यवस्था का परिज्ञान होने पर न तो निमित्त से कार्य होने की भ्रान्ति होती है और न निमित्त के अस्तित्व से इनकार ही होता है। यह कारण-कार्य की सम्यक् व्यवस्था है। जिसे इस पुस्तक में छह कारक, निमित्त-उपादान; निमित्त-नैमित्तिक; व्याप्य-व्यापक; योग्यता एवं स्वतन्त्रता की घोषणा द्वारा स्पष्ट किया गया है।

यहाँ यह विशेष उल्लेखनीय है कि वर्तमान दिगम्बर जैन समाज में निमित्त-उपादान आदि जैनदर्शन के आधारभूत सिद्धान्तों की चर्चा का प्रादुर्भाव पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की आध्यात्म क्रान्ति से ही हुआ है। पूज्य गुरुदेवश्री ने अपने आध्यात्मिक प्रवचनों में वस्तु की स्वतन्त्रता का जो शंखनाद किया है, उसने परतन्त्रता की बेड़ियों को छिन्न-भिन्न कर डाला है। स्वतन्त्रता के उद्घोषक पूज्य गुरुदेवश्री का सचमुच सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज सहित मुझ पर अनन्त-अनन्त उपकार है।

पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन एवं समादरणीय श्री रामजीभाई दोशी, श्री खीमचन्दभाई सेठ की कक्षाओं के समय ही मैं इन विषयों को प्रश्नोत्तररूप से आत्महितार्थ लिखता रहा हूँ, जिसे देहरादून मुमुक्षु मण्डल ने अब तक तीन बार प्रकाशित किया है। अब यह चौथा संस्करण मेरी भावना के अनुरूप सम्पादित होकर प्रकाशित किया जा रहा है, जिसकी मुझे प्रसन्नता है।

हे जीवों! यदि आत्महित करना चाहते हो तो समस्त प्रकार से परिपूर्ण निज आत्मस्वभाव की रुचि और विश्वास करो। देहादि से सर्वथा भिन्न ज्ञानस्वरूप निज आत्मा का निर्णय करना ही सम्पूर्ण जिनशासन का सार है क्योंकि जो जीव, देहादि से भिन्न ज्ञान-दर्शनस्वभावी आत्मा का आश्रय लेते हैं, वे मोक्षमार्ग प्राप्त कर मोक्ष को चले जाते हैं और जो देहादि में ही अपनेपने का श्रद्धान-ज्ञान-आचरण करते हैं, वे चारों गतियों में घूमकर निगोद में चले जाते हैं।

सभी जीव इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किये गये प्रश्नोत्तरों का बारम्बार अभ्यास करके, आत्महित के मार्ग में प्रवर्तमान हों - इसी भावना के साथ-

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

अलीगढ़

अध्यात्मयुगसृष्टा पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी

(संक्षिप्त जीवनवृत्त)

भारत की वसुन्धरा, अनादि से ही तीर्थङ्कर भगवन्तों, वीतरागी सन्तों, ज्ञानी-धर्मात्माओं एवं दार्शनिक / आध्यात्मिक चिन्तकों जन्मदात्री रही है। इसी देश में वर्तमान काल में भगवान ऋषभदेव से लेकर भगवान महावीर तक चौबीस तीर्थङ्कर हुए हैं। वर्तमान में भगवान महावीर के शासनकाल में धरसेन आदि महान दिगम्बर सन्त, श्रीमद् कुन्दकुन्दाचार्य आदि महान आध्यात्मिक सन्त, इस पवित्र जिनशासन की पताका को दिग्दिगन्त में फहराते रहे हैं।

वर्तमान शताब्दी में जिनेन्द्रभगवन्तों, वीतरागी सन्तों एवं ज्ञानी धर्मात्माओं द्वारा उद्घाटित इस शाश्वत् सत्य को, जिन्होंने अपने प्रचण्ड पुरुषार्थ से स्वयं आत्मसात करते हुए पैंतालीस वर्षों तक अविरल प्रवाहित अपनी दिव्यवाणी से, इस विश्व में आध्यात्मिक क्रान्ति का शंखनाद किया - ऐसे परमोपकारी पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी से आज कौन अपरिचित है! पूज्य गुरुदेवश्री ने क्रियाकाण्ड की काली कारा में कैद, इस विशुद्ध जिनशासन को अपने आध्यात्मिक आभामण्डल के द्वारा न मुक्त ही किया, अपितु उसका ऐसा प्रचार-प्रसार जिसने मानों इस विषम पञ्चम काल में तीर्थङ्करों का विरह भुलाकर, भरतक्षेत्र को विदेहक्षेत्र और पञ्चम काल को चौथा काल ही बना दिया।

भारतदेश के गुजरात राज्य में भावनगर जनपद के 'उमराला' गाँव में स्थानकवासी सम्प्रदाय के दशाश्रीमाली वणिक परिवार के श्रेष्ठीवर्य श्री मोतीचन्दभाई के घर, माता उजमबा की कूख से विक्रम संवत् 1946 के वैशाख शुक्ल दूज, रविवार (दिनाङ्क 21 अप्रैल, सन् 1890 ईस्वी) प्रात:काल इन बाल महात्मा का जन्म हुआ।

सात वर्ष की वय में लौकिक शिक्षा लेना प्रारम्भ किया। प्रत्येक वस्तु के हृदय तक पहुँचने की तेजस्वी बुद्धिप्रतिभा, मधुरभाषीपना, शान्तस्वभाव, सौम्य व गम्भीर मुखमुद्रा, तथा निस्पृह स्वभाववाले होने से बाल 'कानजी' शिक्षकों तथा विद्यार्थियों में प्रिय हो गये। विद्यालय और

जैन पाठशाला के अभ्यास में प्राय: प्रथम नम्बर आता था, किन्तु विद्यालय की लौकिक शिक्षा से उन्हें सन्तोष नहीं होता था। अन्दर ही अन्दर ऐसा लगता था कि मैं जिसकी खोज में हूँ, वह यह नहीं है।

तेरह वर्ष की उम्र में माता के अवसान से, पिताजी के साथ पालेज जाना हुआ। चार वर्ष बाद पिताजी के स्वर्गवास के कारण, सत्रह वर्ष की उम्र में भागीदार के साथ व्यवसायिक प्रवृत्ति में जुड़ना हुआ। दुकान पर भी धार्मिक पुस्तकें पढ़ते थे। वैरागी चित्तवाले कहानकुँवर रात्रि के समय रामलीला या नाटक देखने जाते, तो उसमें से वैराग्यरस का घोलन करते थे। जिसके फलस्वरूप पहली बार सत्रह वर्ष की उम्र में उज्ज्वल भविष्य की अभिव्यक्ति करता हुआ, बारह लाईन के काव्य की रचना करते हैं — **शिवरमणी रमनार तूं, तूं ही देवनो देव।**

सत्य की शोध के लिए दीक्षा लेने के भाव से 22 वर्ष की युवा अवस्था में दुकान का परित्याग करते हैं, और गुरु के समक्ष आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार करते हैं, फिर 24 वर्ष की उम्र में (विक्रम संवत् 1970) में जन्मनगरी उमराला में 2000 साधर्मियों के विशाल जनसमुदाय की उपस्थिति में स्थानकवासी सम्प्रदाय की दीक्षा अंगीकार करते हैं। दीक्षा के समय हाथी पर चढ़ते हुए धोती फट जाती है, तीक्ष्ण बुद्धि के धारक कानजी को शङ्का होती है कि कुछ गलत हो रहा है।

विक्रम संवत् 1978 में महावीरप्रभु के शासन-उद्धार का और हजारों मुमुक्षुओं के महान पुण्योदय का सूचक एक मङ्गलकारी पवित्र प्रसङ्ग बनता है :

विधि के किसी धन्य क्षण में श्रीमद्भगवत् कुन्दकन्दाचार्यदेव रचित 'समयसार' नामक महान परमागम, गुरुदेवश्री के हस्तकमल में आता है और इन पवित्र पुरुष के अन्तर में से सहज ही उद्‌गार निकलते है — '**यह तो अशरीरी होने का शास्त्र है।**' समयसार का अध्ययन और चिन्तन करते हुए अन्तर में आनन्द और उल्लास प्रस्फुटित होता है एवं अन्तरंग जीवन में भी परम पवित्र परिवर्तन होता है। भूली पड़ी परिणति निज घर देखती है। तत्पश्चात् श्री प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, मोक्षमार्गप्रकाशक, द्रव्यसंग्रह, सम्यग्ज्ञानदीपिका इत्यादि दिगम्बर शास्त्रों

के अभ्यास से आपको नि:शंक निर्णय हो जाता है कि दिगम्बर जैनधर्म ही मूलमार्ग है और वही सच्चा धर्म है। इस कारण अन्तरंग श्रद्धा कुछ और तथा बाहर में वेष कुछ और — यह स्थिति आपको असह्य लगने लगती है। अत: अन्तरंग में अत्यन्त मनोमन्थन के पश्चात् सम्प्रदाय के परित्याग का निर्णय करते हैं।

परिवर्तन के लिये योग्य स्थल की शोध करते हुए सोनगढ़ आकर 'स्टार ऑफ इण्डिया' नामक एकान्त मकान में महावीर जन्मकल्याणक के दिवस, (चैत्र शुक्ल 13, संवत् 1991) दोपहर सवा बजे सम्प्रदाय का चिह्न, मुँहपट्टी का त्याग करते हैं और स्वयं घोषित करते हैं कि **'अब मैं स्थानकवासी साधु नहीं; मैं सनातन दिगम्बर जैनधर्म का श्रावक हूँ।'** सिंहवृत्ति के धारक इन महापुरुष ने 45 वर्ष की उम्र में महावीर्य उछाल कर यह अद्भुत पराक्रमी कार्य किया।

'स्टार ऑफ इण्डिया' में निवास करते हुए मात्र तीन वर्ष के दौरान ही जिज्ञासु भक्तजनों का प्रवाह दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया, जिसके कारण यह मकान एकदम छोटा पड़ने लगा। अत: भक्तों ने इन परम प्रतापी सत् पुरुष के निवास और प्रवचन का स्थल **'श्री जैन स्वाध्याय-मन्दिर'** का निर्माण किया। गुरुदेवश्री ने ज्येष्ठ कृष्णा 8, संवत् 1994 के दिन इस निवासस्थान में मंगल पदार्पण किया। यह 'स्वाध्यायमन्दिर' जीवनपर्यन्त इन महापुरुष की आत्मसाधना और वीरशासन की प्रभावना का केन्द्र बन गया।

यहाँ दिगम्बरधर्म के चारों अनुयोगों के छोटे बड़े 183 ग्रन्थों का गहनता से अध्ययन किया। उनमें से 38 ग्रन्थों पर सभा में प्रवचन किये। जिनमें श्री समयसार ग्रन्थ पर तो 19 बार अध्यात्म वर्षा की। प्रवचनसार, अष्टपाहुड़, परमात्मप्रकाश, नियमसार, पंचास्तिकायसंग्रह, समयसार कलश-टीका इत्यादि ग्रन्थों पर भी बहुत बार प्रवचन किये हैं।

दिव्यध्वनि का रहस्य समझानेवाले और कुन्दकुन्दादि आचार्यों के गहन शास्त्रों के रहस्योद्घाटक इन महापुरुष की भवताप विनाशक अमृतवाणी को ईस्वी सन् 1961 से नियमितरूप से टेप में उत्कीर्ण किया

गया, जिसके प्रताप से आज अपने पास नौ हजार से अधिक प्रवचन सुरक्षित उपलब्ध हैं। यह मङ्गल गुरुवाणी, देश-विदेश के समस्त मुमुक्षु मण्डलों में तथा लाखों जिज्ञासु मुमुक्षुओं के घर-घर में गुंजायमान हो रही है। इससे इतना तो निश्चित है कि भरतक्षेत्र के भव्यजीवों को पञ्चम काल के अन्त तक यह दिव्यवाणी ही भव के अभाव में प्रबल निमित्त होगी।

इन महापुरुष का धर्म सन्देश, देश-विदेश के समस्त मुमुक्षुओं को नियमित उपलब्ध होता रहे, इस हेतु से विक्रम संवत् 2000 के मार्गशीष माह से (दिसम्बर 1943 से) **'आत्मधर्म'** नामक मासिक आध्यात्मिक पत्रिका का प्रकाशन सोनगढ़ से मुरब्बी श्री रामजीभाई माणिकचन्द दोशी के सम्पादकत्व में प्रारम्भ हुआ, जो वर्तमान में भी गुजराती एवं हिन्दी भाषा में नियमित प्रकाशित हो रहा है।

सोनगढ़ में विक्रम संवत् 1997 – फाल्गुन शुक्ल दूज के दिन नूतन दिगम्बर जिनमन्दिर में कहानगुरु के मङ्गल हस्त से श्री सीमन्धर आदि भगवन्तों की पञ्च कल्याणक विधिपूर्वक प्रतिष्ठा हुई। ईस्वी सन् 1941 से ईस्वीं सन् 1980 तक सौराष्ट्र-गुजरात के उपरान्त समग्र भारतदेश के अनेक शहरों में तथा अफ्रीका के नैरोबी में कुल 66 पञ्च कल्याणक तथा वेदी प्रतिष्ठा इन वीतरागमार्ग प्रवर्तक सत्पुरुष के पावन कर-कमलों से हुई।

श्री सम्मेदशिखरजी की यात्रा के निमित्त समग्र उत्तर और पूर्व भारत में मङ्गल विहार ईस्वी सन् 1957 और ईस्वी सन् 1967 में ऐसे दो बार हुआ। इसी प्रकार समग्र दक्षिण और मध्यभारत में ईस्वी सन् 1959 और ईस्वी सन् 1964 में ऐसे दो बार विहार हुआ।

दिनांक 28 नवम्बर 1980 शुक्रवार (मार्गशीष कृष्णा 7, संवत् 2037) के दिन ये प्रबल पुरुषार्थी आत्मज्ञ सन्त पुरुष देहादि का लक्ष्य छोड़कर, अपने ज्ञायक भगवान के अन्तरध्यान में एकाग्र हुए, अतीन्द्रिय आनन्दकन्द निज परमात्मतत्त्व में लीन हुए। सायंकाल आकाश का सूर्य अस्त हुआ, तब सर्वज्ञपद के साधक सन्त ने भरतक्षेत्र से स्वर्गपुरी में प्रयाण किया। वीरशासन को प्राणवन्त करके यहाँ से अध्यात्म युग सृजन कर गये।

अनुक्रमणिका

1.	छह कारक	3
2.	उपादान–उपादेय	57
3.	योग्यता – स्वरूप एवं लाभ	97
4.	निमित्तकारण – स्वरूप एवं प्रयोजन	105
5.	निमित्त–नैमित्तिकसम्बन्ध :स्वरूप एवं प्रयोजन	122
6.	व्याप्य–व्यापकसम्बन्ध :स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ	140
7.	आत्मा, निमित्त – नैमित्तिकभाव से भी........	146
8.	स्वतन्त्रता की घोषणा	153
	स्वतन्त्रता की घोषणा	161
9.	कारण–कार्य स्वरूप : प्रयोगात्मक प्रश्नोत्तर	185
	उपादान–निमित्त संवाद	208

श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल, देहरादून के प्रकाशन

1. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–1	40 रुपये
2. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–2	40 रुपये
3. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–3	40 रुपये
4. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–4	40 रुपये
5. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–5	40 रुपये
6. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–6	40 रुपये
7. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–7	40 रुपये
8. जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला, भाग–8 (छहढाला प्रश्नोत्तरी)	प्रकाशनाधिन
9. जिनागमसार	अनुपलब्ध

नोट : कृपया उक्त सभी ग्रन्थ प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –

— **SHRI KUNDKUND KAHAN DIG. JAIN SWADHYAY MANDIR**
29, Gandhi Road, Dehradun-248001 (Uttarakhand)
Ph. : 0135 - 2654661 / 2623131

— **TEERTHDHAM MANGALAYATAN,**
Aligarh-Agra Road, Sasni-204216, Hathras (U.P.)
www.mangalayatan.com; info@mangalayatan.com

ॐ

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला

भाग – 2

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं।
णमो उव्ज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥1॥

मंगलं भगवान वीरो मंगलं गौतमो गणी।
मंगलं कुन्दकुन्दार्यो जैन धर्मोस्तु मंगलम् ॥2॥

आत्मा ज्ञान स्वयं ज्ञान, ज्ञानादन्यत्करोति किम्।
परभावस्य कर्तात्मा, मोहोऽयं व्यवहारिणाम् ॥3॥

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जन शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥4॥

उपादान निज शक्ति है जिय को मूल स्वभाव।
है निमित्त पर योग तें बन्यो अनादि बनाव ॥5॥

उपादान अरु निमित्त ये, सब जीवन पै वीर।
जो निज शक्ति सम्भाल ही सो पहुँचे भवतीर ॥6॥

देव गुरु दोनों खड़े किसके लागू पाँव।
बलिहारी गुरुदेव की भगवान दियो बताय ॥7॥

करुणानिधि गुरुदेव श्री दिया सत्य उपदेश।
ज्ञानी माने परख कर, करे मूढ़ संक्लेश ॥8॥

कविवर पण्डित बनारसीदास कृत

उपादान-निमित्त दोहा

शिष्य का प्रश्न :

गुरु उपदेश निमित्त बिन, उपादान बलहीन।
ज्यों नर दूजे पाँव बिन, चलवे को आधीन॥ 1॥

हो जाने था एक ही, उपादान सों काज।
थकै सहाई पौन बिन, पानी मांहि जहाज॥ 2॥

उपादान की ओर से उत्तर :

ज्ञान नैन किरिया चरण, दोऊ शिवमग धार।
उपादान निश्चय जहाँ, तहाँ निमित्त व्यवहार॥ 3॥

प्रथम प्रश्न का समाधान :

उपादान निजगुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय।
भेदज्ञान परमाण विधि, विरला बूझे कोय॥ 4॥

उपादान ही सर्वत्र बलवान है :

उपादान बल जहँ तहाँ, नहिं निमित्त को दाव।
एक चक्र सों रथ चले, रवि को यहै स्वभाव॥ 5॥

दूसरे प्रश्न का समाधान -

सधै वस्तु असहाय जहाँ, तहाँ निमित्त है कौन?
ज्यों जहाज परवाह में, तिरै सहज बिन पौन॥ 6॥

उपादान विधि निरवचन, है निमित्त उपदेश।
वसे जु जैसे देश में, धरे सु तैसे भेष॥ 7॥

1

छह कारक

प्रश्न 1- कारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो क्रिया का जनक हो, अर्थात् क्रिया को उत्पन्न करनेवाला हो, उसे कारक कहते हैं।

प्रश्न 2- छह कारक अधिकार में 'अधिकार' शब्द क्या बताता है ?

उत्तर - अपने त्रिकाली स्वभाव पर अधिकार माने तो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्ष की प्राप्ति होती है और परवस्तुओं में या विकारीभावों में अपना अधिकार माने तो निगोद की प्राप्ति होती है। जो जीव, परवस्तुओं में या विकारीभावों में अपना अधिकार मानता है, उसे हजार बार धिक्कार, यह 'अधिकार' शब्द बताता है।

प्रश्न 3- कारक कौन कहला सकता है ?

उत्तर - जो किसी-न-किसी रूप में क्रिया - व्यापार के प्रति प्रायोजक होता है, कारक वही हो सकता है; अन्य नहीं।

प्रश्न 4- क्रिया शब्द के पर्यायवाची नाम क्या-क्या हैं ?

उत्तर - क्रिया को कर्म, अवस्था, पर्याय, हालत, दशा, परिणाम, परिणति भी कहते हैं।

प्रश्न 5- संसार में क्या देखा जाता है ?

उत्तर - कार्य देखा जाता है।

प्रश्न 6- कार्य से कितने प्रश्न उठते हैं ?

उत्तर - छह प्रश्न उठते हैं —

(1) किसने किया ? कर्ता। (2) क्या किया ? कर्म (3) किस साधन द्वारा किया ? करण। (4) किसके लिए किया ? सम्प्रदान। (5) किसमें से किया ? अपादान। (6) किसके आधार से किया ? अधिकरण।

प्रश्न 7- कारक कितने हैं और कौन-कौन से हैं ?

उत्तर - कारक छह हैं— (1) कर्ता, (2) कर्म, (3) कारण, (4) सम्प्रदान, (5) अपादान, और (6) अधिकरण।

प्रश्न 8- विभक्ति कितनी हैं ?

उत्तर - सम्बोधनसहित आठ हैं।

प्रश्न 9- कारकों में से कौन-कौन सी विभक्ति निकाल दी ?

उत्तर - सम्बन्ध और सम्बोधन विभक्ति को निकाल दिया है।

प्रश्न 10- कारक में से सम्बन्ध और सम्बोधन विभक्ति को क्यों निकाल दिया है ?

उत्तर - (1) छठवीं विभक्ति सम्बन्ध को बताती है— जैसे:— मेरा मकान, मेरा भगवान। कारक की परिभाषा में, 'जो क्रिया का जनक हो, उसे कारक कहते हैं'। छठवीं विभक्ति में कार्यपना नहीं पाया जाता और ज्ञानी किसी के साथ सम्बन्ध नहीं मानते; इसलिए छठवीं विभक्ति को निकाल दिया है। (2) सम्बोधन में — हे राम, हे लक्ष्मण! हे पना पाया जाता है; क्रियापना नहीं पाया जाता और ज्ञानी किसी को सम्बोधते नहीं, क्योंकि प्रत्येक आत्मा, ज्ञान का कन्द है; इसलिए सम्बोधन को भी निकाल दिया है।

प्रश्न 11 – विभक्ति के कितने अर्थ हैं ?

उत्तर – दो हैं (1) वि=विशेषरूप से। भक्ति=लीनता करना, अर्थात् आत्मा में विशेष प्रकार लीनता करना, यह निश्चयभक्ति, अर्थात् विभक्ति का पहला अर्थ है। (2) वि, अर्थात् विशेष प्रकार से, भक्त, अर्थात् पृथक् होना, यह विभक्ति का दूसरा अर्थ है।

प्रश्न 12– विभक्ति का अर्थ, जो 'विशेष प्रकार से पृथक् होना' किया है, यह किस-किस से पृथक् होना है ?

उत्तर – (1) अत्यन्त भिन्न परपदार्थों से पृथक् होना, (2) आँख नाक–कानरूप औदारिकशरीर से पृथक होना, (3) तैजस –कार्माणशरीर से पृथक होना, (4) शब्द (भाषा) और मन से पृथक् होना, (5) शुभाशुभ विकारीभावों से पृथक होना, (6) अपूर्ण–पूर्ण शुद्धपर्यायों के पक्ष से पृथक् होना, (7) भेदनय के पक्ष से पृथक् होना, (8) अभेदनय के पक्ष से पृथक् होना, (9) भेदाभेदनय के पक्ष से पृथक् होना।

प्रश्न 13– विभक्ति का प्रथम अर्थ है 'आत्मा में विशेष प्रकार से लीनता' – उसकी प्राप्ति कैसे हो ?

उत्तर – नौ प्रकार के पक्षों से मेरी आत्मा का कोई सम्बन्ध नहीं है – ऐसा जानकर, अपनी आत्मा, जो अनन्त गुणों का अभेद पिण्ड है, उसकी ओर दृष्टि करे तो 'आत्मा में विशेष प्रकार से लीनता की प्राप्ति होती है।'

प्रश्न 14– अपने में विशेष प्रकार से भक्ति करने से क्या होता है ?

उत्तर – अनादि काल से नौ प्रकार के पक्षों में जो कर्ता–कर्मादि की बुद्धि है, उसका अभाव हो जाता है और अपने भगवान का पता

चल जाता है। तत्पश्चात् क्रम से शुद्धि में वृद्धि करते-करते पूर्ण परमात्मापना पर्याय में प्रगट हो जाता है।

प्रश्न 15- छह कारकों के ज्ञान से क्या लाभ होगा ?

उत्तर - अनादि काल से यह जीव अपने को भूलकर पर में, विकार में या किसी पक्ष में पड़कर पागल हो रहा है। यदि यह छह कारकों का ज्ञान करले तो पागलपने का अभाव हो जाएगा।

प्रश्न 16- छह कारकों का ज्ञान करके, हम ज्ञानी माने जावें और लोग हमारा आदर करें, ऐसा मानकर छह कारकों का ज्ञान करे, तो क्या होता है ?

उत्तर - ऐसा जीव अनन्त संसार का पात्र होता है क्योंकि छह कारकों के ज्ञान से तो अनन्त काल की पर में कर्ता-भोक्ता की खोटी बुद्धि का अभाव होता है; उसके बदले उससे सांसारिक प्रयोजन साधे, तो परम्परा से निगोद का कारण है।

प्रश्न 17- कारक का निरूपण कितने प्रकार से है ?

उत्तर - दो प्रकार से है — निश्चयकारक, और व्यवहारकारक।

प्रश्न 18- निश्चय और व्यवहारकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जहाँ पर के साथ कारकता का सम्बन्ध बताया जाये, वह व्यवहारकारक है और जहाँ अपने में ही (एक ही वस्तु में) कारकता का सम्बन्ध बताया जाये, वह निश्चयकारक है। व्यवहार -कारक औपचारकि एवं निश्चयकारक वास्तविक कारक हैं।

प्रश्न 19- जो व्यवहारकारक हैं, उन्हीं को सर्वथा सच्चा माने तो उसे शास्त्रों में क्या-क्या कहा है ?

उत्तर - (1) श्रीपुरुषार्थसिद्धियुपाय में 'तस्य देशना नास्ति'

कहा है। (2) श्रीसमयसार, कलश 55 में 'यह अहंकाररूप मोह -अज्ञान अन्धकार है, उसका सुलटना दुर्निवार है' - ऐसा कहा है। (3) श्रीप्रवचनसार में 'पद पद पर धोखा खाता है' - ऐसा कहा है। (4) श्री आत्मावलोकन में 'हरामजादीपना' कहा है। (5) श्री समयसार में 'मिथ्यादृष्टि तथा उसका फल, संसार है' - ऐसा कहा है। (6) श्रीमोक्षमार्गप्रकाशक में उसके सब धर्म के अङ्ग मिथ्यात्वभाव को प्राप्त होते हैं, तथा 'मिथ्यादर्शन' व अकार्यकारी तथा 'अनीति' आदि शब्दों से सम्बोधन किया है। इसलिए जो व्यवहार के कथन को सच्चा मानता है, उससे मिथ्यात्व होता है; उसे कभी भी धर्म की प्राप्ति नहीं होती है।

प्रश्न 20- व्यवहारकारक के विषय में क्या समझना चाहिए?

उत्तर - 'परमार्थत: कोई द्रव्य किसी का कर्ता-हर्त्ता नहीं हो सकता'; इसलिए यह व्यवहारकारक असत्य हैं। वे मात्र उपचरित-असद्भूतव्यवहारनय से कहे जाते हैं। निश्चय से किसी द्रव्य के साथ कारकपने का सम्बन्ध है ही नहीं।

प्रश्न 21- जहाँ शास्त्रों में व्यवहारकारक और निश्चय -कारक का कथन किया हो, वहाँ क्या जानना चाहिए?

उत्तर - जहाँ व्यवाहारकारक का निरुपण किया हो, उसे असत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान छोड़ना और जहाँ निश्चयकारक का तिरुपण किया हो, उसे सत्यार्थ मानकर उसका श्रद्धान अङ्गीकार करना, क्योंकि श्री समयसार, कलश 173 में कहा है कि व्यवहारकारक में जो अध्यवसाय है, सो समस्त ही छोड़ना— ऐसा जिनदेवों ने कहा है; इसलिए समस्त व्यवहारकारक का श्रद्धान छोड़कर, निश्चयकारक को जानकर अपने ज्ञानघनरूप में प्रवर्तना युक्त है।

प्रश्न 22– निश्चयकारक और व्यवहारकारक के विषय में कुन्दकुन्द भगवान ने श्री मोक्षपाहुड़, गाथा 31 में क्या कहा है ?

उत्तर – जो व्यवहारकारक की श्रद्धा छोड़ता है, वह योगी अपने आत्मकार्य में जागता है तथा जो व्यवहारकारकों से लाभ मानता है, वह अपने आत्मकार्य में सोता है; इसलिए व्यवहारकारक का श्रद्धान छोड़कर, निश्चयकारक का श्रद्धान करना योग्य है।

प्रश्न 23– व्यवहारकारक का श्रद्धान छोड़कर, निश्चय -कारक का श्रद्धान करना क्यों योग्य है ?

उत्तर – व्यवहारनय=निश्चयकारक और व्यवहारकारक को किसी को किसी में मिलाकर निरुपण करता है, सो ऐसे ही श्रद्धान से मिथ्यात्व है; इसलिए उसका त्याग करना तथा निश्चयनय = निश्चयकारक और व्यवहारकारक को यथावत् निरूपण करता है; किसी को किसी में नहीं मिलाता है, सो ऐसे ही श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है; इसलिए उसका श्रद्धान करना।

प्रश्न 24– आप कहते हो — व्यवहारकारक के श्रद्धान से मिथ्यात्व होता है, इसलिए उसका श्रद्धान छोड़ो और निश्चयकारक के श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है, इसलिए उसका श्रद्धान करो, परन्तु जिनमार्ग में दोनों कारकों का ग्रहण करना कहा है, सो कैसे है ?

उत्तर – जिनमार्ग में, जहाँ निश्चयकारक की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे तो 'सत्यार्थ ऐसे ही है' — ऐसा जानना तथा जहाँ व्यवहारकारक की मुख्यता लिये व्याख्यान है, उसे 'ऐसे है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा उपचार किया है' – ऐसा जानना — इस प्रकार जानने का नाम ही निश्चयकारक और व्यवहारकारक का ग्रहण है।

प्रश्न 25- कोई-कोई विद्वान, दोनों कारकों के व्याख्यान को समान सत्यार्थ जानकर 'ऐसे भी है, ऐसे भी हैं' — इस प्रकार कहते हैं - क्या उनका कहना गलत है ?

उत्तर - गलत है, क्योंकि निश्चयकारक-व्यवहारकारक, इन दोनों कारकों के व्याख्यान को समान सत्यार्थ जानकर 'ऐसे भी हैं, ऐसे भी हैं' — इस प्रकार भ्रमरूप प्रवर्तन से तो दोनों कारकों का ग्रहण करना नहीं कहा है।

प्रश्न 26- यदि व्यवहारकारक असत्यार्थ हैं तो उसका उपदेश जिनमार्ग में किसलिए दिया ? एक निश्चयकारक का ही निरूपण करना था।

उत्तर - व्यवहारकारक के बिना, निश्चयकारक का उपदेश अशक्य है; इसलिए व्यवहारकारक का उपदेश है। निश्चयकारक का ज्ञान कराने के लिये व्यवहारकारक द्वारा उपदेश देते हैं। व्यवहारकारक है, व्यवहारकारक का विषय है, जाननेयोग्य है परन्तु अङ्गीकार करनेयोग्य नहीं है।

प्रश्न 27- कार्य के कारक कितने कहे जाते हैं ?

उत्तर - चार कहे जाते हैं — (1) उस समय की पर्याय की योग्यता; (2) अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय; (3) त्रिकाली; (4) निमित्त; इस प्रकार कार्य के कारक चार कहे जाते हैं।

प्रश्न 28- शास्त्रों में कहीं कार्य का कारण उस समय पर्याय की योग्यता को; कहीं अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय को; कहीं त्रिकाली को और कहीं निमित्त को क्यों कहा है ?

उत्तर - (1) जहाँ शास्त्रों में कार्य का कारक **उस समय पर्याय की योग्यता** को कहा हो, वहाँ 'यह ही सच्चा कारक है और अनन्तर

पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कार्य का सच्चा कारक नहीं है' — ऐसा जानना।

(2) जहाँ कहीं कार्य का कारक **अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय** को कहा हो, वहाँ 'भूत-भविष्य की पर्यायों से पृथक् कराने की अपेक्षा कहा है' — ऐसा जानना।

(3) जहाँ कहीं कार्य का कारक **त्रिकाली** को कहा हो, वहाँ 'निमित्तकारक की दृष्टि छुड़ाने के लिए कहा है' — ऐसा जानना।

प्रश्न 29- स्वाश्रितो निश्चयकारक और पराश्रितो व्यवहारकारक की अपेक्षा किस-किस प्रकार हैं ?

उत्तर - (1) कार्य का कारक उस समय पर्याय की योग्यता स्वाश्रित निश्चयकारक कहा हो; उसकी अपेक्षा अनन्तर पूर्वक्षणवर्ती-पर्याय को पराश्रित व्यवहारकारक कहा जाता है।

(2) कार्य का कारक, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय को स्वाश्रित निश्चयकारक कहा हो; उसकी अपेक्षा त्रिकाली को पराश्रित व्यवहारकारक कहा जाता है।

(3) कार्य का कारक त्रिकाली को स्वाश्रित निश्चयकारक कहा हो; उसकी अपेक्षा निमित्त को पराश्रित व्यवहारकारक कहा जाता है।

प्रश्न 30- जिन-जिनवर और जिनवरवृषभों ने चार प्रकार के कारकों के विषय में क्या बतलाया है ?

उत्तर - कार्य का कारक उस समय पर्याय की योग्यता ही है परन्तु जब-जब कार्य होता है, तब बाकी के तीन कारक भी होते हैं क्योंकि 'जिसने पूर्व अवस्था प्राप्त की है - ऐसा द्रव्य भी, जो कि उचित बहिरङ्ग साधनों के सान्निध्य के सद्भाव में अनेक प्रकार की बहुत सी अवस्थाएँ करता है'— ऐसा जानना।

[श्री प्रवचनसार, गाथा 95 की टीका से]

प्रश्न 31- कोई कार्य का कारक, मात्र उस समय पर्याय की योग्यता को ही माने, अन्य कारकों को सर्वथा निषेध करे — तो क्या वह ठीक है?

उत्तर - ठीक नहीं है क्योंकि जब कार्य होता है, तब अन्य तीन कारक भी होते हैं - ऐसा वस्तुस्वभाव है। उसको न मानने के कारण वह झूठा है।

प्रश्न 32- कार्य के इन चार प्रकार के कारकों में क्या रहस्य है?

उत्तर - (1) कोई अकेले उस समय पर्याय की योग्यता कार्य के कारक को माने, किन्तु अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक को; त्रिकालीकारक को और निमित्तकारक को न माने, वह झूठा है।

(2) कोई अकेले अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक को ही माने, किन्तु त्रिकालीकारक, निमित्तकारक और उस समय पर्याय की योग्यता कारक को न माने, वह झूठा है।

(3) कोई मात्र त्रिकालीकारक को ही माने, किन्तु उस समय पर्याय की योग्यता कारक को, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक को और निमित्तकारक को न माने वह झूठा है।

(4) कोई अकेले कार्य का कारक निमित्त को ही माने, किन्तु त्रिकालीकारक, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कारक और उस समय पर्याय की योग्यतारूप कारक को न माने, वह भी झूठा है; क्योंकि जब-जब कार्य होता है, वहाँ चारों प्रकार के कारक एक साथ होते हैं।

प्रश्न 33- छह कारक-द्रव्य हैं, गुण हैं, या पर्याय हैं?

उत्तर - छह कारक, गुण हैं।

प्रश्न 34- यदि छह कारक, गुण हैं तो सामान्य हैं या विशेष?

उत्तर – छह कारक प्रत्येक द्रव्य में पाये जानेवाले सामान्य और अनुजीवी गुण हैं।

प्रश्न 35– छह कारक, गुण हैं, यह जिनवाणी में कहाँ आया है?

उत्तर – श्री समयसार की 47 शक्तियों में आया है।

प्रश्न 36– छह कारकों का ज्ञान, विद्या बढ़ाने के लिए, लोगों को बताने के लिए कि हम विद्वान हैं या और किसी कार्य के लिए है?

उत्तर – (1) जो जीव, छह कारकों का ज्ञान, मान–बड़प्पन के लिए करता है, वह अनन्त संसार का कारण है। (2) छह कारकों के ज्ञान से पर में करूँ–करूँ की कर्ताबुद्धि और भोक्ता–भोग्य की बुद्धि का अभाव होकर सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होकर क्रमशः निर्वाण की ओर गमन हो जाता है। (3) संसार के पाँच कारणों का अभाव हो जाता है। (4) पञ्च परावर्तन का अभाव हो जाता है। (5) चार गति के अभावरूप पञ्चम गति की प्राप्ति होती है। (6) पञ्चम पारिणामिकभाव का महत्त्व आ जाता है। (7) पञ्च परमेष्ठियों में उसकी गिनती होने लगती है।

प्रश्न 37– पर्याय (कार्य) से किसका माप निकालना चाहिए?

उत्तर – पर्याय से सच्चे कारक का माप निकालना चाहिए?

प्रश्न 38– पर्याय से सच्चे कारक का माप क्यों निकालना चाहिए?

उत्तर – कार्य हुआ — इसमें तो सब एक मत हैं परन्तु करनेवाला कौन है? इसमें भूल है। कारक का सही ज्ञान न होने से जीव,

संसार का पात्र बना हुआ है। कारक का सही ज्ञान हो जाए तो संसार का अभाव हो जावे; इसलिए पर्याय से सच्चे कारक का माप निकालना चाहिए।

कर्ताकारक

प्रश्न 39- कर्ता किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो स्वतन्त्रता से (स्वाधीनतापूर्वक) अपने परिणाम को करे, वह कर्ता है।

प्रश्न 40- प्रत्येक द्रव्य किसका कर्ता है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य अपने में स्वतन्त्र व्यापक होने से, अपने ही परिणाम का स्वतन्त्रता से कर्ता है।

प्रश्न 41- प्रत्येक द्रव्य अपने ही परिणाम का कर्ता है; दूसरे का नहीं, यह जिनवाणी में कहाँ-कहाँ आता है ?

उत्तर - (1) अनादि-निधिन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी का परिणमाया परिणमता नाहीं और किसी को परिणमाने का भाव, अनन्त संसार का कारण मिथ्यात्व है। *[श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 52]*

(2) सब पदार्थ अपने-अपने द्रव्य में अन्तर्मग्न रहनेवाले अपने अनन्त धर्मों के चक्र को (समूह को) चुम्बन करते हैं, स्पर्श करते हैं, तथापि वे (सब द्रव्य) परस्पर एक-दूसरे को स्पर्श नहीं करते। *[श्री समयसार, गाथा 3 की टीका से]*

(3) जो कुछ क्रिया है, वह सब द्रव्य से भिन्न नहीं है। इससे विरुद्ध माननेवाला मिथ्यादृष्टिपने के कारण, सर्वज्ञमत से बाहर हैं। *[श्री समयसार, गाथा 85 की टीका से]*

(4) सर्व द्रव्यों की प्रत्येक पर्याय में छह कारक एक साथ वर्तते हैं; इसलिए आत्मा और पुद्‌गल, शुद्धदशा में या अशुद्धदशा में स्वयं छहों कारकरूप परिणमन करते हैं और दूसरे कारकों की (निमित्त कारकों की) अपेक्षा नहीं रखते। *[श्री पंचास्तिकाय, गाथा 62 से]*

(5) निश्चय से पर के साथ आत्मा का कारकपने का सम्बन्ध नहीं है कि जिससे शुद्धात्मस्वभाव की प्राप्ति के लिए सामग्री (वाह्य साधन) खोजने की व्यग्रता से जीव (व्यर्थ ही) परतन्त्र होते हैं।

[श्री प्रवचनसार, गाथा 16 की टीका में]

(6) देखो, श्री समससार गाथा 103, 372, 406।

(7) श्री समयसार, कलश 51, 52, 53, 54 तथा कलश 200।

प्रश्न 42- जो मानते हैं कि हम शरीर-स्त्री-पुत्रादि के कर्ता हैं, उसका क्या फल होगा?

उत्तर - (1) जैसे-सीता को रावण चुराकर ले गया और रावण ने बहुत प्रयत्न किया कि जैसे सीता, राम को प्रेम करती है, वैसा ही प्रेम मुझे करे - उसका फल उसे तीसरे नरक जाना पड़ा; उसी प्रकार जो संसार के पदार्थों को अपने अनुसार परिणमाना चाहता है, उसका फल उसे नरक में जाना पड़ेगा। (2) एक बार मुम्बई में हंगामा हो गया। लोगों ने पुकारा 'मुम्बई हमारा, मुम्बई हमारा' तो सरकार परेशानी में आ गयी। तब बड़े जनरल को छोटे जनरल ने टेलीफोन किया, कि इसका एकमात्र उपाय यह है सुबह समाचारपत्र में दे दो, जो अपने घर से बाहर निकलेगा, उसे गोली मार दी जावेगी। ऐसा ही सुबह समाचारपत्र में आ गया। जब कोई अपने घर से बाहर निकला, उसे तुरन्त गोली मार दी गयी, जो नहीं निकला, वह ठीक रहा; उसी प्रकार जो अपने द्रव्य-गुण-पर्याय से बाहर निकलता है, उसे चारों

गतिरूप गोली मार दी जाती है; इसलिए जो अपनी मर्यादा से बाहर निकलता है, वह दु:खी होता है। जो अपनी मर्यादा में रहता है, वह सम्यग्दर्शनादि को प्राप्ति कर क्रमश: मोक्षरूपी लक्ष्मी का नाथ बन जाता है।

प्रश्न 43- कर्ता की परिभाषा में से 'स्वतन्त्रतापूर्वक' शब्द निकाल दें, तो क्या दोष आवेगा?

उत्तर - 'स्वतन्त्रतापूर्वक' शब्द निकालने से दूसरे को भी कर्तापने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, यह दोष आवेगा। (1) जैसे — रोटी, आटे से बनी और बाई से भी बनने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा। (2) घड़ा, मिट्टी से बने और कुम्हार से भी बने, ऐसा प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा। (3) शब्द, भाषावर्गणा करे और जीव भी करे, ऐसा प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; इसलिए 'स्वतन्त्रतापूर्वक' शब्द नहीं निकाला जा सकता।

प्रश्न 44- कर्ता कितने कहलाते हैं?

उत्तर - चार कहलाते हैं; उस समय पर्याय की योग्यता कर्ता; अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय कर्ता; त्रिकालीकर्ता और निमित्तकर्ता।

प्रश्न 45- इन चारों कर्ता में से कार्य का सच्चा कर्ता कौन है?

उत्तर - वास्तव में 'उस समय पर्याय की योग्या ही' कार्य का सच्चा कर्ता है।

प्रश्न 46- अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, त्रिकालीकर्ता और निमित्त, कार्य के सच्चे कर्ता क्यों नहीं हैं?

उत्तर - (1) अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती; इसलिए अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कार्य का सच्चा कर्ता नहीं है।

(2) त्रिकालीकर्ता तो सदैव एकसा रहता है, यदि त्रिकाली कर्ता, कार्य का सच्चा कर्ता हो तो कार्य त्रिकाल रहना चाहिए, परन्तु कार्य का एक समय का है। विचारो — कार्य एक समय का हो और उसका कर्ता त्रिकाली सदैव रहनेवाला बने - ऐसा नहीं है। (3) कार्य का कर्ता निमित्त तो होने का प्रश्न ही नहीं, क्योंकि कार्य से उसका द्रव्य-क्षेत्र काल-भाव पृथक् है।

प्रश्न 47- जहाँ आगम में कार्य के एक कर्ता की बात हो, वहाँ पात्रजीव क्या जानते हैं ?

उत्तर - वह चारों का ग्रहण कर लेता है। जो चारों ग्रहण नहीं करता है, वह झूठा है। यहाँ 'ग्रहण' का अर्थ ज्ञान है।

प्रश्न 48- कुम्हार ने घड़ा बनाया — इसमें कर्ताकारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़े की प्राप्त हुई तो कर्ताकारक को माना और कुम्हारे, घड़े को प्राप्त हुआ तो कर्ताकारक को नहीं माना।

प्रश्न 49- मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी, इसमें से 'स्वतन्त्रता' शब्द को निकाल दें तो क्या नुकसान होगा ?

उत्तर - मिट्टी से घड़ा बने और कुम्हार से भी घड़ा बनने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; इसलिए स्वतन्त्रता शब्द को नहीं निकाला जा सकता है।

प्रश्न 50- मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी, ऐसे कर्ताकारक को जानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी ?

उत्तर - कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, धर्म, अधर्म, आकाश और कालद्रव्यों से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 51- मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी, तो कर्ताकारक को माना, इसको जानने से क्या लाभ रहा?

उत्तर - जैसे— मिट्टी स्वतन्त्रता से घड़ेरूप परिणमी; उसी प्रकार विश्व के प्रत्येक द्रव्य और गुण में स्वतन्त्रता से परिणमन हो चुका है, हो रहा है और भविष्य में ऐसा ही होता रहेगा— ऐसा उसको ज्ञान हो जाता है; पर में कर्तापने की खोटी बुद्धि समाप्त होकर, ज्ञाताबुद्धि प्रगट हो जाती है। वह केवली के समान ज्ञाता-दृष्टा बन जाता है; मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का ही अन्तर रहता है।

प्रश्न 52- दर्शनमोहनीय के अभाव से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, इसमें कर्ताकारक को कब माना और कब नहीं माना?

उत्तर - आत्मा का श्रद्धागुण स्वतन्त्रता से क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा तो कर्ताकारक को माना और दर्शनमोहनीय के अभाव से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ - ऐसा माननेवाले ने कर्ताकारक को नहीं माना।

प्रश्न 53- श्रद्धागुण स्वतन्त्रता से क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा। इसमें से स्वतन्त्रता शब्द को निकाल दें, तो क्या नुकसान होगा?

उत्तर - श्रद्धागुण से क्षायिकसम्यक्त्व होवे और दर्शनमोहनीय के अभाव में से भी क्षायिकसम्यक्त्व होने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; इसलिए 'स्वतन्त्रता' शब्द नहीं निकाला जा सकता है।

प्रश्न 54- आत्मा का श्रद्धागुण क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा - ऐसे कर्ताकारक को जानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी?

उत्तर - दर्शनमोहनीय के अभाव से; सच्चे देव-गुरु-शास्त्र से; सात तत्त्वों की भेदरूप श्रद्धा से और आत्मा के श्रद्धागुण को छोड़कर, बाकी गुणों से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 55- आत्मा का श्रद्धागुण क्षायिकसम्यक्त्वरूप परिणमा, तो कर्ताकारक को माना - इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - जैसे-श्रद्धागुण में स्वतन्त्रता से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ; उसी प्रकार विश्व के प्रत्येक द्रव्य और गुण में स्वतन्त्रता से परिणमन हो चुका है, हो रहा है और भविष्य में ऐसा ही होता रहेगा तो पर में कर्तापने की बुद्धि समाप्त होकर, ज्ञाताबुद्धि प्रगट होना, यह कर्ता कारक को जानने का लाभ है।

प्रश्न 56- क्षायिकसम्यक्त्व हुआ, इसमें चारों प्रकार के कारकों के नाम बताओ ?

उत्तर - (1) क्षायिकसम्यक्त्व हुआ - उस समय पर्याय की योग्यता, सच्चा कारक; (2) क्षायोपशमिकसम्यक्त्व का अभाव, अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, अभावरूप कारक; (3) श्रद्धागुण, त्रिकालीकारक; (4) दर्शनमोहनीय का अभाव, निमित्तकारक।

कर्मकारक

प्रश्न 57- कर्मकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - कर्ता, जिस परिणाम को प्राप्त करता है, वह परिणाम उसका कर्म है। कर्ता का इष्ट, वह कर्म है।

प्रश्न 58- कर्म के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर - कार्य, अवस्था, पर्याय, परिणाम, परिणति आदि कर्म के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 59- कार्य के कर्ता कितने कहलाते हैं ?

उत्तर - चार कहलाते हैं; (1) उस समय पर्याय की योग्यता;

(2) अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय; (3) त्रिकालीकर्ता; (4) निमित्तकर्ता।

प्रश्न 60- कार्य का सच्चा कर्ता कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता ही प्रत्येक कार्य का सच्चा कर्ता है। अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीयपर्याय; त्रिकाली और निमित्त, कार्य के सच्चे कर्ता नहीं हैं।

प्रश्न 61- अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय; त्रिकाली और निमित्त, कार्य के सच्चे कर्ता क्यों नहीं हैं ?

उत्तर - (1) पर्याय में से पर्याय नहीं आती; इसलिए अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कार्य का सच्चा कर्ता नहीं है। (2) कार्य एक समय का हो, उसका कर्ता अनादि-अनन्त रहनेवाला हो, यह भी नहीं हो सकता है। (3) निमित्त को कर्ता कहने का प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि दोनों का स्व-चतुष्टय भिन्न-भिन्न है।

प्रश्न 62- कार्य का कर्ता कहीं त्रिकाली को और कहीं अनन्तर पूर्वक्षणवर्त्रीपर्याय को क्यों कहा जाता है ?

उत्तर - (1) परद्रव्यों से भिन्न करने के लिए कार्य का कर्ता, त्रिकाली को कहा जाता है। (2) पूर्व का पर्याय का ज्ञान कराने के लिये अनन्तर पूर्णक्षणवर्तीपर्याय को कार्य का कर्ता कहा जाता है। (3) इसलिए कार्य के लिए त्रिकालीकर्ता, भूत-भविष्य की पर्यायों और निमित्त से दृष्टि हटकर, मात्र उस समय पर्याय की योग्यता ही कार्य का सच्चा कर्ता है, यह पता चले तो कल्याण हो।

प्रश्न 63- कर्मकारक को समझने के लिए क्या याद रखना चाहिए ?

उत्तर - (1) वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्म है;

(2) परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही है; अन्य का नहीं; (3) कर्म, कर्ता का बिना होता नहीं; (4) वस्तु की एकरूप स्थिति रहती नहीं; यह चार बोल, कर्मकारक समझने के लिए पर्याप्त हैं।

[श्री समयसार, कलश 211]

प्रश्न 64- कर्मकारक को समझने से क्या लाभ है ?

उत्तर - जो-जो कार्य होता है, वह सब अपनी-अपनी पर्याय की योग्यता से ही होता है। जब कार्य अपनी-अपनी पर्याय की योग्यता से होता है तो मैं उस कार्य को करूँ या कराऊँ, - ऐसी बुद्धि का अभाव होकर, दृष्टि अपने त्रिकाली भगवान पर आना और शान्ति का अनुभव होना, यही कर्मकारक को जानने का लाभ है।

प्रश्न 65- कार्य में 'उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है' - यह शास्त्र में कहाँ आया है ?

उत्तर - 'वास्तव में कोई भी कार्य होने में या बिगड़ने में उसकी योग्यता ही साधक होती है।' *[श्री इष्टोपदेश, गाथा 35 की टीका]*

प्रश्न 66- (1) दूध गिर गया, (2) बच्चा भागते-भागते गिर गया, (3) मर गया, (4) शरीर में बीमारी हुई, (5) रोटी जल गयी, (6) माल चोरी हो गया, (7) चलते-चलते गिर गया, (8) भाषा बोली, (9) हाथ ऊँचा उठाया, (10) पुस्तक उठायी, (11) अक्षर लिखे, (12) मकान बना - इन सब कार्यों में कर्मकारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) दूध गिर गया-क्यों गिरा ? कर्मकारक को नहीं माना और दूध अपनी पर्याय की योग्यता से गिरा, तो कर्मकारक को माना। (2) बच्चा भागते-भागते गिर गया, - क्यों गिरा ? कर्मकारक को नहीं माना और बच्चा अपनी पर्याय की योग्यता से गिरा - तो

कर्मकारक को माना। (3) मर गया – क्यों मरा ? कर्मकारक को नहीं माना; अपनी योग्यता से मर गया – कर्मकारक को माना। (4) शरीर में बीमारी हुयी – क्यों हुई ? कर्मकारक को नहीं माना और बीमारी अपनी पर्याय की योग्यता से हुयी – तो कर्मकारक को माना। (5) रोटी जल गई, क्यों जल गयी ? कर्मकारक को नहीं माना और रोटी अपनी पर्याय की योग्यता से जल गयी, तो कर्मकारक को माना। (6) माल चोरी हो गया – क्यों हुआ ? तो कर्मकारक को नहीं माना और चोरी अपनी पर्याय की योग्यता से हुयी – तो कर्मकारक को माना। (7) चलते-चलते गिर गया – क्यों गिरा ? तो कर्मकारक को नहीं माना और अपनी योग्यता से गिरा – तो कर्मकारक माना। (8) भाषा, जीव से निकली-कर्मकारक को नहीं माना और भाषा अपनी पर्याय की योग्यता से भाषावर्गणा में से निकली – तो कर्मकारक को माना। (9) हाथ ऊँचा जीव ने उठाया तो कर्मकारक को नहीं माना और हाथ अपनी पर्याय की योग्यता से ऊँचा हुआ – तो कर्मकारक को माना। (10) पुस्तक मैंने उठायी तो कर्मकारक को नहीं माना और पुस्तक अपनी पर्याय की योग्यता से उठी – तो कर्मकारक को माना। (11) अक्षर मैंने लिखे – तो कर्मकारक को नहीं माना और अक्षर अपनी पर्याय की योग्यता से लिखे गये – तो कर्मकारक को माना। (12) मकान मैंने बनाया – तो कर्मकारक को नहीं माना और अपनी पर्याय की योग्यता से बना – तो कर्मकारक को माना।

प्रश्न 67- जब प्रत्येक कार्य अपनी उस समय पर्याय की योग्यता से ही होता है तो जीव क्यों पागल होता है ?

उत्तर – कर्मकारक का रहस्य पता न होने से पागल होता है।

प्रश्न 68- कर्मकारक का ज्ञान क्यों कराया जाता है ?

उत्तर – (1) शान्ति प्राप्त कराने के लिये और शान्ति प्राप्त करने

के लिये। (2) वस्तुस्वरूप समझाने के लिये और समझने के लिये। (3) अनादि काल की खोटी मान्यता नष्ट करने के लिये और कराने के लिये कर्मकारक का ज्ञान कराया जाता है।

प्रश्न 69- किस मान्यतावाले ने कर्मकारक को नहीं माना और उसका फल क्या हुआ ?

उत्तर - जैसे :- रोटी बनी, उसमें (1) बाई, चकला, बेलन, कर्ता है, (2) आटा कर्ता है। (3) लोई उसका कर्ता है, आदि - मान्यतावालों ने कर्मकारक को नहीं माना और उसका फल, मिथ्यादर्शनादि की पुष्टि होकर निगोद की प्राप्ति होना है।

प्रश्न 70- कर्मकारक को किसने माना और उसका फल क्या हुआ ?

उत्तर - कार्य 'उस समय पर्याय की योग्यता से ही होता है, होता रहेगा और होता रहा है।' इससे क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि हो गयी और सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रमश: निर्वाण की ओर गमन होना, इसका फल है।

प्रश्न 71- कर्म कितने प्रकार का होता है ?

उत्तर - (1) द्रव्यकर्म, (2) नोकर्म, (3) भावकर्म, (4) कर्म, अर्थात् कार्य, और (5) कर्म नाम का कारक।

प्रश्न 72- इन पाँच प्रकार के कर्मों में से सिद्धभगवान में कौन-कौन सा कर्म है ?

उत्तर - सिद्धभगवान में कर्म अर्थात् कार्य और कर्मकारक - ये दो हैं।

प्रश्न 73- कर्म, अर्थात् कार्य होता है, उसमें कितने कारण कहलाते हैं और सच्चा कारण कौन है ?

उत्तर – चार कहलाते हैं — (1) निमित्तकारण; (2) त्रिकाली-कारण; (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण; (4) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकरण। इन चारों कारणों में से कर्म का सच्चा कारण, उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 74– आस्रवतत्त्वरूप कर्म / कार्य का कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 75– कर्म के कारण आस्रव माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – अजीवतत्त्व और आस्रवतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 76– जीव के आस्रव होना माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – जीव और आस्रवतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 77– आस्रवतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर – आस्रव का कर्ता का उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही है; द्रव्यकर्म और जीव नहीं। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से आस्रवतत्त्वरूप कर्मसम्बन्धी भूल दूर हो जाती है।

प्रश्न 78– बन्धतत्त्व का कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 79– बन्धतत्त्व का कर्ता, द्रव्यकर्म को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – अजीव और बन्धतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 80– जीव से बन्ध होना माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – जीव और बन्धतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 81– बन्धतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर – भावबन्ध 'उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही' है; कर्म और जीव से नहीं है। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से बन्धतत्त्वरूप कर्मसम्बन्धी भूल दूर हो जाती है।

प्रश्न 82– संवरतत्त्व का कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 83– संवरतत्त्व का कर्ता, कोई द्रव्यकर्म के रुकने को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – संवरतत्त्व और अजीवतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 84– शुभभाव से संवर माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – आस्रव, बन्ध और संवरतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 85– देव-गुरु-शास्त्र से सम्यग्दर्शन माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर – जीव, अजीवतत्त्व और संवरतत्त्व को एक माना; कर्म-कारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 86- अणुव्रतादिरूप बाहरी क्रिया से श्रावकपना माने तो क्या दोष आयेगा?

उत्तर - अजीव और संवरतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 87- शुभभावरूप अणुव्रतादि से श्रावकपना माने तो क्या दोष आवेगा?

उत्तर - आस्रव, बन्ध और संवरतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 88- संवरतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे?

उत्तर - कर्मकारक का रहस्य जानने से।

प्रश्न 89- संवरतत्त्व सम्बन्धी भूल, कर्मकारक को मानने से कैसे दूर हो जाती है?

उत्तर - संवरतत्त्व 'उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से' हैं; वह जीव से, आस्रव-बन्ध से नहीं है। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से संवरतत्त्वसम्बन्धी भूल दूर हो जाती है।

प्रश्न 90- भाव निर्जरातत्त्व का सच्चा कर्ता कौन है?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण, भाव निर्जरातत्त्व का सच्चा कर्ता है।

प्रश्न 91- द्रव्यकर्म से भावनिर्जरा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर - अजीव और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आता है।

प्रश्न 92- जीव से निर्जरा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – जीवतत्त्व और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आता है।

प्रश्न 93– पुण्य से निर्जरा माने तो क्या दोष आयेगा?

उत्तर – आस्रवतत्त्व और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 94– भावबन्ध से भावनिर्जरा माने तो क्या दोष आता आयेगा?

उत्तर – बन्ध और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 95– भावसंवर से भावनिर्जरा माने तो क्या दोष आता आयेगा?

उत्तर – संवर, निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 96– रोटी न खाने से निर्जरा माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर – अजीवतत्त्व और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 97– बाहरी तप और शुभभावरूप बारह प्रकार के व्यवहारतप से निर्जरा माने तो क्या दोष आयेगा?

उत्तर – अजीव, आस्रव, बन्ध और निर्जरातत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 98– भाव निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे?

उत्तर – कर्मकारक को मानने से भाव निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल मिटती है।

प्रश्न 99- कर्मकारक को मानने से भाव निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे दूर हुई ?

उत्तर - भाव निर्जरातत्त्व 'उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से' है; वह जीव से, अजीव से, आस्रव से, बन्ध से नहीं है। इस प्रकार कर्मकारक को मानने से निर्जरातत्त्व सम्बन्धी भूल मिट गयी।

प्रश्न 100- भावमोक्ष का कर्ता कौन है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही कर्ता है।

प्रश्न 101- भावमोक्ष का कर्ता, द्रव्यकर्म के अभाव को माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - भावमोक्ष और अजीव को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 102- भावमोक्ष का कर्ता, वज्रवृषभनाराचसंहनन को माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - अजीव और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 103- जीव से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - जीवतत्त्व और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 104- आस्रव से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - आस्रव और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना - यह दोष आयेगा।

प्रश्न 105– पुण्य-बन्ध से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – बन्धतत्त्व और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 106– संवर से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – संवर और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 107– निर्जरा से मोक्ष माने तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – निर्जरा और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 108– चौदहवें गुणस्थान से मोक्ष माने, तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर – आस्रव, संवर, निर्जरा और मोक्षतत्त्व को एक माना; कर्मकारक को नहीं माना – यह दोष आयेगा।

प्रश्न 109– मोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर – कर्मकारक को माने तो मोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल मिटे।

प्रश्न 110– कर्मकारक को मानने से मोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल कैसे मिटे ?

उत्तर – भावमोक्ष का कर्ता, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण है; जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरातत्त्व उसका कर्ता नहीं है। इस प्रकार, कर्मकारक को मानने से भावमोक्षतत्त्व सम्बन्धी भूल दूर हो गयी।

प्रश्न 111– वह हमारी तारीफ करते थे; आज निन्दा क्यों ? इस वाक्य में कर्मकारक को कब नहीं माना और कब माना ?

उत्तर – वह हमारी तारीफ करते थे, आज निन्दा क्यों ? – ऐसी मान्यतावाले ने कर्मकारक को नहीं माना और निन्दा, उस समय पर्याय को योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुयी – तो कर्मकारक को माना। इसी प्रकार अन्य कार्यों पर भी अभ्यास करना चाहिए।

प्रश्न 112– प्रत्येक समय प्रत्येक द्रव्य में कार्य होता ही रहता है, वह कभी रुकता ही नहीं – यह क्या सिद्ध करता है ?

उत्तर – कार्य (कर्म) को सिद्ध करता है और क्रमबद्धपर्याय को सिद्ध करता है।

प्रश्न 113– कर्मकारक को कब माना ?

उत्तर – दृष्टि अपने त्रिकाली भगवान पर आयी तो कर्मकारक को माना।

करणकारक

प्रश्न 114– करणकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर – उस परिणाम के (कार्य का) साधकतम, अर्थात् उत्कृष्टसाधन को करण कहते हैं।

प्रश्न 115– करणकारक में 'साधकतम' क्या बताता है ?

उत्तर – 'साधकतम' यह बताता है कि उत्कृष्टसाधन, कर्ता से बाहर नहीं है।

प्रश्न 116– कार्य का उत्कृष्टसाधन क्या बताता है ?

उत्तर – कार्य का करण, मध्यमसाधन, जघन्यसाधन नहीं है; मात्र कार्य का उत्कृष्टसाधन ही कारण है; अन्य नहीं है।

प्रश्न 117– कार्य के साधन कितने कह जाते हैं ?

उत्तर – चार कहे जाते हैं — उस समय पर्याय की योग्यता

साधन; अनन्तरपूर्व क्षणवर्तीपर्याय साधन; त्रिकालीसाधन, और निमित्तसाधन।

प्रश्न 118- कार्य का सच्चा साधन कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता ही कार्य का उत्कृष्ट-साधन है। अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय साधन, त्रिकालीसाधन और निमित्तसाधन, कार्य के सच्चे साधन नहीं हैं।

प्रश्न 119- अनन्तर पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, त्रिकाली और निमित्त, कार्य के सच्चे साधन क्यों नहीं हैं ?

उत्तर - अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती; इसलिए अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, कार्य का साधन नहीं है; कार्य एक समय का हो, उसका साधन ध्रुव हो - यह भी नहीं बनता है। निमित्त को साधन कहने का प्रश्न ही नहीं है क्योंकि दोनों का स्वचतुष्टय पृथक्-पृथक् है।

प्रश्न 120- केवलज्ञान का उत्कृष्ट साधन कौन है, कौन नहीं है ?

उत्तर - केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय को योग्यता ही है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, त्रिकाली ज्ञानगुण और ज्ञानावरणीय का अभाव, उत्कृष्टसाधन नहीं है।

प्रश्न 121- अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान; आत्मा का ज्ञानगुण और ज्ञानावरणीय का अभाव कैसे साधन कहे जाते हैं ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान, अभावरूप

साधन; आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकालीसाधन और ज्ञाननावरणीय का अभाव, निमित्तसाधन कहे जाते हैं।

प्रश्न 122- क्या केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, वज्रवृषभ-नाराचसंहनन है? इसमें करणकारक को कब माना और कब नहीं।

उत्तर - केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता है, तब तो करणकारक को माना और केवलज्ञान का साधन, वज्रवृषभनाराचसंहनन कहे तो करणकारक को नहीं माना।

प्रश्न 123- केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता केवलज्ञान ही है; अन्य नहीं हैं - तो अन्य साधनों में क्या-क्या आया?

उत्तर - वज्रवृषभनाराचसंहनन; चौथा काल; केवल-ज्ञानावरणीय का क्षय; आत्मा; आत्मा के अनन्त गुण; अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान - आदि अन्य साधनों में आते हैं।

प्रश्न 124- केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता केवलज्ञान ही है - ऐसा जानने से क्या लाभ है?

उत्तर - जैसे, केवलज्ञान का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है; उसी प्रकार विश्व में अनन्त द्रव्य हैं; प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं; प्रत्येक गुण में जो-जो कार्य हो चुका है, हो रहा है, भविष्य में होगा; उन सब का साधन, मात्र उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही हैं। - ऐसा मानते ही चारों गतियों के अभावरूप धर्म की प्राप्ति होना —यह करणकारक को जानने का लाभ है।

प्रश्न 125- क्या रोटी का उत्कृष्टसाधन चकला, बेलन हैं? इसमें करण को कब माना और कब नहीं माना।

उत्तर - रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण रोटी है, तो करणकारक को माना और रोटी का उत्कृष्टसाधन, चकला-बेलन आदि है, तो करणकारक को नहीं माना।

प्रश्न 126- रोटी का उत्कृष्टसाधन उस समय पर्याय की योग्यता है, तब दूसरे साधनों को किस-किस नाम से कहा जाता है?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय लोई को अभावरूप साधन कहा जाता है; आटे को त्रिकालीसाधन कहा जाता है; बाई के राग को, चकला, बेलन, तवा, आग, धर्म, अधर्म-आकाश और कालद्रव्य को निमित्तसाधन कहा जाता है।

प्रश्न 127- रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है - ऐसा मानने से किस-किस साधन से दृष्टि हट जाती है?

उत्तर - बाई का राग, चकला, बेलन, तवा, धर्म, अधर्म, आकाश, कालद्रव्य आदि निमित्तों से; त्रिकाली आटे से; अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय लोई से दृष्टि हट जाती है।

प्रश्न 128- रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है - ऐसा जानने से क्या लाभ है?

उत्तर - जैसे, रोटी का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता रोटी ही है; उसी प्रकार विश्व में जितने भी कार्य हैं, उन सब कार्यों का उत्कृष्टसाधन, उस समय पर्याय की योग्यता ही है — ऐसा जानते-मानते ही चारों गतियों के अभावरूप धर्म की प्राप्ति होना, यह इसको जानने का लाभ है।

प्रश्न 129- करण शब्द कितने अर्थों में प्रयुक्त होता है?

उत्तर – तीन अर्थों में प्रयुक्त होता है — (1) करण=इन्द्रिय; (2)करण=परिणाम; (3) करण = साधन, अर्थात् करणकारक।

सम्प्रदानकारक

प्रश्न 130– सम्प्रदानकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर – कर्म (परिणाम; कार्य) जिसे दिया जाए अथवा जिसके लिये कर्म किया जाए, उसे सम्प्रदान कहते हैं।

प्रश्न 131– 'सम्प्रदान' शब्द का क्या अर्थ है ?

उत्तर – सम्=सम्यक् प्रकार से; प्र=प्रकृष्टरूप से–विशेषरूप से; दान=शुद्धता का दान दिया जावे; अर्थात् सम्यक् प्रकार से विशेष करके जो दान अपने को दिया जाए, वह सम्प्रदान का अर्थ है।

प्रश्न 132– सम्प्रदान का अर्थ स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर – (1) जैसे–लोभ का त्याग, जो शुद्धि प्रगटी, वह सम्प्रदान है। (2) मिथ्यात्व का अभाव, सम्यग्दर्शन प्रगटा, वह सम्प्रदान है। (3) पाँचवें गुणस्थान में जो शुद्धि प्रगटी, वह सम्प्रदान है। (4) छठवें गुणस्थान में जो शुद्धि प्रगटी, वह सम्प्रदान है। इसी प्रकार सर्वत्र जानना।

प्रश्न 133– सम्प्रदानकारक को कब माना ?

उत्तर – अपना दान अपने को देवे, तब सम्प्रदानकारक को माना। जिसका कार्य है, वह उसी को दिया जावे, अथवा उसी के लिए किया जाए तो सम्प्रदानकारक को माना।

प्रश्न 134– घड़ा, पानी पीनेवालों के लिए बना है ? इस वाक्य में सम्प्रदानकारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता के लिए घड़ा बना तो

सम्प्रदानकारक को माना और पानी पीनेवालों के लिए बना तो सम्प्रदानकारक को नहीं माना।

प्रश्न 135- सम्प्रदानकारक को जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - विश्व में जितने भी कार्य होते हैं, वह सब उसकी उस समय पर्याय की योग्यता के लिए ही होते हैं; दूसरों के लिए नहीं होते हैं; - ऐसा माने तो धर्म को प्राप्ति हो।

अपादानकारक

प्रश्न 136- अपादानकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसमें से कर्म (क्रिया) किया जाए, उस ध्रुववस्तु को अपादानकारक कहते हैं।

प्रश्न 137- अपादानकारक क्या बताता है ?

उत्तर - जो उत्पाद हुआ, वह अन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादान के अभाव को और ध्रुव को बताता है।

प्रश्न 138- अपादानकारक में कितने उपादानकारण आते हैं ?

उत्तर - तीनों उपादानकारण आ जाते हैं।

प्रश्न 139- 'केवलज्ञान' हुआ - इसमें तीनों उपादानकारक किस प्रकार आये ?

उत्तर - केवलज्ञान का उत्पाद - उस समय पर्याय की योग्यतारूप क्षणिकउपादानकारण; भावश्रुतज्ञान का व्यय, अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण; आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण; इस प्रकार तीनों उपादानकारण आ जाते हैं।

प्रश्न 140- (1) क्षायिकसम्यक्त्व, (2) क्षयोपशम-

सम्यक्त्व, (3) रोटी बनी, (4) केवलदर्शन, (5) अलमारी बनी; इनमें तीनों उपादानकारण किस प्रकार आते हैं ?

उत्तर - (1) क्षायिकसम्यक्त्व का उत्पाद, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण; (2) क्षयोपशमसम्यक्त्व का व्यय, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण; (3) आत्मा का श्रद्धागुण, त्रिकाली उपादानकारण; इस प्रकार तीनों उपादानकारण आ जाते हैं। इसी प्रकार अन्य चार वाक्यों में लगाना चाहिए।

प्रश्न 141- केवलज्ञानावरणीय के अभाव में से केवलज्ञान हुआ - क्या अपादानकारण को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि केवलज्ञान, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण भावश्रुतज्ञान का अभाव करके, आत्मा के ज्ञानगुण में से आया; केवलज्ञानावरणीयकर्म के अभाव में से नहीं आया - ऐसा समझे तो अपादानकारक को माना।

प्रश्न 142- कोई चतुर ऐसा कहे केवलज्ञानवरणीय के अभाव में से केवलज्ञान आया, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - उसके अपादानकारक को उड़ा दिया। अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण, श्रुतज्ञान के अभाव को और आत्मा के ज्ञानगुण को भी उड़ा दिया।

प्रश्न 143- केवलज्ञान में केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव हुआ - क्या अपादानकारक को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि केवलज्ञानावरणीय का अभाव, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम का अभाव करके कार्माणवर्गणा में से आया; केवलज्ञान में से नहीं आया - ऐसा समझे तो अपादानकारक को माना।

प्रश्न 144- कोई चतुर ऐसा कहे - केवलज्ञान में से ही केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव आया - तो क्या दोष आयेगा ?

उत्तर - उसने अपादानकारक को उड़ा दिया; अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण ज्ञानावरणीय क्षयोपशम के अभाव को और कार्माणवर्गणा को उड़ा दिया।

प्रश्न 145- तीनों उपादानकारणों में कितना समय लगता है ?

उत्तर - तीनों का एक ही समय है।

प्रश्न 146- बाई ने रोटी बनायी - इस वाक्य में अपादान-कारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - रोटी, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई का अभाव करके, त्रिकाली उपादानकारण आटे में से बनी, तो अपादानकारक को माना और बाई से रोटी बनी - तो अपादानकारक को नहीं माना। इसी प्रकार प्रत्येक कार्य पर घटित करना चाहिए।

प्रश्न 147 - बाई ने रोटी बनाई - क्या अपादानकारक को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि रोटी, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई का अभाव करके, ध्रुव आटे में से बनी है; बाई में से नहीं, तब अपादानकारक को माना।

प्रश्न 148- कोई चतुर कहे कि बाई से ही रोटी बनी - तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - उसने अपादानकारक को उड़ा दिया; अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई के अभाव को; और ध्रौव्य आटे को भी उड़ा दिया।

प्रश्न 149- अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का तो अभाव हो जाता है, उसमें से उत्पाद कैसे हो सकता है ?

उत्तर - वास्तव में अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण के अभाव में से उत्पाद नहीं होता है; वह तो उस समय पर्याय की योग्यता में से होता है। यह तो अभावरूप उपादानकरण की अपेक्षा ज्ञान कराया है।

प्रश्न 150- त्रिकाली ध्रुव को अनादि-अनन्त है और कार्य एक समय का है, उसमें से कार्य कैसे हुआ ?

उत्तर - निमित्त, परद्रव्यों से अलग करने की अपेक्षा त्रिकाली उपादान को कार्य का कर्ता कहा है। वास्तव में उत्पाद, उस समय पर्याय की योग्यता से ही होता है।

प्रश्न 151- केवलज्ञानरूप कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ - ऐसा मानने से किस-किस से दृष्टि हट जाती है ?

उत्तर - (1) वज्रवृषभनाराचसंहनन से, (2) चौथे काल से, (3) ज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से, (4) आत्मा से, (5) ज्ञानगुण से, (6) श्रुतज्ञान से दृष्टि हट जाती है।

प्रश्न 152- क्षायिकसम्यक्त्वरूप कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से होता है - ऐसा मानने से किस-किस से दृष्टि हट जाती है ?

उत्तर - (1) देव-गुरु से, (2) दर्शनमोहनीय के उपशमादि से, (3) आत्मा (त्रिकाली उपादान) से, (4) श्रद्धागुण से, (5) क्षयोपशम सम्यक्त्व से दृष्टि हट गयी।

नोट - यहाँ आत्मा (त्रिकाली कारण से) दृष्टि हटने का आशय, कार्य के लिए उस की ओर देखना नहीं रहा - यह है / श्रद्धापर्याय का स्वभाव से अपनत्व हटने का आशय नहीं है।

प्रश्न 153- कार्य उस समय पर्याय की योग्यता से ही कार्य होता है - यह निर्णय कब सच्चा-झूठा है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता से ही कार्य होता है - ऐसा निर्णय होते ही दृष्टि अपने त्रिकाली स्वभाव पर आवे तो निर्णय सच्चा है, अन्यथा झूठा है।

अधिकरणकारक

प्रश्न 154- अधिकरणकारक किसे कहते हैं ?

उत्तर - जिसमें अथवा जिसके आधार से कर्म (कार्य) किया जाए, उसे अधिकरणकारक कहते हैं।

प्रश्न 155- अनादि से अज्ञानी ने कार्य के लिए किसका आधार माना और उसका फल क्या रहा ?

उत्तर - अनादि से अज्ञानी जीव ने कार्य के लिए पर का आधार माना है। उसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद रहा।

प्रश्न 156- धर्म के लिए अज्ञानी ने किस-किस का आधार माना है ?

उत्तर - (1) अपनी आत्मा को छोड़कर, तीर्थङ्करों का, मुनियों का, अत्यन्त भिन्न परपदार्थों का, आधार माना; (2) शरीर-इन्द्रियाँ ठीक रहें तो धर्म हो, उसका आधार माना है; (3) कर्म के क्षय आदि हों तो धर्म हो, उसका आधार माना है; (4) शुभभाव हो तो धर्म हो, उसका आधार माना है; (5) भेदनय के पक्ष का आधार माना है; (6) अभेदनय के पक्ष का आधार माना है; (7) भेदाभेदनय के पक्ष का आधार माना है और उसका फल अनन्त संसार है।

प्रश्न 157- क्या एक वस्तु को दूसरी वस्तु का आधार नहीं है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं है, क्योंकि प्रत्येक वस्तु अपना-अपना कार्य अपने-अपने आधार से करती हैं; पर की अपेक्षा नहीं रखती है।

प्रश्न 158– क्या शरीर को रोटी का आधार है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि शरीर का आधार, आहारवर्गणा है; रोटी और जीव नहीं।

प्रश्न 159– शरीर को रोटी का आधार है, इसमें अधिकरण-कारक को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – शरीर को आहारवर्गणा का आधार है; रोटी का नहीं, तब अधिकरणकारक को माना, और रोटी ही शरीर का आधार है, ऐसा मानें तो उसने अधिकरणकारक को नहीं माना।

प्रश्न 160– क्या मोक्ष का आधार, कर्म का अभाव है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि मोक्ष का आधार, आत्मा है; कर्म का अभाव नहीं है।

प्रश्न 161– मोक्ष का आधार, कर्म का अभाव ही है, ऐसा कहें तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – उसने अधिकरणकारक नहीं माना।

प्रश्न 162– मोक्ष का आधार, कर्म का अभाव कब माना जा सकता है ?

उत्तर – जब द्रव्यकर्म, जीव हो जावे तो मोक्ष का आधार, द्रव्यकर्म का अभाव माना जा सकता है, लेकिन ऐसा हो ही नहीं सकता।

प्रश्न 163– मोक्ष का आधार कौन रहा ?

उत्तर – मोक्ष का आधार, त्रिकाली आत्मा है और वास्तव में मोक्ष का आधार, उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 164- अधिकरणकारक को कब माना कहा जा सकता है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य-गुण-पर्याय का आधार कथञ्चित् निरपेक्ष है - ऐसा माने, तब अधिकरणकारक को माना कहा जा सकता है।

प्रश्न 165- क्या गुरु को शिष्य का आधार है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि गुरु को अपना ही आधार है; शिष्य का नहीं।

प्रश्न 166- क्या गुरु को शिष्य का आधार है - इसमें अधिकरणकारक को कब नहीं माना ?

उत्तर - गुरु को शिष्य का आधार है - ऐसा माने तो अधिकरणकारक को नहीं माना, क्योंकि दोनों का अपना-अपना आधार है; एक को दूसरे नहीं।

प्रश्न 167- गुरु को शिष्य का आधार कब कहा जा सकता है।

उत्तर - गुरु को अपनी आत्मा का आधार है, इसके बदले शिष्य की आत्मा, गुरु की आत्मा बन जाए तो गुरु को शिष्य का आधार कहा जा सकता है लेकिन ऐसा हो सकता नहीं।

प्रश्न 168- इसमें सच्चा आधार कौन रहा ?

उत्तर - गुरु को अपनी आत्मा का आधार है और वास्तव में गुरु को 'उस समय पर्याय की योग्यता का आधार' है। इसी प्रकार सर्वत्र घटित करना चाहिए।

प्रश्न 169- अनादि से लड़की ने किस-किस का आधार माना और उसका क्या फल रहा ?

उत्तर – (1) घर में लड़की उत्पन्न हुई – प्रथम माँ–बाप को आधार माना। (2) फिर पति को आधार माना। (3) पति के बाद लड़के को आधार माना। (4) लड़के ने भी जबाब दे दिया तो रुपये–पैसों का आधार माना। (5) रुपया–पैसा न रहा तो दीवाल को आधार माना। इसका फल चारों गतियों में घूमकर निगोद रहा।

प्रश्न 170– लड़की किसका आधार ले तो शान्ति आवे ?

उत्तर – एकमात्र अपनी आत्मा का आधार माने तो कल्याण हो, फिर परम्परा मोक्ष की प्राप्ति हो।

प्रश्न 171– पर्याय का आधार कौन है ?

उत्तर – वास्तव में 'उस समय की पर्याय की योग्यता ही' पर्याय का आधार है।

प्रश्न 172– जब प्रत्येक द्रव्य की पर्याय का आधार, वह पर्याय ही है; दूसरा नहीं है, तब दृष्टि में मेरा आधार मैं ही हूँ – ऐसा मानने–जानने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर – (1) अनादि काल से पर में अपने आधार की कल्पना का अभाव हो जाता है; (2) 'स्वयंभू' कहलाता है; (3) चारों गतियों का अभाव होकर पंचम गति का मालिक बन जाता है; (4) पञ्च परमेष्ठियों में उसकी गिनती होने लगती है; (5) मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग का अभाव हो जाता है; (6) पञ्च परावर्तन का अभाव हो जाता है; (7) पञ्चम पारिणामिकभाव का महत्व आ जाता है; (8) आठ कर्मों का अभाव हो जाता है; (9) गुणस्थान, मार्गणास्थान, जीवस्थान से दृष्टि हटकर अपने त्रिकाली स्वभाव पर आ जाती है।

आठ कर्मों पर कारक का स्पष्टीकरण

प्रश्न 173- द्रव्यकर्म कितने हैं?

उत्तर - आठ हैं — ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय।

प्रश्न 174- कर्म आठ ही हैं, कम-ज्यादा क्यों नहीं - इसको सिद्ध कीजिए?

उत्तर - कर्म आठ हैं, यह बात शास्त्रों में तो है ही परन्तु कार्य से भी कारण का अनुमान लगाया जाता है, जो इस प्रकार है —

वेदनीय कर्म — (1) एक जीव रोगी है, एक निरोगी है। (2) एक के पास लाखों-करोड़ों रुपया है, एक के पास फूटी कोड़ी भी नहीं, इससे वेदनीयकर्म की सिद्धि होती है।

नामकर्म — (1) एक तो जहाँ जाता है, मान मिलता है; एक जहाँ जाता है, अपमान मिलता है। (2) एक रूपवान है, एक कुरूपवान है। इससे नामकर्म की सिद्धि होती है।

आयुकर्म — (1) एक की सौ वर्ष की उम्र है; एक की पचास वर्ष की उम्र है। (2) कोई गर्भ में मर जाता है, कोई तीन वर्ष में ही चल देता है, इससे आयुकर्म की सिद्धि होती है।

गोत्रकर्म — (1) एक जैन है, एक शूद्र है। (2) एक को ऊँचेपने से देखा जाता है, एक को नीचेपने से देखा जाता है। इसस गोत्रकर्म की सिद्धि होती है। देखो, संयोग चार प्रकार का ही बनता है, यदि और कोई संयोग देखने में आता है तो बताओ। इसलिए चार प्रकार के संयोग के अलावा और बनता ही नहीं; इससे चार अघाति-कर्मों की सिद्धि होती है।

ज्ञानावरणीयकर्म — (1) एक के ज्ञान का उघाड़ ऐसा है कि

एक ही बार में सब बातें याद हो जाता हैं, (2) एक के ज्ञान का उघाड़ ऐसा है कि पचास बार सुनने पर भी याद नहीं होता, इससे ज्ञानावरणीयकर्म की सिद्धि होती है।

दर्शनावरणीयकर्म — (1) जहाँ विशेषज्ञान होता है, वहाँ पर सामान्यदर्शन होता ही है, इससे दर्शनावरणीय कर्म की सिद्धि होती है।

मोहनीयकर्म — (1) एक को विशेषराग दिखायी देता है, एक को कम राग दिखायी देता है। (2) एक मिथ्यात्वी है, एक सम्यक्त्वी है, इससे मोहनीयकर्म की सिद्धि होती है।

अन्तरायकर्म — (1) कोई तीव्र पुरुषार्थ करता है और कोई मन्द पुरुषार्थ करता है, इससे अन्तरायकर्म की सिद्धि होती है।

इस प्रकार घातिकर्म चार हैं, वे सब पापरूप हैं। अघाति में पुण्य-पाप का अन्तर पड़ता है; इस प्रकार तर्क से आठ कर्म की सिद्धि होती है और जिनवाणी में भी आठ कर्म बतलाये हैं।

प्रश्न 175- कर्म की कितनी दशाएँ हैं ?

उत्तर - चार हैं — (1) उदय, (2) क्षय, (3) क्षयोपशम, और (4) उपशम।

प्रश्न 176- आठ कर्मों में से उदय कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - आठों कर्मों में उदय होता है।

प्रश्न 177- आठों कर्मों में से क्षय कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - आठों कर्मों में क्षय होता है।

प्रश्न 178- आठों कर्मों में से क्षयोपशम कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - चार घातियाकर्मों में होता है।

प्रश्न 179- आठ कर्मों में से उपशम कितने कर्मों में होता है ?

उत्तर - एकमात्र मोहनीयकर्म में ही होता है।

प्रश्न 180- आठ कर्मों में उदय आदि कुल कितने भेद हुए ?

उत्तर - (1) उदय के आठ भेद; (2) क्षय के आठ भेद; (3) क्षयोपशम के चार भेद; (4) उपशम का एक भेद; इस प्रकार कुल इक्कीस भेद हुए।

प्रश्न 181- ज्ञानावरणीयकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - तीन होती हैं — उदय, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 182- दर्शनावरणीयकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - तीन होती हैं — उदय, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 183- अन्तरायकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - तीन होती हैं — उदय, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 184- मोहनीयकर्म में कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - चार होती हैं — उदय, उपशम, क्षय, क्षयोपशम।

प्रश्न 185- अघातिकर्मों में से कितनी दशाएँ होती हैं ?

उत्तर - दो होती हैं — उदय और क्षय।

प्रश्न 186- इस प्रकार उदय आदि कितने भेद हुए ?

उत्तर - (1) ज्ञानावरणीय के तीन भेद; (2) दर्शनावरणीय के तीन भेद; (3) अन्तराय के तीन भेद; (4) मोहनीय के चार भेद; (5) आयु के दो भेद; (6) नाम के दो भेद; (7) गोत्र के दो भेद; (8) वेदनीय के दो भेद; इस प्रकार कुल इक्कीस भेद हुए। यह इक्कीस भेद हैं व कार्य है और प्रत्येक कार्य में छह कारक एक साथ वर्तते हैं। इस प्रकार एक सौ छब्बीस भेद हुए।

प्रश्न 187– ज्ञानावरणीयकर्म के उदय पर छह कारक कैसे लगते हैं ?

उत्तर – ज्ञानावरणीयकर्म का उदय, यह कार्य है। कार्य पर से छह प्रश्न उठते हैं। (1) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किसने किया ? कार्मणवर्गणा ने किया। अत: कार्मणवर्गणा, **कर्ता** हुई; (2) कार्मण-वर्गणा ने क्या किया ? ज्ञानावरणीयकर्म का उदय; अत: ज्ञानावरणीय-कर्म का उदय **कर्म** हुआ; (3) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किस साधन के द्वारा हुआ ? कार्मणवर्गणा के साधन द्वारा; अत: कार्मणवर्गणा **करण** हुई; (4) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किस के लिए किया ? कार्मणवर्गणा के लिए किया; अत: कार्मणवर्गणा **सम्प्रदान** हुई। (5) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किस में से किया ? पहली पर्याय का अभाव करके, कार्मणवर्गणा में से किया; अत: कार्मणवर्गणा **अपादान** हुई। (6) ज्ञानावरणीयकर्म का उदय किसके आधार से हुआ ? कार्मणवर्गणा के आधार से हुआ; अत: कार्मणवर्गणा **अधिकरण** हुई।

प्रश्न 188– इन एक सौ छब्बीस भेदों से क्या सिद्धि हुई।

उत्तर – (1) प्रत्येक कार्य की स्वतन्त्रता की सिद्धि हुई, (2) जीव के कारण, द्रव्यकर्म में उदय, क्षय आदि अवस्थाएँ होती हैं और द्रव्यकर्म के कारण, जीव में औपशमिक, क्षायिक, क्षयोपशमिक, औपशमिकभाव होते हैं – ऐसी खोटी मान्यता का अभाव हो गया।

प्रश्न 189– (1) आपने कर्मों की स्वतन्त्रता की सिद्धि की और समझ में भी आया कि कर्म के उदय आदि का कर्ता कार्मणवर्गणा का कार्य है; जीव का नहीं, परन्तु 'गोम्मट्टसार' आदि शास्त्रों में लिखा है कि (1) कर्म, जीव को चक्कर कटाता है। (2) ज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से केवलज्ञान

होता है।(3) क्षायिकसम्यक्त्व, दर्शनमोहनीय के क्षय से होता है; क्या वह झूठ लिखा है।

उत्तर - (1) अरे भाई! वह सब व्यवहारकथन है और व्यवहारकथन का अर्थ 'ऐसा है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा कथन है' - ऐसा जानना चाहिए। (2) जो व्यवहार के कथन को ही सत्यार्थ मानता है, वह जिनवाणी सुनने के अयोग्य है। (3) व्यवहार के कथन को सत्यार्थ मानने से मिथ्यात्व की पुष्टि होती है।

प्रश्न 190- जीव में औदयिकभाव, क्षयोपशमिकभाव, क्षायिकभाव, औपशमिकभाव भी क्या कर्म की अपेक्षा बिना होते हैं ?

उत्तर - हाँ; जीव में भी औदयिकादि भावरूप से परिणमित होने की क्रिया में वास्तव में जीव स्वयं ही छह कारकरूप से वर्तता है; इसलिए उसे अन्य कारकों की अपेक्षा नहीं है।

प्रश्न 191- क्या शरीर, मन, वाणी के कार्य; द्रव्यकर्म; जीव के विकारी; अविकारी भाव, निरपेक्ष होते हैं ?

उत्तर - (1) हाँ, निरपेक्ष होते हैं। श्री पञ्चास्तिकाय, गाथा 62 की टीका में लिखा है कि 'सर्व द्रव्यों की प्रत्येक पर्याय में यह छह कारक एक साथ बर्तते हैं; इसलिए आत्मा और पुद्गल शुद्धदशा में या अशुद्धदशा में स्वयं छहों कारकरूप परिणमन करते हैं और दूसरे कारकों की अपेक्षा नहीं रखते।' जयधवल पुस्तक न० 7 पृष्ठ 177 में लिखा है - '**बज्झ कारण निरपेक्खो वथ्थु परिणामो**' वस्तु का परिणाम बाह्यकारणों से निरपेक्ष होता है। समयसार कलश नं० 51, 52, 53, 54, 61 में भी यही भाव है तथा कलश 200 में '**नास्ति सर्वोऽपि सम्बन्धः**' - ऐसा कहा है। आप्तमीमांसा में कहा है '**धर्मी, धर्म को निरपेक्ष मानों।**'

प्रश्न 192– क्या एक द्रव्य, दूसरे द्रव्य का कुछ भी नहीं कर सकता है?

उत्तर – हाँ, भाई! कुछ भी नहीं कर सकता है। विचारिये! केवलीभगवान को अनन्त चतुष्ट्य की प्राप्ति अरहन्तदशा में हुई है वे उसी समय औदारिकशरीर और चार अघातिकर्मों का अभाव नहीं कर सकते और छद्मस्थ को जरासा ज्ञान का उघाड़ हुआ और वह कहे, मैं पर का कर सकता हूँ – आश्चर्य है!

प्रश्न 193– संसार में कितने प्रकार की दृष्टि हैं?

उत्तर – दो हैं। (1) द्रव्यदृष्टि, और (2) पर्यायदृष्टि।

प्रश्न 194– इन दोनों दृष्टियों का क्या फल है?

उत्तर – द्रव्यदृष्टि का फल, मोक्ष है और पर्यायदृष्टि का फल, निगोद है।

छह कारक : विभिन्न अपेक्षाएँ एवं प्रयोग

प्रश्न 195–'बाई ने रोटी बनाई' — इस पर व्यवहारकारक किस प्रकार घटित होते हैं?

उत्तर – देखो, 'रोटी बनी' यह कार्य है और कार्य से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई? बाई ने; अत: बाई कर्ता हुई। (2) बाई ने क्या किया? रोटी बनाई; अत: रोटी कर्म हुआ। (3) रोटी किस साधन के द्वारा बनी? चकला, बेलन के द्वारा बनी; अत: चकला, बेलन करण हुआ। (4) रोटी किसके लिए बनी? खानेवाले के लिए बनी; अत: खानेवाला सम्प्रदान हुआ। (5) रोटी किसमें से बनी? थाली में से बनी; अत: थाली अपादान हुआ। (6) रोटी किसके आधार से बनी? चूल्हा, तवे के आधार से बनी; अत: चूल्हा, तवा अधिकरण हुआ।

देखो! इसमें बाई, कर्ता; रोटी, कर्म; चकला-बेलन, करण; खानेवाले, सम्प्रदान; थाली, अपादान और चूल्हा-तवा, अधिकरण – इस प्रकार सभी कारक भिन्न-भिन्न हैं। वास्तव में यह व्यवहारकारक असत्य हैं, मात्र उपचरितअसद्‌भूतव्यवहारनय से कहे जा सकते हैं।

प्रश्न 196– व्यवहारकारक को ही सत्य माने तो क्या होगा ?

उत्तर – यह महा अहंकाररूप अज्ञान अन्धकार है, उसका सुलटना दुर्निवार है। उसे कभी धर्म की प्राप्ति नहीं होगी।

प्रश्न 197– 'बाई ने रोटी बनाई' इसमें त्रिकाली की अपेक्षा छह निश्चयकारक लगाओ ?

उत्तर – रोटी बनी — यह कार्य है। कार्य से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई ? आटे ने बनाई; अत: आटा कर्म हुआ; (2) आटे ने क्या किया ? रोटी बनाई; अत: रोटी **कर्म** हुआ; (3) रोटी किस साधन से बनी ? आटे के साधन द्वारा; अत: आटा **करण** हुआ; (4) रोटी किसके लिए बनी ? आटे के लिए; अत: आटा **सम्प्रदान** हुआ; (5) रोटी किस में से बनी ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई का अभाव करके आटे में से बनी; अत: आटा **अपादान** हुआ; (6) रोटी किसके आधार से बनी। आटे के आधार से बनी; अत: आटा **अधिकरण** हुआ।

प्रश्न 198– आपने रोटी का कर्ता आटे को कहा। परन्तु आटा तो कनस्तर में पड़ा है, तब रोटी क्यों नहीं बनती ? तो कहना पड़ेगा – बाई, चकला, बेलन आवे तो रोटी बने – क्या यह बात ठीक नहीं है ?

उत्तर – नहीं भाई! हमने आटे को कर्ता कहा, वह तो मात्र परद्रव्यों से दृष्टि हटाने के लिए कहा। रोटी का कर्ता तो उसकी अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई है।

प्रश्न 199- रोटी का कर्ता अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय लोई क्षणिकउपादानकारण और रोटी कर्म; तो इसको जानने से क्या लाभ रहा ?

उत्तर - (1) भूत-भूविष्य की पर्यायों से दृष्टि हट गयी, (2) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय की अपेक्षा आटा व्यवहारकारण हो गया। (3) अब रोटी के लिये अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण लोई की ओर देखना रहा।

प्रश्न 200- रोटी बनी — अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई की अपेक्षा छह कारक लगाओ ?

उत्तर - रोटी बनी — यह कार्य है; कार्य पर से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण लोई ने; अतः लोई **कर्ता** हुई; (2) अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादनकारण लोई ने क्या किया ? रोटी बनाई; अतः रोटी **कर्म** हुई; (3) रोटी किस साधन द्वारा बनी ? अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई के साधन द्वारा; अतः लोई **करण** हुई। (4) किसके लिए रोटी बनानी ? अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई के लिए; अतः लोई **सम्प्रदान** हुई; (5) रोटी किसमें से बनी ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण लोई में से; अतः लोई **अपादान** हुई; (6) रोटी किसके आधार से बनी ? अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादान-कारण लोई के आधार से; अतः लोई **अधिकरण** हुई।

प्रश्न 201- कोई चतुर प्रश्न करता है कि जैनशास्त्रों में आता है कि पर्याय में से पर्याय नहीं आती है; अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है, तब फिर अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय

क्षणिकउपादानकारण लोई, कर्ता और रोटी, कर्म – यह कैसे हो सकता है ?

उत्तर – अरे भाई ! पर्याय में से पर्याय नहीं आती; अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है, तुम्हारी यह बात ठीक है – परन्तु हमने तो, रोटी बनने से पूर्व, कौनसी पर्याय का अभाव करके होती है, उसकी अपेक्षा अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण लोई को कर्ता कहा है परन्तु वह भी रोटी का सच्चा कर्ता नहीं है।

प्रश्न 202– यदि लोई भी रोटी का सच्चा कर्ता नहीं है तो फिर रोटी का सच्चा कर्ता कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही रोटी का सच्चा कर्ता है और रोटी बनी, वह कर्म है, क्योंकि जैसा कारण होता है, वैसा ही कार्य होता है।

प्रश्न 203– उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण, रोटी-कर्ता और रोटी बनी, यह कर्म; इस पर छह कारक किस प्रकार लगेंगे ?

उत्तर – 'रोटी बनी' यह कर्म / कार्य है, कार्य से छह प्रश्न उठते हैं। (1) रोटी किसने बनाई ? रोटी उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारणा, रोटी ने; अतः रोटी **कर्ता** हुई; (2) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण रोटी ने क्या किया ? रोटी बनाई; अतः रोटी **कर्म** हुई। (3) रोटी किस साधन के द्वारा बनाई ? उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण, रोटी के साधन द्वारा; अतः रोटी **करण** हुई; (4) रोटी किसके लिए बनाई ? उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण रोटी के लिए; अतः रोटी **सम्प्रदान** हुई; (5) रोटी किसमें से बनी ? उस समय

पर्याय की योग्यता **क्षणिकउपादानकारण** रोटी में से बनी; अत: रोटी **अपादान** हुई; (6) रोटी किसके आधार से बनी? उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण, रोटी के आधार से; अत: रोटी **अधिकरण** हुई। इस प्रकार रोटी बनने का वास्तविक करण-कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता ही है।

प्रश्न 204- उस समय पर्याय की योग्यता से ही रोटी बनी; और से नहीं; इसे जानने से क्या लाभ रहा?

उत्तर - संसार में जो-जो कार्य होता है, वह अपनी-अपनी उस समय पर्याय की योग्यता से हुआ है, हो रहा है और होता रहेगा - ऐसा निर्णय होते ही दृष्टि, अपने स्वभाव पर आ जाती है, तब वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता को माना।

प्रश्न 205- केवलज्ञानावरणीयकर्म के अभाव से केवलज्ञान की प्राप्ति हुई, इसमें (1) निमित्त कारण - चारों प्रकार के छह कारक लगाओ; (2) त्रिकाली उपादानकारण; (3) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्ती पर्याय क्षणिकउपादानकारण; (4) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण; (5) बढ़ई ने रथ बनाया; (6) मैंने दही में से घी निकाला; (7) क्या औपशमिक-सम्यक्त्व होने से दर्शनमोहनीय का उपशम हुआ; (8) ज्ञान का क्षयोपशम होने से ज्ञानावरणीयकर्म का क्षयोपशम हुआ; (9) क्या मैंने कपड़े बिछाये; (10) मैं जोर से बोलता हूँ; (11) निमित्त से उपादान में कार्य होता है; (12) क्या मैंने रुपया कमाया; (13) क्या कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया?

उत्तर - सभी प्रश्नों पर प्रश्न क्रमाँक 197 से 204 तक स्वयं अभ्यास करें?

प्रश्न 206- जब 'कार्य उस समय पर्याय की योग्यता' से होता है, तब (1) निमित्त; (2) त्रिकालीउपादान; (3) अनन्तर -पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण और तत्समय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण अपेक्षा, कथन क्यों किया है ?

उत्तर - (1) द्रव्य, उचित बहरङ्ग साधनों की सन्निधि के सद्भाव से अनेक प्रकार की अनेक अवस्थाएँ करता है। (श्री प्रवचनसार, गाथा 95 की टीका) (2) प्रति समय प्रत्येक द्रव्य त्रिस्वभावस्पर्शी (उत्पाद-व्यय और ध्रौव्य-इन तीन स्वभावयुक्त) होता है और कार्य के उत्पादन के समय बहिरङ्ग साधनों (निमित्त) की उपस्थिति होती है। (श्री प्रवचनसार, गाथा 102 की टीका) (3) इससे यह सिद्ध होता है कि उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य और बहिरङ्ग साधनों का समय एक ही होता है - ऐसा स्वाभाविक नियम है; इसलिए कार्य की उत्पत्ति के समय उचित निमित्त होता ही है। (4) जब उत्पाद होता है, वहाँ पूर्व पर्याय का अभाव; त्रिकाली में से होता है और वहाँ अपनी योग्यता से निमित्त भी स्वयं होता ही है - यह ज्ञान कराने की अपेक्षा कथन है।

प्रश्न 207- जब-जब कार्य होता है तब अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके ही त्रिकाली उपादानकारण में से होता है, तब निमित्त होता ही है - ऐसा आप कहना चाहते हैं ?

उत्तर - हाँ, भाई! बात तो ऐसी ही है - परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए - (1) कोई मात्र उत्पाद को माने, व्यय को न माने, त्रिकाली को न माने और निमित्त को न माने तो झूठा है। (2) कोई मात्र व्यय को माने, अन्य को न माने तो झूठा है। (4) मात्र निमित्त को माने, अन्य को न माने तो झूठा है। (5) चारों की सत्ता है, लेकिन अपनी-

अपनी है; एक-दूसरे में से नहीं होते। (6) परन्तु जहाँ उत्पाद होगा, वहाँ व्यय का अभाव और त्रिकाली होगा और निमित्त भी होगा। (7) जहाँ व्यय होगा, वहाँ उत्पाद और त्रिकाली भी होगा। (8) चारों का एक ही समय है। उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य एक ही में होता है; निमित्त पर होता है; क्योंकि कहा है — उपादान निजगुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय। भेदज्ञान परमाण विधि, बिरला बूझे कोय।

प्रश्न 208- क्या विकारीभावों में भी छह कारक घटित होते हैं?

उत्तर - हाँ घटित होते हैं, क्योंकि विकारीभाव भी निरपेक्ष हैं।

प्रश्न 209- विकारीभावों को शास्त्रों में निरपेक्ष क्यों कहा है?

उत्तर - (1) विकारीभाव एक समय की पर्याय हैं, वह अपने अपराध से ही, अपने षट् कारक से स्वयं होता है। (2) विकारीभावों के समय, कर्म का निमित्त होता है, परन्तु विकार, कर्म ने नहीं कराया। विकार, कर्म के उदय की अपेक्षा के बिना होता है। (3) विकारीभाव को अपना एक समय का दोष जानकर, त्रिकाली स्वभाव दोषरहित है, उसका आश्रय लेकर अभाव करे; इसलिए शास्त्रों में विकारीभावों को निरपेक्ष कहा है।

प्रश्न 210- विकारीभावों को शास्त्रों में (1) अशुद्ध-निश्चयनय से जीव का कहा है; (2) व्यवहार से जीव का कहा है; (3) पर्यायार्थिकनय से जीव का कहा है; (4) अशुद्ध पारिणामिकभाव कहा है; (5) औदयिकभाव कहा है - वहाँ ऐसा कहने का तात्पर्य क्या है?

उत्तर - (1) विकारीभाव, जीव की पर्याय में होते हैं; इस अपेक्षा निश्चय कहा और अशुद्ध हैं, इसलिए अशुद्ध कहा; अशुद्ध-

निश्चयनय से विकारीभाव, जीव के कहे, ताकि जीव, शुद्ध निश्चयनय का त्रिकाली स्वभाव का, आश्रय लेकर विकारीभावों का अभाव करे; (2) विकारीभाव, पराश्रित होने से व्यवहार कहा; निश्चय स्वाश्रित होता है; इसलिए निश्चय का आश्रय लेकर विकारीभाव, जो पराश्रित है, उनका अभाव करे; (3) विकारीभाव, पर्याय में हैं; द्रव्य-गुण में नहीं है। द्रव्य-गुण अभेद का आश्रय लेकर, पर्याय में से विकार का अभाव करे; (4) धवला में विकारीभावों को अशुद्धपारिणामिकभाव कहा है, ताकि पात्रजीव शुद्ध पारिणामिकभाव का आश्रय लेकर, विकारीभावों का अभाव करे; (5) विकारीभावों को औदयिकभाव कहा है ताकि पात्र जीव पारिणमिकभाव का आश्रय लेकर, औदयिकभाव का अभाव करे। यह न्यारी-न्यारी अपेक्षा कहने का तात्पर्य है।

प्रश्न 211- 'आत्मा, प्रज्ञा द्वारा-भेदज्ञान करता है'। इस वाक्य में कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - तीन — आत्मा-कर्ता; प्रज्ञा द्वारा-करण; भेदज्ञान करता है-कर्म।

प्रश्न 212- आत्मा ने ज्ञान दिया। इस वाक्य में कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - दो — आत्मा-कर्ता; ज्ञान दिया-कर्म।

प्रश्न 213- आत्मा ने, ज्ञान द्वारा, ज्ञान दिया, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - तीन — आत्मा ने कर्ता; ज्ञान द्वारा-करण; ज्ञान दिया कर्म।

प्रश्न 214- आत्मा ने, ज्ञान द्वारा, ज्ञान के लिए, ज्ञान दिया, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - चार — आत्मा ने, कर्ता; ज्ञान द्वारा-करण; ज्ञान के लिए-सम्प्रदान; ज्ञान दिया-कर्म।

प्रश्न 215- 'अरहन्तभगवान ने केवलज्ञान प्रगट किया।' - इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - अरहन्तभगवान-कर्ता; केवलज्ञान-कर्म।

प्रश्न 216- आत्मा ने, ज्ञान द्वारा, ज्ञान के लिए, ज्ञान में से ज्ञान दिया, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - पाँच — आत्मा-कर्ता; ज्ञान द्वारा-करण; ज्ञान के लिए-सम्प्रदान; ज्ञान में से-अपादान; ज्ञान दिया कर्म।

प्रश्न 217- आत्मा में से, शुद्धता आती है, इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - दो — आत्मा में से अपदान; शुद्धता-कर्म।

प्रश्न 218- निश्चयरत्नत्रय का कारण, शुद्ध आत्मा है - इसमें कितने - कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - निश्चयरत्नत्रय-कर्म; कारण-करण; शुद्ध आत्मा-कर्ता।

प्रश्न 219- मैं, अपने हित के लिए, अभ्यास करता हूँ - इसमें कितने कारक सिद्ध होते हैं ?

उत्तर - तीन — मैं कर्ता; अपने हित के लिए-सम्प्रदान; अभ्यास करता हूँ-कर्म।

प्रश्न 220- ऊँचे निमित्तों द्वारा, जीव ऊँचा चढ़ता है, इसमें कितने कारकों के सम्बन्ध में भूल है ?

उत्तर - करण, कर्ता, कर्म - तीन कारकों के सम्बन्ध में भूल है।

प्रश्न 221- महापुरुष अपने में से दूसरों को देते हैं, इसमें कितने कारकों की भूल सिद्ध होती ?

उत्तर - कर्ता, अपादान, कर्म, तीन कारकों की भूल सिद्ध होती है।

प्रश्न 222- छह कारकों को स्वतन्त्रता से क्या सिद्ध होता है ?

उत्तर - जीव अनन्त, पुद्‌गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं; प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं; प्रत्येक गुण में एक ही समय में एक पर्याय का व्यय, दूसरी का उत्पाद और गुण, ध्रौव्य रहता है। - ऐसा प्रत्येक द्रव्य के, गुण में हो चुका है, हो रहा है और भविष्य में होता रहेगा - यह वस्तुस्वरूप सिद्ध होता है।

प्रश्न 223- उक्त वस्तुस्वरूप जाननेवालों को क्या-क्या लाभ होता है ?

उत्तर - (1) केवली के समान ज्ञाता-दृष्टाबुद्धि प्रगट हो जाती है। (2) प्रत्येक वस्तु कैसी है और क्या करती है - ऐसा सच्चा ज्ञान हो जाता है। (3) अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है - इस मन्त्र का रहस्य, अपना अनुभव हुए बिना समझ में नहीं आ सकता है; ज्ञानी इस मन्त्र का रहस्य जानते हैं और सदैव सुखी रहते हैं। (4) अज्ञानी, अनादि से व्यवहार षट्कारक के अवलम्बन में पागल था, वह मिटकर शुद्धात्मानुभूति प्रगट हो जाती है। (5) ज्ञानी जानता है कि मेरा आत्मा अनादि-अनन्त किसी में गयी नहीं, मिला नहीं है; उसी प्रकार प्रत्येक द्रव्य, कोई किसी में गया नहीं, कभी जावेगा नहीं। (6) यह वस्तुस्वरूप, अर्थात् सुख होने का मन्त्र सारे आगम का सार है, यह वीतरागविज्ञानता और भेदज्ञान है।

जय महावीर-जय महावीर!

2

कारण-कार्य रहस्य

उपादान-उपादेय

प्रश्न 1 - कार्य किस प्रकार होता है?

उत्तर - कारणानुविधायित्वादेव कार्याणि।

(श्री समयसार, गाथा 130-131 टीका)

'**कारणानुविधायीनि कार्याणि**' अर्थात् कारण का अनुसरण करके ही कार्य होते हैं। कार्य को कर्म, अवस्था, पर्याय, हालत, दशा, परिणाम और परिणमित भी कहते हैं।

(श्री समयसार, गाथा 68 टीका)

(यहाँ कारण को उपादानकारण समझना, क्योंकि उपादानकारण ही सच्चा कारण हैं।)

प्रश्न 2 - कारण किसे कहते हैं?

उत्तर - कार्य की उत्पादक सामग्री को कारण कहते हैं।

प्रश्न 3 - उत्पादक सामग्री के कितने भेद हैं?

उत्तर - दो भेद हैं — उपादान और निमित्त।

प्रश्न 4 - उपादान के सामने क्या है?

उत्तर - उपादान के सामने, निमित्त है।

प्रश्न 5 - निज शक्ति के सामने क्या है?

उत्तर - निज शक्ति के सामने, परयोग है।

प्रश्न 6 - निश्चय के सामने क्या है ?

उत्तर - निश्चय के सामने, व्यवहार है।

प्रश्न 7 - उपादानकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो पदार्थ कार्यरूप परिणमित हो, उसे उपादानकारण कहते हैं।

प्रश्न 8- उपादानकारण कितने प्रकार के हैं ?

उत्तर - तीन प्रकार के हैं। (1) त्रिकाली उपादानकारण, (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण, (3) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण।

प्रश्न 9- त्रिकाली उपादानकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो द्रव्य स्वयं कार्यरूप परिणमित हो, उसे त्रिकाली उपादानकारण कहते हैं। जैसे, घड़े की उत्पत्ति में मिट्टी, उसका त्रिकाली उपादानकारण है।

प्रश्न 10 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - अनादि काल से द्रव्य में जो पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है, उसमें अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण और अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय, कार्य है। जैसे, मिट्टी का घड़ा होने में, मिट्टी का पिण्ड वह घड़े की अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण और घड़ारूपकार्य, वह पिण्ड की अनन्तरउत्तरक्षण-वर्तीपर्याय है। अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय का व्यय, वह क्षणिक-उपादानकारण कहा जाता है। (यह पर्यायार्थिकनय से है।)

प्रश्न 11 - (1) 'अनन्तर पूर्व' शब्द क्या बताता है, (2) और 'अनन्तर' शब्द न लगाये तो नुकसान है ?

उत्तर - (1) जो कार्य हुआ, उससे तत्काल पहिले की पर्याय को बताता है। जैसे दस नम्बर पर घड़ा बना तो नौ नम्बर की पर्याय को बताता है। (2) और यदि 'अनन्तर' शब्द न लगाया जाये तो जो कार्य हुआ- उससे पहिले की सब पर्यायों का ग्रहण हो जायेगा, जो ठीक नहीं है।

प्रश्न 12- उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण किसे कहते हैं?

उत्तर - जो कार्य हुआ — वह उस समय की पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण और वही पर्याय, कार्य है। यही सच्चा कारण है।

प्रश्न 13- योग्यता किसे कहते हैं?

उत्तर - योग्यतैव विषयप्रतिनियमकारणामिति

अर्थात्, योग्यता ही विषय का प्रतिनियामित कारण है। ***(न्याय दीपिका, पृष्ठ 27)*** *[* यह कथन, ज्ञान की योग्यता (सामर्थ्य) को लेकर है, परन्तु योग्यता का कारणपना सर्व में सर्वत्र समान है। *]*

प्रश्न 14 - उपादान का शाब्दिक अर्थ क्या है?

उत्तर - उप=समीप। आ=मर्यादापूर्वक। दान=दान देना। द्रव्य के समीप में से कौन-सी, जैसी पर्याय की योग्यता है, उस पर्याय को प्राप्त होना। यह उपादान का शाब्दिक अर्थ है।

प्रश्न 15 - इन तीनों उपादानकारणों में से कार्य का सच्चा कौन है और कौन नहीं है?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही वास्तव में कार्य का सच्चा कारण है। त्रिकाली उपादानकारण; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण और निमित्तकारण, सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 16 – त्रिकाली उपादानकारण, कार्य का सच्चा कारण क्यों नहीं है ?

उत्तर – कार्य एक समय का है और यदि कार्य का कारण अनादि-अनन्त त्रिकाली हो तो कार्य भी अनादि-अनन्त होना चाहिए; इसलिए कार्य का सच्चा कारण उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही है; त्रिकाली उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 17 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण कार्य का सच्चा कारण क्यों नहीं है ?

उत्तर – कार्य स्वयं एक समय का सत् है, वह अनन्तरपूर्वपर्याय में से आवे, ऐसा नहीं है क्योंकि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती और पर्याय में से पर्याय नहीं आती; इसलिए कार्य का सच्चा कारण, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही है; अनन्तपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण, सच्चा कारण नहीं है। याद रहे – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण को कार्य का, अभावरूप कारण कहा जाता है।

प्रश्न 18- कार्य को उपादानकारण की अपेक्षा क्या कहते हैं ?

उत्तर – उपादेय कहते हैं।

प्रश्न 19- उपादान-उपादेयसम्बन्ध किसमें होता है ?

उत्तर – उपादान-उपादेयसम्बन्ध एक ही पदार्थ में लागू होता है।

प्रश्न 20 – 'उपादेय' शब्द कहाँ-कहाँ प्रयोग होता है ?

उत्तर – (1) उपादानकारण की अपेक्षा कार्य को उपादेय कहते हैं। (2) त्रिकाली स्वभाव जो अनादि-अनन्त है, उसे आश्रय करनेयोग्य उपादेय कहते हैं। (3) मोक्षमार्ग को एकदेश प्रगट

करनेयोग्य उपादेय कहते हैं। (4) मोक्ष को पूर्ण प्रगट करनेयोग्य उपादेय कहते हैं।

यहाँ उपादान-उपादेय प्रकरण में, जो कार्य होता है, उसे उपादेय कहना है। इसलिए यहाँ पर कार्य को उपादेय कहेंगे। याद रखना— व्यवहारनय को उपादेय कहा, वहाँ उपादेय का अर्थ 'जानना' समझना।

'कुम्हार ने चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि से घड़ा बनाया।' इस वाक्य में 'घड़ा' कार्य पर उपादान-उपादेय का 25 प्रश्नोत्तरों द्वारा स्पष्टीकरण।

प्रश्न 21- कुम्हार,चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और घड़ा, उपादेय। क्या यह उपादान-उपादेय का ज्ञान ठीक है?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ पर मिट्टी त्रिकाली उपादानकारण और घड़ा, उपादेय है।

प्रश्न 22 - यदि कोई चतुर-कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और घड़ा, उपादेय — ऐसा ही माने तो क्या दोष आता है?

उत्तर - कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि नष्ट होकर मिट्टी बन जाए तो ऐसा माना जा सकता है कि कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और घड़ा, उपादेय; किन्तु ऐसा नहीं हो सकता क्योंकि उपादन-उपादेय, तत्स्वरुप में ही, अर्थात् अभिन्न सत्तावान पदार्थों में ही होता है; जिनकी सत्ता-सत्त्व भिन्न-भिन्न है, ऐसे दो पदार्थों में नहीं होता है।

प्रश्न 23 - जो कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों को ही घड़े का (कार्य का) सच्चा कारण मानते

हैं, उन्हें जिनवाणी में किन-किन नामों से सम्बोधन किया है।

उत्तर - (1) जो निमित्तकारणों से ही कार्य की उत्पत्ति मानते हैं, उन्हें श्री समयसार, कलश 55 मे कहा है कि 'उनका सुलटना दुर्निवार है।' (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 55 में कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (3) श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6 में कहा है कि 'तस्य देशना नास्ति; अर्थात् वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है।' (4) श्री आत्मावलोकन में कहा है कि 'यह उसका हरामजादीपना है।'

प्रश्न 24 - मिट्टी, त्रिकाली उपादानकारण और घड़ा, उपादेय इसे समझने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर - (1) कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों से घड़ा बना— ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है। (2) आहारवर्गणारूप स्कन्ध मिट्टी को छोड़कर अन्य वर्गणाओं से दृष्टि हट जाती है। (3) अब यहाँ पर घड़ा बनने के लिए मात्र त्रिकाली उपादानकारण मिट्टी की तरफ देखना रहा - इतना लाभ हुआ।

प्रश्न 25- कोई चतुर प्रश्न करता है कि यदि कुम्हार, चाक आदि से घड़ा नहीं बनता, मिट्टी से बनता है तो मिट्टी तो पड़ी है, घड़ा क्यों नहीं बनता? अतः मिट्टी, उपादानकारण और घड़ा, उपादेय - यह आपकी बात सिद्ध नहीं होती है।

उत्तर - अरे भाई — हमने मिट्टी को घड़े का उपादानकारण कहा है, वह तो कुम्हार, चाक, कीली डण्डा, हाथ आदि निमित्त-कारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से कहा है। वास्तव में मिट्टी भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 26 – यदि मिट्टी भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है, तो घड़े का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – मिट्टी में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है; मानों दस नम्बर पर घड़ा बना, तो उसमें अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती नो (9) नम्बर की पर्यायरूप पिण्ड क्षाणिकउपादानकारण, घड़े का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 27 – मिट्टी में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह क्यों चला आ रहा है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य-गुण, अनादि-अनन्त ध्रौव्य रहता हुआ, एक पर्याय का व्यय और एक पर्याय का उत्पाद एक ही समय में स्वयं स्वतः अपने परिणमनस्वभाव के कारण करता रहा है, करता है और भविष्य में करता रहेगा – ऐसा वस्तुस्वरूप है। इसी कारण अनादि काल से मिट्टी में पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है।

प्रश्न 28 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादान -कारण और घड़ा, उपादेय -इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर – (1) इसके अतिरिक्त भूत-भविष्यत् की पर्यायों से दृष्टि हट गयी। (2) मिट्टी, त्रिकाली उपादानकारण था, वह भी व्यवहार-कारण हो गया। (3) अब यहाँ पर घड़ा बनने के लिए मात्र अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण पिण्ड की तरफ देखना रहा।

प्रश्न 29 – कोई चतुर फिर प्रश्न करता है कि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है – ऐसा जिनवाणी में कहा है, फिर यह मानना कि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण पिण्ड और घड़ा, उपादेय है – यह बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर - अरे भाई! अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है - यह जिनवाणी की बात बिल्कुल ठीक है, परन्तु हमने तो कार्य से पहले कौनसी पर्याय होती है - उसकी अपेक्षा अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड को, घड़े का क्षणिकउपादानकारण कहा है। वस्तुतः अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड भी घड़े का सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 30 - यदि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है, तो कैसा कारण है और कैसा कारण नहीं है।

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, घड़े का अभावरूप कारण है, वह कालसूचक है परन्तु कार्य का जनक नहीं है।

प्रश्न 31 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण पिण्ड भी घड़े का सच्चा उपादानकारण नहीं है - तो वास्तव में घड़े का सच्चा उपादानकारण कौन है।

उत्तर - वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही घड़े का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 32 - वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण ही घड़े का सच्चा उपादानकारण है - ऐसा जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण पिण्ड की तरफ घड़े के लिए देखना नहीं रहा। (2) अब एकमात्र घड़े के लिए उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण की तरफ ही देखना रहा - यह लाभ हुआ।

प्रश्न 33 - (1) मिट्टी, त्रिकाली उपादानकारण और घड़ा,

उपादेय (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण और घड़ा, उपादेय। (3) उस समय पर्याय की योग्यता घड़ा, क्षणिकउपादानकारण और घड़ा, उपादेय – ऐसा शास्त्रों में बताया परन्तु इतना लम्बा-कथन करने से क्या लाभ था? सीधे कह देते कि कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है।

उत्तर – (1) निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से त्रिकाली उपादानकारण मिट्टी को बताना आवश्यक था। (2) भूत और भविष्यत् पर्यायों से पृथक् करने की अपेक्षा से और अभावरूप कारण का ज्ञान कराने के लिए अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण पिण्ड को बताना आवश्यक था। (3) अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण से पृथक् करने की अपेक्षा से और कार्य के सच्चे कारण ज्ञान कराने के लिए, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; इसलिए तीनों कारणों का सच्चा ज्ञान कराने के लिए शास्त्रों में इतना लम्बा कथन करके समझाया है।

प्रश्न 34 – घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से बना है; इसे जानने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर – जैसे, घड़ा उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बना है; वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे – ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 35 – विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय

पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे - ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान होते ही क्या अपूर्व कार्य देखने में आता है ?

उत्तर - (1) अनादि काल की पर में करूँ-करूँ की मिथ्यामान्यता का अभाव होना; (2) दृष्टि अपने ज्ञायकस्वभाव पर आना; (3) सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से शुद्धि में वृद्धि होकर, मोक्ष लक्ष्मी का नाथ होना; (4) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (5) द्रव्य क्षेत्र-काल-भव-भावरूप पंच परावर्तन का अभाव होकर, पंच परमेष्ठियों में गिनती होना - ये लाभ होते हैं।

प्रश्न 36 - विश्व में प्रत्येक कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है, तब कौन-कौन सी चार बातें एक साथ, एक ही समय में नियम से होती हैं।

उत्तर - (1) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण (उत्पाद)

(2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण (व्यय)

(3) त्रिकाली उपादानकारण (ध्रौव्य), और

(4) निमित्तकारण।

ये चार बातें प्रत्येक कार्य में एक ही साथ एक ही काल में नियम से होती हैं। *(श्री प्रवचनसार, गाथा 95)*

प्रश्न 37 - क्या उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से ही उत्पन्न कार्य, निरपेक्ष है।

उत्तर - हाँ, कार्य स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखता है; इसलिए निरपेक्ष है, और अपनी अपेक्षा रखता है; इसलिए सापेक्ष है। पात्र भव्य जीवों को प्रथम, निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए; फिर जो कार्य

हुआ, उसका अभावरूप कारण कौन है, त्रिकालीकारण कौन है और निमित्तकारण कौन है ? इन बातों का ज्ञान करना चाहिए, क्योंकि कार्य के समय चारों बातें नियम से होती हैं।

प्रश्न 38 – घड़ा (कार्य) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है – ऐसा मानने से किस-किस कारण पर दृष्टि नहीं जाती है ?

उत्तर – (1) कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारण; (2) मिट्टी; (3) अनन्तरपूर्णक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण आदि पर दृष्टि नहीं जाती है।

प्रश्न 39 – 'कुम्हार, कारण और घड़ा, कार्य' – कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं ?

उत्तर – पुद्गल आहारवर्गणा के स्कन्ध मिट्टी में से अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से घड़ा बना है; कुम्हार से नहीं बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को माना और कुम्हार से घड़ा बना है – ऐसी मान्यतावाले ने **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को नहीं माना।

प्रश्न 40– मिट्टी, कारण और घड़ा, कार्य – कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं ?

उत्तर – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से घड़ा (कार्य) हुआ है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को माना; और मिट्टी से घड़ा बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को नहीं माना।

प्रश्न 41 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिक-उपादानकारण और घड़ा, कार्य - कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं ?

उत्तर - घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय पिण्ड, क्षणिकउपादानकारण से बना है तो **कारणानुविधायीनि कार्याणि** को नहीं माना।

नोट : *जिस प्रकार यहाँ मिट्टी को उपादान और घड़े को उपादेय और कुम्हार, चाक, कीली, डण्डा आदि को निमित्त पर उपादान-उपादेय के प्रश्नोत्तर लगाये गये हैं; इसी प्रकार (1) कुम्हार (2) चाक (3) कीली, डण्डा उपादान एवं इनकी अपनी-अपनी क्रिया उपादेय तथा मिट्टी / घड़ा निमित्त - इस प्रकार प्रत्येक पर अलग-अलग प्रश्नोत्तर लगाये जा सकते हैं।*

कुम्हार ने चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि से घड़ा बनाया। इस वाक्य में से 'अज्ञानी कुम्हार' के 'राग' पर उपादान-उपादेय के 25 प्रश्नोत्तरों के द्वारा स्पष्टीकरण।

प्रश्न 63 - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और राग, उपादेय - क्या यह उपादान-उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय (कार्य) है।

प्रश्न 64 - यदि कोई चतुर घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपदानकारण और राग, उपादेय - ऐसा ही माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि नष्ट होकर, चारित्रगुण बन जावे तो ऐसा माना जा सकता है कि घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि उपादानकारण और राग, उपादेय किन्तु ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि उपादान-उपादेय, तत्स्वरूप में ही (अभिन्नसत्तावान पदार्थों में ही) होता है। जिनकी सत्ता-सत्व भिन्न-भिन्न है - ऐसे दो पदार्थों में उपादान-उपादेय नहीं होता है।

प्रश्न 65 - जो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्त-कारणों को ही राग का सच्चा कारण मानते हैं, उन्हें जिनवाणी में किन-किन नामों से सम्बोधन किया है?

उत्तर - (1) जो निमित्तकारणों से ही कार्य की उत्पत्ति मानते हैं, उन्हें श्री समयसार, कलश 55 में कहा है कि 'उनका सुलटना दुर्निवार है और यह उनका अज्ञान-मोह अन्धकार।' (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 55 में कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (3) श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6 में कहा है कि 'तस्य देशना नास्ति, अर्थात् वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है।' (4) श्री आत्मवलोकन में कहा है कि 'यह उसका हरामजादीपना है।'

प्रश्न 66 - चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय। इसे समझने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर - (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों से राग हुआ - ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है; (2) आत्मा में अनन्त गुण हैं; उनमें से चारित्रगुण को अतिरिक्त दूसरे गुणों से दृष्टि हट जाती है; (3) राग के लिए, मात्र त्रिकाली उपादानकारण चारित्रगुण की तरफ देखना रहा - इतना लाभ हुआ।

प्रश्न 67 - कोई चतुर प्रश्न करता है कि यदि चारित्रगुण,

राग का कारण हो तो सिद्धों को भी राग होना चाहिए किन्तु ऐसा तो होता नहीं है; अतः घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारण हो तो राग हो और आप कहते हो, रागरूप कार्य का निमित्तकारणों से कोई सम्बन्ध नहीं है; इसलिए चारित्रगुण, उपादानकारण और राग, उपादेय -यह बात मिथ्या होती है।

उत्तर - अरे भाई! हमने चारित्रगुण को राग का उपादानकारण कहा है, वह तो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से कहा है; वास्तव में चारित्रगुण भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 68 - यदि चारित्रगुण भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो राग का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - चारित्रगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है; मानों दस नम्बर पर्याय में राग हुआ तो उसमें अनन्तरपूर्व -क्षणवर्तीपर्याय, नौ नम्बर, क्षणिकउपादानकारण, राग का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 69 - चारित्रगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह क्यों चला आ रहा है ?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य व गुण अनादि-अनन्त ध्रौव्य रहता हुआ, एक पर्याय का व्यय, एक पर्याय का उत्पाद एक ही समय में स्वयं स्वत: अपने परिणमनस्वभाव के कारण करता रहा है, कर रहा है और भविष्य में करना रहेगा— ऐसा वस्तुस्वरूप है। इसी कारण अनादि काल से चारित्रगुण में पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है।

प्रश्न 70 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और राग, उपादेय - इसको मानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर – (1) भूत–भविष्यत् की पर्यायों से दृष्टि हट गयी; (2) चारित्रगुण जो त्रिकाली उपादानकारण था, वह भी अब व्यवहारकारण हो गया; (3) अब राग के लिए, मात्र अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण की तरफ देखना रहा – यह लाभ हुआ।

प्रश्न 71– कोई चतुर फिर प्रश्न करता है कि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है – ऐसा जिनवाणी में कहा है, फिर यह मानना कि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण और राग, उपादेय – यह आपकी बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर – अरे भाई! अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है, यह जिनवाणी को बात बिल्कुल ठीक है – परन्तु हमने तो कार्य से पहिले कौनसी पर्याय होती है – उसकी अपेक्षा अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय को राग का उपादानकारण कहा है, परन्तु अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 72 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो कैसा कारण है और कैसा कारण नहीं है ?

उत्तर – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, राग का अभावरूप कारण और कालसूचक है, किन्तु कार्य का जनक नहीं है।

प्रश्न 73 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो वास्तव में राग का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही राग का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 74 - वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण ही राग का सच्चा उपादानकारण है - ऐसा मानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती पर्याय, क्षणिकउपादानकारण की तरफ भी देखना नहीं रहा; (2) राग के लिए एक मात्र उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण की तरफ ही देखना रहा, यह लाभ हुआ।

प्रश्न 75 - (1) चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण और राग, उपादेय; (3) उस समय पर्याय की योग्यता राग, क्षणिक -उपादानकारण और राग, उपादेय - ऐसा शास्त्रों में बताया है; परन्तु इतना लम्बा कथन करने से क्या लाभ था ? सीधे कह देते कि कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है ?

उत्तर - (1) निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण को बताना आवश्यक था; (2) भूत-भविष्यत् की पर्यायों से पृथक् करने की अपेक्षा से और अभावरूप कारण का ज्ञान कराने के लिए, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; (3) अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण से पृथक् करने की अपेक्षा से और कार्य के सच्चे कारण का ज्ञान कराने के लिए उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; इसलिए शास्त्रों में इतना लम्बा कथन करके समझाया है।

प्रश्न 76 - राग, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है, इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - जैसे - राग, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है; वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ही हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे - ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 77 - विश्व में सभी कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही हो चुके हैं, हो रहे हैं और होते रहेंगे -ऐसा केवली के समान सच्चाज्ञान होते ही क्या-क्या अपूर्व कार्य देखने में आता है ?

उत्तर - (1) अनादि काल की पर में करूँ-करूँ की मिथ्या बुद्धि का अभाव; (2) दृष्टि अपने ज्ञायकस्वभाव पर आना; (3) सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से शुद्धि में वृद्धि करके, मोक्ष लक्ष्मी का नाथ होना; (4) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (5) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भावरूप पञ्च परावर्तन का अभाव होकर, पंच परमेष्ठियों में उनकी गिनती होना - ये ये अपूर्व कार्य देखने में आते हैं।

प्रश्न 78 - विश्व में प्रत्येक कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है, तब कौन-कौन सी चार बातें एक साथ, एक ही समय में नियम से होती हैं ?

उत्तर - (1) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान-कारण (उत्पाद); (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय उपादानकारण (व्यय); (3) त्रिकाली उपादानकरण (ध्रौव्य); और (4) निमित्त-कारण - ये चार बातें प्रत्येक कार्य में एक ही साथ, एक ही काल में नियम से होती हैं। *[श्री प्रवचनसार, गाथा 95]*

प्रश्न 79 – उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण से ही कार्य की उत्पत्ति होती है – क्या यह निरपेक्ष है ?

उत्तर – हाँ; कार्य स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखता है; इसलिए निरपेक्ष है और अपनी अपेक्षा रखता है; इसलिए सापेक्ष है। पात्र भव्य जीवों को प्रथम निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए, फिर जो कार्य हुआ—उसका अभावरूप कारण कौन ? त्रिकाली कारण कौन; और निमित्तकारण कौन है – इन बातों का ज्ञान करना चाहिए क्योंकि कार्य के समय चारों बातें नियम से होती हैं।

प्रश्न 80 – राग, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है – ऐसा मानने से किस-किस कारण पर दृष्टि नहीं जातीं हैं ?

उत्तर – (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि निमित्तकारण; (2) चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण; (3) अनन्तपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिकउपादानकारण पर दृष्टि नहीं जाती है।

प्रश्न 81 – घड़ा, कारण और राग, कार्य – कारणानुविधायीनि -कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – आत्मा के चारित्रगुण में से अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से राग हुआ है; घड़े के कारण नहीं हुआ तो **कारणानुविधीयान -कार्याणि** को माना; और घड़े के कारण राग हुआ है तो **कारणानुविधीयानिकार्याणि** को नहीं माना।

प्रश्न 82 – चारित्रगुण, कारण और राग, कार्य -कारणानु-विधायीनि -कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का

अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से राग हुआ है; चारित्रगुण के कारण नहीं हुआ तो कारणानुविधायीनि -कार्याणि को माना; और चारित्रगुण के कारण राग हुआ तो कारणानुविधायीनिकार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 83 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और राग, कार्य -कारणानुविधायीनिकार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - राग उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण से नहीं तो कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय के कारण राग हुआ, तो करणानुविधायीनिकार्याणि को नहीं माना।

कुम्हार ने चाक, कीली, डण्डा, हाथ आदि से घड़ा बनाया — इस वाक्य में से ज्ञानी कुम्हार के 'ज्ञान' पर उपादान-उपादेय का 25 प्रश्नोंत्तरों के द्वारा स्पष्टीकरण।

प्रश्न 84 - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग, उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय - क्या यह उपादान-उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है क्योंकि यहाँ पर आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय है।

प्रश्न 85 - यदि कोई चतुर - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग, उपादानकरण और ज्ञान, उपादेय - ऐसा ही माने तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग नष्ट होकर आत्मा

का ज्ञानगुण बन जाये तो ऐसा माना जा सकता है कि घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग; उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय परन्तु ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि उपादान-उपादेय तत्स्वरूप में ही (अभिन्न सत्तावान पदार्थ में ही) होता है; जिनकी सत्ता-सत्त्व भिन्न-भिन्न है - ऐसे दो पदार्थों में उपादान-उपादेय नहीं होता है।

प्रश्न 86 - जो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग आदि निमित्तकारणों को ही ज्ञान का सच्चा कारण मानते हैं, उन्हें जिनवाणी में किन-किन नामों से सम्बोधन किया है?

उत्तर - (1) जो निमित्तकारणों में से ही कार्य की उत्पत्ति मानते हैं, उन्हें श्री समयसार, कलश 55 में कहा है कि 'उनका सुलटना दर्निवार है और यह उनका अज्ञान-मोह अन्धकार है।' (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 55 में कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (3) श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6 में लिखा है कि 'तस्य देशना नास्ति, अर्थात् वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है।' (4) श्री आत्मावलोकन में कहा है कि 'यह उनका हरामजादीपना है।'

प्रश्न 87 - आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय इसे समझने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर - (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग आदि निमित्तकारणों से ज्ञान हुआ, ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव; (2) आत्मा में अनन्त गुण हैं, उनमें ज्ञानगुण को छोड़कर, अन्य गुणों से दृष्टि हटना; (3) अब, ज्ञान के लिए मात्र त्रिकाली उपादानकारण, ज्ञानगुण की तरफ देखना रहा - इतना लाभ रहा।

प्रश्न 88 - यदि ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय/ कार्य है, तो ज्ञानगुण तो सदैव विद्यमान है; घड़ा,

चाक, कीली, डण्डा, हाथ, रागसम्बन्धी ज्ञान सदा क्यों नहीं होता ? अत: यह आपकी बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर – अरे भाई, हमने आत्मा के ज्ञानगुण को ज्ञान का उपादान-कारण कहा है, वह तो घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने की अपेक्षा से कहा है। वास्तव में आत्मा का ज्ञानगुण भी ज्ञान का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

प्रश्न 89 – आत्मा का ज्ञानगुण भी ज्ञान होने का सच्चा उपादानकारण नहीं है -तो ज्ञान का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है। मानो दस नम्बर पर इस सम्बन्धी ज्ञान हुआ तो उससे अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय नौ नम्बर क्षणिकउपादानकारण, यहाँ पर ज्ञान का सच्चा उपादानकारण है।

प्रश्न 90 – ज्ञानगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह क्यों चला आ रहा है ?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य व गुण अनादि-अनन्त ध्रौव्य रहता हुआ, एक पर्याय का व्यय और एक पर्याय का उत्पाद एक ही समय में स्वयं स्वत: अपने परिणमनस्वभाव के कारण करता रहा है, करता है और भविष्य में करता रहेगा – ऐसा वस्तुस्वरूप है। इसी कारण अनादि काल से ज्ञानगुण में पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है।

प्रश्न 91 – अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और ज्ञान, उपादेय – इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर – (1) भूत-भविष्यत् की पर्यायों की दृष्टि हट गयी; (2) ज्ञानगुण जो त्रिकाली उपादानकारण था, वह भी अब व्यवहार-

कारण हो गया; (3) अब ज्ञान के लिए मात्र अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिकउपादानकारण की ओर देखना रहा।

प्रश्न 92 - कोई चतुर फिर प्रश्न करता है कि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती हैं और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है - ऐसा जिनवाणी में कहा है, फिर यह मानना की अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिक उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय है, यह बात मिथ्या सिद्ध होती है ?

उत्तर - अरे भाई ! अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती और पर्याय में से पर्याय नहीं आती - यह जिनवाणी की बात बिल्कुल ठीक है, परन्तु हमने तो कार्य से पहिले कौन सी पर्याय होती है, उसका ज्ञान कराने की अपेक्षा से अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय को ज्ञान का क्षणिकउपादानकारण कहा है; वास्तव में अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय भी ज्ञान का सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 93 - यदि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय ज्ञान होने का सच्चा उपादानकारण नहीं है तो कैसा कारण है और कैसा कारण नहीं है ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, ज्ञान होने का अभावरूप कारण है और कालसूचक है, परन्तु कार्य का जनक नहीं है।

प्रश्न 94 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण भी ज्ञान का सच्चा कारण नहीं है तो ज्ञान का वास्तविक उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण ही ज्ञान का वास्तविक उपादानकारण है।

प्रश्न 95 - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-

कारण ही ज्ञान का वास्तविक उपादानकारण है - ऐसा जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण की ओर ज्ञान के लिए देखना नहीं रहा; (2) अब ज्ञान के लिए एकमात्र उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण की ओर देखना रहा - यह लाभ हुआ।

प्रश्न 96 - (1) आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय; (3) उस समय पर्याय की योग्यता ज्ञान, क्षणिकउपादानकारण और ज्ञान, उपादेय - ऐसा शास्त्रों में बताया है। इतना लम्बा कथन करने से क्या लाभ था ? सीधे कह देते कि कार्य उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ही होता है ?

उत्तर - (1) निमित्तकारणों से पृथक् करने के लिये त्रिकाली उपादानकारण, ज्ञानगुण को बताना आवश्यक था; (2) भूत-भविष्यत् पर्यायों से पृथक् करने के लिये और अभावरूप कारण का ज्ञान कराने के लिये अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण को बताना आवश्यक था; (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक-उपादानकारण से पृथक् करने और कार्य के सच्चे कारण का ज्ञान कराने के लिये, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण, ज्ञान को बताना आवश्यक था।

प्रश्न 97 - ज्ञान उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकरण से हुआ है - इसे जानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - जैसे, ज्ञान उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-

उपादानकारण से हुआ है; वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ही हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे – ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान हो जाता है।

प्रश्न 98 – विश्व में सभी कार्य उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे – ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान होते ही क्या अपूर्व कार्य देखने में आता है ?

उत्तर – (1) अनादि काल की पर में करूँ-करूँ की मिथ्यामान्यता का अभाव; (2) दृष्टि अपने ज्ञायकस्वभाव पर आना; (3) सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रम से शुद्धि में वृद्धि होकर, मोक्ष लक्ष्मी का नाथ होना; (4) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (5) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भावरूप पञ्च परावर्तन का अभाव होकर, पञ्च परमेष्टियों में गिनती होना – ये अपूर्व कार्य देखने में आते हैं।

प्रश्न 99 – विश्व में प्रत्येक कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है, तब कौन-कौनसी चार बातें एक साथ, एक ही समय में नियम से होती हैं ?

उत्तर – (1) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण (उत्पाद); (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण (व्यय); (3) त्रिकाली उपादानकारण (ध्रौव्य); और (4) निमित्त-कारण – ये चार बातें प्रत्येक कार्य में एक ही साथ, एक ही काल में नियम से होती हैं। *(श्री प्रवचनसार, गाथा 95)*

प्रश्न 100 – उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान-

कारण से ही कार्य की उत्पत्ति होती है, क्या यह निरपेक्ष है ?

उत्तर - हाँ! कार्य स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखता है; इसलिए निरपेक्ष है, और अपनी अपेक्षा रखता है; इसलिए सापेक्ष है। पात्र भव्य जीवों को प्रथम कार्य की निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए, फिर जो कार्य हुआ, उसका अभावरूप कारण कौन है; त्रिकालीकारण कौन है; और निमित्तकारण कौन है ? - इन बातों का ज्ञान करना चाहिए, क्योंकि कार्य के समय चारों बातें नियम से होती हैं।

प्रश्न 101 - ज्ञान, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है - ऐसा मानने से किस-किस कारण पर दृष्टि नहीं जाती है ?

उत्तर - (1) घड़ा, चाक, कीली, डण्डा, हाथ, राग (निमित्तकारण); (2) ज्ञानगुण (त्रिकाली उपादानकान); (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण पर दृष्टि नहीं जाती है।

प्रश्न 102 - घड़ा, कारण और ज्ञान, कार्य - कारणानु-विधायीनिकार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा के ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता से ज्ञान हुआ है; घड़े के कारण नहीं, तो कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना; और ज्ञान, घड़े के कारण हुआ, तो कारणानुविधायीनि-कार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 103 - ज्ञानगुण, कारण और ज्ञान, कार्य -कारणानु-विधायीनिकार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण

से ज्ञान हुआ है; ज्ञानगुण के कारण नहीं, तो कारणानुविधायीनि-कार्याणि को माना; और ज्ञानगुण से ज्ञान हुआ है, तो कारणानुविधायीनि-कार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 104 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और ज्ञान, कार्य - कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - ज्ञान-उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण से नहीं, तो कारणानुविधीयीनिकार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय क्षणिक उपादानकारण नौ नम्बर से ज्ञान हुआ तो कारणा-नुविधायीनिकार्याणि को नहीं माना।

प्रश्न 105 - कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है - ऐसा कहाँ कहा है ?

उत्तर - (1)'कारणानुविधायित्वादेव कार्याणां', अर्थात् कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; (2) कारण-अनुविधायित्वात् कार्याणां, अर्थात् कारण जैसे कार्य होते हैं; *[श्री समयसार, गाथा 130-131 की टीका]* (3) 'कारणानुविधायीनि कार्याणि', अर्थात् कारण जैसा ही कार्य होता है। *[श्री समयसार, गाथा 68 की टीका]* (4) 'तेहि पुणों पज्जाया', अर्थात् द्रव्य और गुणों से पर्यायें होती हैं; *[श्री प्रवचनसार, गाथा 93]* (5) गुणों के विशेषकार्य (परिणमन) को पर्याय कहते हैं।

प्रश्न 106 - कार्य के पर्यावाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर - कार्य को कर्म, अवस्था, पर्याय, हालत, दशा, परिणाम, परिणति, व्याप्य, उपादेय, नैमित्तिक आदि कहा जाता है।

प्रश्न 107 – कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है, इसमें अनेकान्त किस प्रकार घटित होता है?

उत्तर – कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; पर से नहीं, यह अनेकान्त है।

प्रश्न 108 – कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; पर से नहीं, इसमें कौन से कारण की बात है?

उत्तर – 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण' की बात है।

प्रश्न 109 – 'कारण का अनुसरण करके ही कार्य होता है; पर से नहीं', 'पर में' कौन-कौन से कारण आते हैं?

उत्तर – (1) निमित्तकारण, (2) त्रिकाली उपादानकारण, (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण – ये सब पर में आते हैं।

***कारणानुविधायिनीकार्याणि – कुछ प्रश्नोत्तर**

प्रश्न 110 – गुरु, कारण और ज्ञान, कार्य, क्या कारणानु-विधायीनि -कार्याणि को माना?

उत्तर – बिल्कुल नहीं माना। क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; गुरु से नहीं, तब 'कारणानुविधायिनी कार्याणि' को माना।

प्रश्न 111 – ज्ञान, कार्य और इन्द्रियाँ, कारण; क्या कारणानु -विधायीनिकार्याणि को माना?

**इस प्रकरण के प्रश्नोत्तरों में प्रत्येक बोल पर उपादान-उपादेय के प्रश्नोत्तर स्वयं लगाकर अभ्यास करना चाहिए।*

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; इन्द्रियों से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 112 – ज्ञानावरणीयकर्म का क्षयोपशम, कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशम से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 113 – शुभभाव, कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर – नहीं माना; क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; शुभभाव से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 114 – श्रद्धागुण, कारण और ज्ञान, कार्य-क्या कारणानु-विधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर – नहीं माना, क्योंकि आत्मा के ज्ञानगुण में से; अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके; उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; श्रद्धागुण से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 115 - आत्मा, कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानु-विधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि आत्मा में तो अनन्त गुण हैं; इसलिए ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके; उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; आत्मा से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 116 - ज्ञानगुण, कारण और ज्ञान, कार्य - क्या कारणानु-विधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि ज्ञानगुण तो त्रिकाल है और ज्ञानरूप कार्य एक समय का है; इसलिए अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ; त्रिकाली ज्ञानगुण के कारण नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 117 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादान-कारण और ज्ञान, कार्य; क्या कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि कभी अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है; इसलिए उस समय पर्याय की योग्यता, ज्ञान क्षणिक-उपादानकारण और ज्ञान, कार्य, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 118 - ज्ञान, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से हुआ - ऐसा मानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी ?

उत्तर - (1) अत्यन्त भिन्न देव, गुरु शास्त्र से, (2) आँख, नाक, कान आदि इन्द्रियों से, (3) ज्ञानावरणीयकर्म के क्षयोपशमादि से, (4) शुभभावों से, (5) श्रद्धा-चारित्र-आनन्द आदि अनन्त गुणों से, (6) अभेदद्रव्य से, (7) ज्ञानगुण से, (8) अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिकउपादानकारण से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 119 - अब वर्तमान ज्ञान के लिए कहाँ देखना रहा ?

उत्तर - वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण ही ज्ञान होने का सच्चा कारण है, उसकी ओर देखना रहा।

दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम से क्षयोपशमसम्यक्त्व हुआ— इस वाक्य में से (1) क्षयोपशमसम्यक्त्व, (2) दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम पर यहाँ केवल इस सम्बन्ध में तीन प्रश्नोत्तर दिए हैं ? उपादान-उपादेय के लगाकर समझायें।

प्रश्न 120 - क्षयोपशमसम्यक्त्व हुआ, उसका सच्चा कारण कौन है ?

उत्तर - उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही क्षयोपशमसम्यक्त्व का सच्चा कारण है।

प्रश्न 121 - क्षयोपशमसम्यक्त्व का सच्चा कारण, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही है। ऐसा जानने से किस-किस से दृष्टि हट गयी ?

उत्तर - (1) अत्यन्त भिन्न देव, गुरु, शास्त्र से, (2)दर्शनमोहनीय के क्षयोपशम से, (3) आत्मा से, (4) ज्ञान-चारित्र आदि अनन्त गुणों से, (5) शुभभावों से, (6) श्रद्धागुण जो त्रिकाली उपादानकारण है, उससे, (7) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण

औपशमिकसम्यक्त्व से; क्षयोपशमसम्यक्त्वरूपकार्य के लिये दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 122 – क्षयोपशमिकसम्यक्त्व का द्रव्य, गुण और अभावरूप पर्याय का नाम बताओ ?

उत्तर – (1) आत्मा, द्रव्य हैं, (2) श्रद्धा, गुण है, (3) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण औपशमिकसम्यक्त्व की अभावरूप पर्याय है।

केवलज्ञानावरणी के अभाव से केवलज्ञान हुआ — इस वाक्य से (1) केवलज्ञान, (2) केवलज्ञानावरणी के अभाव पर यहाँ इस सम्बन्ध में केवल तीन प्रश्नोत्तर दिए हैं। उपादान-उपादेय के लगाकर समझायें —

प्रश्न 123 – केवलज्ञान का सच्चा कारण कौन हैं ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही केवलज्ञान का सच्चा कारण है।

प्रश्न 124 – उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान -कारण ही केवलज्ञान का सच्चा कारण है तो केवलज्ञान का सच्चा कारण कौन-कौन नहीं है ?

उत्तर – (1) चौथा काल, (2) केवलज्ञानावरणीकर्म का अभाव, (3) वज्रवृषभानाराचसंहनन, (4) आत्मा, (5) ज्ञानगुण के अतिरिक्त अन्य अनन्त गुण, (6) ज्ञानगुण, (7) शुक्ललेश्या आदि मन्दकषाय का शुभभाव (8) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण, भावश्रुतज्ञान – यह सब केवलज्ञान के सच्चे कारण नहीं हैं।

प्रश्न 125 – केवलज्ञान का (1) त्रिकाली उपादानकारण, (2) अभावरूप उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - (1) आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादनकारण है, और (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भावश्रुतज्ञान, क्षणिकउपादान अभावरूप कारण है और केवलज्ञान, कार्य है।

प्रश्न 126 - कुम्हार ने घड़ा बनाया — इसमें कुम्हार, कारण और घड़ा बना, कार्य - 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को कब माना ?

उत्तर - आहारवर्गणारूप मिट्टी में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिक उपादानकारण पिण्ड का अभाव करके; उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से घड़ा बना; कुम्हार आदि से नहीं, तब कारणानुविधायीनिकार्याणि को माना।

प्रश्न 127 - घड़ा, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण से बना है; कुम्हार आदि से नहीं - इसमें किस-किस का समावेश होता है ? प्रत्येक पर कारणानुविधायीकार्याणि को कब माना, कब नहीं ?

उत्तर - (1) कुम्हार का राग, (2) हाथ-कीली-चाक-डण्डा, (3) आहारवर्गणा को छोड़कर, बाकी वर्गणाएँ, (4) मिट्टी, (5) पिण्ड, यह सब 'कुम्हार आदि' में आते हैं; इनसे घड़ा नहीं बना है। एकमात्र उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण से घड़ा बना - ऐसा माननेवाले ने ही कारणानुविधायीकार्याणि को माना है; अन्य ने नहीं।

प्रश्न 128 - 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः' — इसमें ऐसा लगता है कि आत्मा का ज्ञान और शरीर की क्रिया, उपादानकारण और मोक्ष, कार्य - 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को माना ?

उत्तर - 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को बिल्कुल नहीं माना,

क्योंकि उस समय पर्याय की योग्यता मोक्ष, क्षणिक उपादानकारण और मोक्ष, कार्य है।

प्रश्न 129 - मोक्ष का त्रिकाली उपादानकारण और अभावरूप उपादानकारण कौन है ?

उत्तर - आत्मा, त्रिकाली उपादानकारण है और अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय चौदहवाँ गुणस्थान अभावरूप क्षणिकउपादानकारण है।

प्रश्न 130 - मोक्ष का कारण कौन-कौन नहीं है ? प्रत्येक पर 'कारणानुविधायीनि कार्याणि' को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - (1) औदारिकशरीर; (2) द्रव्यकर्म का अभाव; (3) वज्र-वृषभनाराचसंहनन; (4) चौथा काल; (5) आत्मा; (6) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण चौदहवाँ गुणस्थान; (7) आत्मा का ज्ञान और शरीर की क्रिया, इनमें कोई भी मोक्ष का कारण नहीं है। एक मात्र उस समय पर्याय की योग्यता, मोक्ष, क्षणिक उपादानकारण और मोक्ष हुआ, यह कार्य है - ऐसा माननेवाले ने ही कारणानुविधायीकार्याणि को माना है; अन्य ने नहीं।

प्रश्न 131 - यदि ऐसा है तो शास्त्रों में 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः' - ऐसा क्यों कहा जाता है ?

उत्तर - यहाँ पर ज्ञान, अर्थात् सम्यग्ज्ञान, और क्रिया, अर्थात् सम्यक्चारित्र, दोनों मिलकर मोक्ष का कारण जानना चाहिए। शरीराश्रित उपदेश, उपवासादिक क्रिया और शुभरागरूप व्यवहार को मोक्षमार्ग नहीं जानना चाहिए। यह इस कथन का आशय है। जो 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्षः' का अर्थ, ज्ञान और शरीर की क्रिया से मोक्ष है, ऐसा करते हैं, वह मिथ्या है।

प्रश्न 132 - आत्मा का ज्ञान और शरीर की क्रिया, उपादान-कारण और मोक्ष, कार्य - इस सूत्र का यह अर्थ गलत क्यों हैं ?

उत्तर - 'ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्ष: ' का अर्थ जो शरीर की क्रिया और आत्मा का ज्ञान - ऐसा करते हैं, उन्हें व्याकरण का भी ज्ञान नहीं है, क्योंकि ज्ञान एक और शरीर की क्रिया, यह अनन्त पुद्गल परमाणुओं की क्रिया हैं। क्रियाभ्याम् द्विवचन है, यदि यहाँ पर 'भ्याम्' के बदले में तीसरी बहुवचन शब्द होता तो ठीक होता, परन्तु यहाँ पर 'भ्याम्' है, यह दो को बताता है; इसलिए जो ज्ञान और शरीर की क्रिया, यह मोक्ष है - ऐसा अर्थ करते हैं, वह मिथ्या अर्थ है। इसलिए पात्र जीवों को यहाँ ज्ञान का अर्थ, सम्यग्ज्ञान और क्रिया का अर्थ, सम्यक्चारित्र तथा इन दोनों को मिलाकर मोक्ष का कारण जानो और शरीर की क्रिया को मोक्षमार्ग मत जानो, ऐसा ज्ञानियों का आदेश है।

प्रश्न 133 - 'दर्शनमोहनीयकर्म का अभाव, कारण और क्षायिकसम्यक्त्वकार्य' - कारणानुविधीयीनि कार्याणि को माना ?

उत्तर - नहीं माना, क्योंकि त्रिकाली उपादानकारण, श्रद्धागुण है और क्षायिकसम्यक्त्व, कार्य है।

प्रश्न 134 - कोई चतुर, दर्शनमोहनीयकर्म का अभाव, कारण और क्षायिकसम्यक्त्व, कार्य - ऐसा कहे तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - दर्शनमोहनीय के अभाव को जीव का श्रद्धागुण बनने का प्रसङ्ग उपस्थित होता है - यह दोष आता है।

प्रश्न 135 - क्षायिकसम्यक्त्व का सच्चा कारण कौन है और कौन नहीं ?

उत्तर – उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही सच्चा कारण है, क्योंकि पर तो कारण है ही नहीं; श्रद्धागुण और अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण क्षयोपशमसम्यक्त्व भी सच्चा कारण नहीं है।

प्रश्न 136 – क्षायिकसम्यक्त्व का सच्चा कारण 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही है' – ऐसा जानने से किन-किन कारणों से दृष्टि हट गयी।

उत्तर – (1) देव-गुरु; (2) दर्शनमोहनीय का अभाव; (3) श्रद्धागुण; (4) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण क्षयोपशमसम्यक्त्व से दृष्टि हट गयी।

प्रश्न 137 – भूतार्थस्वभाव, कारण और सम्यग्दर्शन, कार्य – इसमें भूतार्थस्वभाव कौन है?

उत्तर – एकमात्र अनादि-अनन्त अमूर्त ज्ञायकस्वभाव ही भूतार्थ-स्वभाव है; भूतार्थस्वभाव के आश्रय से सम्यग्दर्शन होता है।

प्रश्न 138 – सम्यग्दर्शन कार्य के लिए अभूतार्थ कौन-कौन हैं?

उत्तर – (1) देव, गुरु-शास्त्र अभूतार्थ हैं; (2) दर्शनमोहनीय का उपशमादि अभूतार्थ है; (3) शरीर,इन्द्रियाँ, नौकर्म अभूतार्थ हैं; (3) शुभभाव अभूतार्थ हैं; (4) चौथा काल अभूतार्थ है।

प्रश्न 139 – मोक्षरूप कार्य के लिए भूतार्थ कौन है?

उत्तर – एकमात्र त्रिकाली ज्ञायकस्वभाव ही भूतार्थ है।

प्रश्न 140 – मोक्षरूप कार्य के लिए अभूतार्थ कारण क्या-क्या हैं?

उत्तर - (1) वज्रवृषभनाराचसंहनन; (2) कर्मों का अभाव; (3) शुभभाव; और (4) चौथाकाल, अभूतार्थ कारण है।

प्रश्न 141 - कार्य होने में कारण से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - वास्तव में कार्य होने में उपादानकारण से तात्पर्य है; निमित्तकारण से तात्पर्य नहीं।

प्रश्न 142 - शास्त्रों में निमित्तकारणों की बात क्यों की है, जबकि का कार्य का सच्चा कारण उपादानकारण ही है ?

उत्तर - जब-जब उपादान में कार्य होता है, उस समय निमित्त होता ही है, ऐसी वस्तु स्थिति है; इसलिए कार्य के समय कौन निमित्तकारण है ? उसका ज्ञान कराने के लिए शास्त्रों में निमित्त की बात समझायी है।

प्रश्न 143 - जब-जब कार्य होता है, तब-तब निमित्त होता ही है—ऐसा शास्त्रों में कहाँ लिखा है ?

उत्तर - (1) 'उपादान निज गुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय। भेदज्ञान परमान विधि, बिरला बूझे कोय॥' [बनारसीविलास] (2) प्रति समय के उत्पाद (कार्य) के समय, उचित बहिरङ्ग साधनों की (निमित्तों की) सन्निधि (उपस्थिति) होती ही है। 'जो उचित बहिरङ्ग साधनों की सन्निधि के सद्भाव में अनेक प्रकार की अनेक अवस्थाएँ करता है।' *[श्री प्रवचनसार, गाथा 95 की टीका]* (3) उस वस्तु में विद्यमान परिणमनरूप जो योग्यता, वह अन्तरङ्ग निमित्त (उपादानकारण) है और उस पारिणमन का निश्चयकाल (कालद्रव्य), बाह्य निमित्त है - ऐसा तत्त्वदर्शियों ने निश्चय किया है। *[श्री गोम्मट्सार, जीवकाण्ड, गाथा 580 की टीका तथा श्लोक]*

प्रश्न 144 – तीनों कारणों में से कौनसा कारण हो, तब कार्य की उत्पत्ति नियम से होती है?

उत्तर – वास्तव में कार्य की उत्पत्ति, उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण के समय नियम से होती है। वहाँ पर बाकी के दोनों उपादानकारण और निमित्तकारण होते ही हैं; किसी को किसी का इन्तजार नहीं करना पड़ता है।

प्रश्न 145 – पहले कारण है या कार्य है?

उत्तर – कारण और कार्य का एक ही समय है; अतः यह प्रश्न कि पहले कारण या कार्य, व्यर्थ है।

प्रश्न 146 – जब सब कार्य 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण' से ही होते हैं तो लोग दूसरे कारणों की चर्चा क्यों करते हैं?

उत्तर – जैसे, किसी का माल चोरी करने से डण्डे पड़ते हैं, जेल जाना पड़ता है; वैसो ही जो कार्य में दूसरे कारणों की बात में पागल हो रहे हैं, उन्हें चारों गतियों में घूमकर निगोद में जाना अच्छा लगता है; इसलिए दूसरे कारणों की चर्चा करते हैं।

प्रश्न 147 – जो व्यवहारकारणों को सच्चा कारण मानते हैं, उन जीवों को भगवान ने किन-किन नामों से शास्त्रों में सम्बोधन किया है?

उत्तर – जो व्यवहारकारणों को सच्चा कारण मानते हैं, उन्हें – (1) 'उनका सुलटना दुर्निवार है और यह उनका मोह-अज्ञान -अन्धकार है।' *[श्री समयसार, कलश 55]* (2) वह पद-पद पर धोखा खाता है, *[श्री प्रवचनसार, गाथा 55]* (3) वह भगवान की वाणी सुनने लायक नहीं है। *[श्री पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, गाथा 6]* (4) वह मिथ्यादृष्टि है।

[श्री समयसार, 324 से 327 के हैडिंग में] (5) उसका फल, संसार है। *[श्री समयसार, गाथा 11 के भावार्थ]*(6) उसके सब धर्म के अङ्ग मिथ्यात्व-भाव को प्राप्त होते हैं और अकार्यकारी, अर्थात् अनर्थकारी हैं। *[श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 213]* (8) यह उसका हरामजादीपना है। *[श्री आत्मवलोकन, पृष्ठ 143]*

प्रश्न 148 – उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान से कार्य की उत्पत्ति होती है, क्या यह निरपेक्ष है ?

उत्तर – हाँ; वस्तु स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखती; इसलिए निरपेक्ष है और अपनी अपेक्षा रखती है; इसलिए सापेक्ष है। इसलिए सबसे प्रथम पात्र जीवों को कार्य की निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए, फिर सापेक्षता की बात आती है।

प्रश्न 149 – क्या निरपेक्षता सिद्ध किये बिना, सापेक्षता नहीं होती है ?

उत्तर – नहीं होती हैं क्योंकि —(1) निरपेक्षता के बिना, सापेक्षता का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (2) अभेद के बिना, भेद का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (3) निश्चय के बिना, व्यवहार का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (4) उपादान के बिना, निमित्त का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (5) भूतार्थ के बिना, अभूतार्थ का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (6) यथार्थ के बिना, उपचार का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (7) स्व के बिना, पर का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (9) मुख्य के बिना, गौण का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (10) द्रव्यार्थिक के बिना, पर्यायार्थिक का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (11) अहेतुक के बिना, सहेतुक का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है। (12) नित्य के बिना, अनित्य का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (13) तत् के बिना, अतत् का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है, (14) अस्ति के बिना, नास्ति का यथार्थ ज्ञान नहीं

होता है, (15) एक के बिना, अनेक का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है। (16) स्वद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के बिना, परद्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव का यथार्थ ज्ञान नहीं होता है - ऐसा जिनवाणी में कहा है।

प्रश्न 150 - क्षायिकसम्यग्दर्शन में तीनों प्रकार के उपादान -उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) जीव का श्रद्धागुण, त्रिकाली उपादानकारण; क्षायिकसम्यक्त्व, उपोदय; (2) क्षयोपशमकसम्यक्त्व, अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादानकारण; क्षायिकसम्यक्त्व, उपादेय; (3) क्षायिकसम्यक्त्व उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक उपादानकारण; क्षायिकसम्यक्त्व, उपादेय।

प्रश्न 151 - केवलदर्शन में तीनों प्रकार के उपादान-उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) आत्मा का दर्शनगुण, त्रिकाली उपादानकारण; केवलदर्शन, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय अचक्षुदर्शन, क्षणिकउपादानकारण; अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय केवलदर्शन, उपोदय; (3) केवलदर्शन उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण, केवलदर्शन, उपादेय।

प्रश्न 152 - अन्तरायकर्म के अभाव में तीनों प्रकार के उपादान-उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) कार्माणवर्गणा, त्रिकाली उपादानकारण; अन्तरायकर्म का अभाव, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादानकारण; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय अन्तरायकर्म का क्षयोपशम, क्षणिकउपादानकारण; अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय अन्तरायकर्म का अभाव, उपादेय; (3) अन्तरायकर्म का अभाव

उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण; अन्तरायकर्म का अभाव, उपादेय।

प्रश्न 153 - यथाख्यातचारित्र में तीनों प्रकार के उपादान -उपादेय बताओ ?

उत्तर - (1) जीव का चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण; यथाख्यातचारित्र, उपादेय; (2) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय सकलचारित्र, क्षणिकउपादानकारण; अनन्तरउत्तरक्षणवर्तीपर्याय यथाख्यातचारित्र, उपादेय; (3) उस समय पर्याय की योग्यता यथाख्यातचारित्र क्षणिकउपादानकारण; यथाख्यातचारित्र, उपादेय।

प्रश्न 154 - जब उत्पाद होता है, वहाँ पर उत्पाद के अलावा तीन बातें कौन-कौन सी होती हैं ?

उत्तर - (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिकउपादानकारण (व्यय); (2) त्रिकाली उपादानकारण (ध्रौव्य); (3) अनुकूल निमित्त की (उपस्थिति)

जय महावीर-जय महावीर

3

कारण-कार्य रहस्य

योग्यता : स्वरूप एवं लाभ

प्रश्न 1- योग्यता किसे कहते हैं ?

उत्तर - समर्थ उपादानशक्ति का नाम ही योग्यता है।

प्रश्न 2- योग्यता के पर्यायवाची शब्द क्या हैं ?

उत्तर - समर्थ उपादनशक्ति कहो; भवितव्यता कहो; योग्यता कहो; एक ही बात है।

प्रश्न 3- भवितव्यता, अर्थात् योग्यता का व्युत्पत्ति अर्थ क्या है ?

उत्तर - 'भवितु योग्य भवितव्यम् तस्य भाव: भवितव्यता' जो होनेयोग्य हो, उसे भवितव्य कहते हैं; उसका भाव, भवितव्यता कहलाती हैं। जिसे हम योग्यता कहते हैं, उसी का दूसरा नाम भवितव्यता है।

प्रश्न 4 - योग्यता को जानने से क्या-क्या लाभ हैं ?

उत्तर - (1) प्रत्येक द्रव्य में जो-जो परिणमन होता है, वह 'उस समय पर्याय की योग्यता' के अनुसार ही हुआ है, हो रहा है, होता रहेगा; उसमें किसी दूसरे का जरा भी हस्तक्षेप नहीं है - ऐसा जानने से, पर का मैं कुछ करूँ या पर मेरा कुछ करे- ऐसा प्रश्न उपस्थित नहीं होता है; (2) क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि होती है; (3) करूँ-

करूँ की मिथ्याबुद्धि का अभाव होते ही सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 5 - कार्य, योग्यतानुसार ही होता है - इसके लिए क्या शास्त्रप्रमाण है ?

उत्तर - (1) वैभाविकपरिणमन, निमित्त-सापेक्ष होकर भी वह अपनी उस काल में प्रगट होनेवाली योग्यतानुसार ही है। अपनी योग्यतानुसार जीव, संसारी है और अपनी योग्यतानुसार ही मुक्त होता है; (2) परिणमन का साधारणकारण, कालद्रव्य होते हुए भी, द्रव्य अपने उत्पाद - व्ययस्वभाव के कारण ही परिणमन करता है; काल उसका कुछ प्रेरक नहीं है; (3) वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है, क्योंकि यह पर्याय का स्वभाव है। *(श्री समयसार, कलश 211)*; (4) एक द्रव्य में अतीत (भूत), अनागत (भविष्य), और गाथा में आए हुए 'अपि' शब्द से वर्तमान पर्यायरूप जितनी अर्थपर्याय और व्यंजननपर्याय हैं, 'तत्प्रमाण' वह द्रव्य होता है। *(धवला पुस्तक 1, पृष्ठ 386)* (5) तीन काल के जितने समय हैं, प्रत्येक द्रव्य के प्रत्येक गुण में उतनी-उतनी ही पर्यायें होती हैं। (6) प्रत्येक पर्याय, पूर्व पर्याय का अभाव करके आयी, इस अपेक्षा 'विकार्य' कहा है; नयी उत्पन्न हुयी, इस अपेक्षा 'निर्वर्त्य' कहा है; थी तो आयी, इस अपेक्षा प्राप्य कहा है। *(श्री समयसार, गाथा 76 से 78 तक)* - ये योग्यता के लिए शास्त्र के प्रमाण हैं।

प्रश्न 6 - जब आप लोगों से कोई उत्तर नहीं बनता है, तो आप कह देते हो कि यह 'उस समय पर्याय की योग्यता' से है; इस प्रकार 'योग्यता' कहकर क्या आप धोखा नहीं देते ?

उत्तर - नहीं, भाई! यह धोखा नहीं, अपितु सर्वज्ञप्रणीत सत्यार्थ

वस्तुस्थिति है। देखो! (1) दो परमाणु हैं, एक परमाणु की वर्णगुण की पर्याय शत-प्रतिशत सफेद है और दूसरे परमाणु की हजार गुनी सफेद है - तो आप बतलाइये, उसका क्या कारण है? परमाणु तो शुद्ध है, उसमें दूसरा कोई कारण नहीं कहा जा सकता है; अतः निश्चित् होता है कि उसका कारण, उस समय पर्याय की योग्यता ही है। (2) आपके सामने सब पुद्गल स्कन्ध हैं, किसी के रङ्गगुण की पर्याय काली है, हरी है, पीली है, नीली है - तो प्रश्न होता है - ऐसा क्यों है? तो आपको कहना पड़ेगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है। (3) विश्व में जीव अनन्त हैं, सबके भाव अलग-अलग क्यों हैं? आपको कहना पड़ेगा— उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है। (4) अध्यापक कक्षा में 50 छात्रों को पढ़ाता है, सबको एक-सा ज्ञान क्यों नहीं होता है? तो आपको कहना पड़ेगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है। (5) सामने लोकालोक है; लोकालोक का ज्ञान, केवली को होता है, आपको क्यों नहीं होता है? - तो कहना पड़ेगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है। (6) भगवान की दिव्यध्वनि खिरती है, क्या सबको एक-सा ज्ञान होता है? नहीं; तो हम पूछते हैं, ऐसा क्यों हैं? उत्तर यही होगा 'उस समय पर्याय की योग्यता' ही कारण है।

याद रखो:— वास्तव मे कोई भी कार्य होने में या बिगड़ने में 'उस समय पर्याय की योग्यता ही' साक्षात् साधक है।

(इष्टोपदेश, गाथा 35 की टीका)

प्रश्न 7 - आचार्यों ने धवला श्लोक, 199 में योग्यता के विषय में क्या बताया है?

उत्तर - (1) द्रव्यार्थिकनय से द्रव्य में तीनों काल की पर्यायोंरूप अपने-अपने समय में परिणमन करने की योग्यता है। (2) पर्यायार्थिकनय से द्रव्य में जो वर्तमान पर्याय होती है, वह उसीरूप

से परिणमन की योग्यता रखती है। (3) इससे यह सिद्ध हुआ वर्तमान पर्याय, भूत या भविष्य में परिणमे, ऐसा भी नहीं होता है। भूतकाल की कोई भी पर्याय, आगे-पीछे काल में होने की योग्यता नहीं रखती है। भविष्य की पर्याय, उससे पहले हो जावे या पीछे हो जावे, ऐसी योग्यता नहीं रखती है; इसलिए किसी भी द्रव्य की किसी भी पर्याय को अनिश्चित मानना, जिनमत से बाहर है। (4) यह जीव इतना काल बीतने पर मोक्ष जायेगा, ऐसी नोंध केवलज्ञान में है। ***(श्री समयसार, कलश टीका कलश नं० 4 पृष्ठ 4)*** (5) केवलज्ञान एक ही समय में सर्व आत्मप्रदेशों से समस्त द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव को जानता है। ***(श्री प्रवचनसार, गाथा 47 का रहस्य)***

प्रश्न 8 - योग्यता से क्या सिद्ध हुआ ?

उत्तर - (1) बम पड़ना, (2) बहुत से मनुष्यों का एक साथ मरना, (3) एक शरीर में रहनेवाले निगोदिया जीवों का, सबका एक साथ मरण होना, (4) हवाईजहाज का टूटना, (5) राकेट ऊपर जाना, (6) नदी का प्रवाह बदलना, (7) बाँध का बनना, (8) कच्चे फल को जल्दी पकना, (9) पक्के फल को लम्बे काल तक कायम रखना, (10) अकालमरण, (11) कर्म का संक्रमण, उदीरणा, उत्कर्षण, स्थितिकाण्ड, अनुभागकाण्ड आदि सब काम अपने-अपने कार्यकाल में ही होते हैं, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य में जितने-जितने गुण हैं, उस-उस प्रत्येक गुण में तीन काल के जितने समय हैं, उतनी-उतनी पर्यायें हैं, वे निश्चित और क्रमबद्ध हैं, जरा भी आगे-पीछे नहीं हो सकती हैं - ऐसी बात 'योग्यता' से सिद्ध होती है।

प्रश्न 9 - योग्यता क्या है ?

उत्तर - भवितव्यता अथवा नियति, 'उस समय पर्याय की योग्यता है' वह क्षणिकउपादानकारण है।

प्रश्न 10 – द्रव्य की योग्यता क्या है?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य अपने-अपने द्रव्यरूप ही रहता है, कभी दूसरे द्रव्यरूप नहीं होता; इसलिए द्रव्यरूप योग्यता, द्रव्यरूप रहती है।

प्रश्न 11– गुण की योग्यता क्या है?

उत्तर – प्रत्येक गुण अपने-अपनेरूप ही रहता है। जैसे – ज्ञानगुण, ज्ञानगुणरूप ही रहता है; श्रद्धा, चारित्ररूप नहीं होता है; और पुद्गल में रसगुण, रसगुणरूप ही रहता है; गन्ध-वर्ण-स्पर्शरूप नहीं होता है – यह गुणरूप योग्यता है।

प्रश्न 12 – पर्यायरूप योग्यता क्या है?

उत्तर – प्रत्येक द्रव्य में अनन्त-अनन्त गुण हैं। एक-एक गुण में, जिस समय, जिस पर्याय की योग्यता है, वही होगी; एक समय भी आगे-पीछे नहीं हो सकती है। किसी भी तरह से उस योग्यता को टालने के लिए देव, इन्द्र, जिनेन्द्रभगवान की समर्थ नहीं हैं। पर्याय की योग्यता एक समयमात्र की ही होती है।

प्रश्न 13– उपादान-उपादेय प्रकरण में किस योग्यता की बात चलती है?

उत्तर – पर्यायरूप योग्यता की बात चलती है। वह योग्यतारूप पर्याय, जाननेयोग्य है; आश्रय करनेयोग्य नहीं है।

प्रश्न 14 – योग्यतारूप पर्याय के जानने से क्या-क्या लाभ हैं?

उत्तर – (1) सब में योग्यतारूप पर्याय जो होनी है, वही होगी; आगे-पीछे नहीं; (2) पर में करने-कराने की बुद्धि का अभाव हो जाता है; (3) दृष्टि अपने स्वभाव पर आ जाती है और जैनदर्शन के

रहस्य का मर्मी बन जाता है; (4) क्रम से मोक्ष का पथिक बन जाता है।

प्रश्न 15 - (1) पर्यायरूप योग्यता और द्रव्यरूप योग्यता के विषय में क्या-क्या जानना चाहिये ?

उत्तर - (1) पर्यायरूप योग्यता, ज्ञायक का ज्ञेय है, जाननेयोग्य है। (2) निज द्रव्यरूप योग्यता, आश्रय करनेयोग्य है, क्योंकि इसके आश्रय से ही धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती है।

प्रश्न 16 - पर्यायरूप योग्यता की विशेषरूप में समझाओ ?

उत्तर - (1) जैसे, आम है, जब उसकी पकनेयोग्य अवस्था होती है, तभी होगी; आगे-पीछे नहीं। किसी ने पाल में देकर पहले पका दिया - ऐसा नहीं है। (2) आम खट्टा था, मीठा हो गया, जब उसकी मीठा होनेयोग्य अवस्था थी, तभी हुई; आगे-पीछे नहीं और किसी के कारण से भी नहीं। (3) शरीर में बालकपन, युवावस्था, वृद्धावस्था होनेयोग्य होवे, तभी होती है; किसी बाह्य साधन से या किसी भी प्रकार से हेर-फेर नहीं हो सकता है। (4) महावीर भगवान को तीस वर्ष की आयु में दीक्षा का भाव आया; आदिनाथ भगवान को तिरासी लाख वर्ष पूर्व आयु के बाद दीक्षा का भाव आया - यह उनकी योग्यता ही ऐसी थी। (5) महावीर भगवान को दीक्षा के बारह वर्ष बाद केवलज्ञान हुआ और आदिनाथ भगवान को दीक्षा के एक हजार वर्ष बाद केवलज्ञान हुआ; मल्लिनाथ भगवान को दीक्षा लेते ही छह दिन में केवलज्ञान हुआ - यह सब उस समय पर्याय की योग्यता की बात है; इसमें किसी का कुछ भी हस्तक्षेप नहीं है। (6) सब द्रव्यों में जो-जो पर्याय होती हैं, वे उस-उस समय की योग्यता के कारण ही होती हैं। इस बात को स्वीकार करते ही

दृष्टि, अपने भगवान आत्मा पर आती है, तभी वास्तव में योग्यता को माना और जाना कहा जाता है।

प्रश्न 17 – योग्यता की बात, जीव-पुद्गलद्रव्यों में है या सब द्रव्यों में योग्यता की बात है?

उत्तर – (1) जीव अनन्त, पुद्गल अनन्तानन्त, धर्म-अधर्म-आकाश एक-एक और लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं। इन सब द्रव्यों में प्रत्येक में अनन्त-अनन्त गुण हैं। प्रत्येक गुण में जितने तीन काल के समय हैं, उतनी ही पर्यायों की योग्यता हैं। (2) वह योग्यता, क्रमबद्ध और क्रमनियमित हैं। उसे जरा भी हेर-फेर कोई नहीं कर सकता है।

प्रश्न 18 – सब द्रव्यों की पर्यायों की योग्यता क्रमबद्ध और निश्चित है, इसे कौन जानता है?

उत्तर – चौथे गुणस्थान से लेकर सिद्धदशा तक के सब जीव जानते हैं। जानने में जरा भी अन्तर नहीं है; मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है।

प्रश्न 19 – योग्यता, योग्यता की बातें करे और आत्मा का आश्रय न लेवे, तो क्या दोष आयेगा?

उत्तर – वह स्वच्छन्दता का सेवन करनेवाला, चारों गतियों में घूमकर निगोद चला जाएगा – क्योंकि योग्यता को जानने मानने का फल, अपने स्वभाव का आश्रय लेकर, सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति करके, क्रम से निर्वाण की प्राप्ति है।

प्रश्न 20 – योग्यता से क्या-क्या सिद्ध होता है?

उत्तर – (1) जिस समय जो पर्याय उत्पन्न होने की योग्यता हो,

वही नियम से होती है; (2) पर्याय होती है, वह अपने स्वकाल से होती है; (3) प्रत्येक पर्याय अपने जन्मक्षण में ही उत्पन्न होती है; (4) जिस समय, जिस पर्याय का उत्पाद होगा, उसी समय वही होगी; (5) क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि-आदि बातों का निर्णय योग्यता के मानने से होता है।

प्रश्न 21-योग्यता माननेवाले को क्या-क्या प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं ?

उत्तर - (1) इससे यह हुआ; (2) यह हो, यह न हो; (3) ऐसा क्यों ? - आदि प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं।

जय महावीर-जय महावीर

4

कारण-कार्य रहस्य

निमित्तकारण : स्वरूप एवं प्रयोजन

प्रश्न 1- निमित्तकारण किसे कहते हैं ?

उत्तर - जो पदार्थ, स्वयं स्वतः कार्यरूप परिणमित न हो, परन्तु कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर आरोप आ सके, उस पदार्थ को निमित्तकारण कहते हैं। जैसे, घड़े की उत्पत्ति में कुम्भकार, दण्ड, चक्र आदि निमित्तकारण हैं।

प्रश्न 2 - क्या निमित्त, सच्चा कारण है ?

उत्तर - निमित्त, सच्चा कारण नहीं है; वह अकारणवत्-अहेतुवत् है, क्योंकि वह उपचारमात्र अथवा व्यवहारमात्र कारण है।

प्रश्न 3 - निमित्त के पर्यायवाची नाम बताओ ?

उत्तर - निमित्तमात्र, असर, प्रभाव, बलाधान, प्रेरक, सहायक इन सब शब्दों का अर्थ, निमित्त है।

प्रश्न 4 - आपने जो निमित्त के पर्यायवाची नाम बताये, यह किस शास्त्र में आये हैं ?

उत्तर - श्री तत्त्वार्थसार, तीसरा अधिकार, श्लोक 43 में आये हैं।

प्रश्न 5 - जैनेन्द्र-सिद्धान्तकोष, भाग दो, पृष्ठ 610 में निमित्त के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या बताये हैं ?

उत्तर - कारण; प्रत्यय; हेतु; साधन; सहकारी; उपकारी;

उपग्राहक; आश्रय; आलम्बन; अनुग्राहक; उत्पादक; कर्ता; हेतुकर्ता; प्रेरक; हेतुमत; अभिव्यंजक- ये सब निमित्त के पर्यायवाची शब्द हैं।

प्रश्न 6 - निमित्तकारणों के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद हैं (1) प्रेरकनिमित्त, और (2) उदासीननिमित्त।

प्रश्न 7- प्रेरकनिमित्त किसे कहते हैं ?

उत्तर - (1) गमनक्रियावाले (इसमें क्षेत्र से क्षेत्रान्तर मात्र ही लेना है) जीव-पुद्गल, और (2) इच्छादि (क्रोध, मान, माया, लोभ) वाले जीव, प्रेरकनिमित्त कहलाते हैं।

प्रश्न 8 - प्रेरक का अर्थ क्या है ?

उत्तर - अपने में प्रकृष्टरूप से इरण और प्रेरणा करे, वह प्रेरक है।

प्रश्न 9- इच्छावाले और गमनक्रियावाले जीवों से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - (1) कोई मुनि हैं; उन्हें किसी धर्मलोभी जीव को उपदेश देने का विकल्प आवे, तो वह (मुनि) इच्छादिवाले निमित्त कहलाये, (2) अरहन्तभगवान इच्छादिवाले निमित्त नहीं हैं, परन्तु गमनक्रियावाले निमित्त हैं।

प्रश्न 10 - सिद्धभगवान को इच्छा नहीं है और गमन भी नहीं है, तब सिद्धभगवान कौन से निमित्त कहलायेंगे ?

उत्तर - सिद्धभगवान, उदासीननिमित्त कहलायेंगे।

प्रश्न 11 - क्या प्रेरकनिमित्त, उपादान में कुछ करता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं! प्रेरकनिमित्त, जबरन उपादान में कार्य कर देते हैं या प्रभाव आदि डाल सकते हैं - ऐसा नहीं समझना,

क्योंकि दोनों पदार्थों का (उपादान-निमित्त का) एक-दूसरे में अभाव है। प्रेरकनिमित्त, उपादान को प्रेरणा नहीं करता।

प्रश्न 12- उदासीननिमित्त किसे कहते हैं ?

उत्तर - धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश और कालादि निष्क्रिय (गमनक्रियारहित) या रागरहित द्रव्यों को उदासीननिमित्त कहते हैं।

प्रश्न 13- जब निमित्त, उपादान में कुछ करता ही नहीं है, तब प्रेरकनिमित्त और उदासीननिमित्त - ऐसा भेद क्यों डाला है ?

उत्तर - निमित्तों के उपभेद बताने के लिए किन्हीं निमित्तों को प्रेरक और किन्हीं को उदासीन कहा जाता है, किन्तु सर्व प्रकार के निमित्त, उपादान के लिए तो 'धर्मास्तिकायवत् उदासीन ही हैं।' निमित्त के भिन्न-भिन्न प्रकारों का ज्ञान कराने के लिए ही, उसके दो भेद किये गये हैं।

प्रश्न 14- निमित्त के दूसरे प्रकार के कितने भेद हैं ?

उत्तर - दो भेद हैं। सद्भावरूप निमित्त और अभावरूप निमित्त।

प्रश्न 15 - सद्भावरूप निमित्त और अभावरूप निमित्त से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - सद्भाव निमित्त, अस्तिरूप है और अभावरूप निमित्त, नास्तिरूप है।

प्रश्न 16 - सर्व प्रकार के निमित्त धर्मास्तिकायवत् ही हैं, ऐसा किस शास्त्र में कहाँ आया है ?

उत्तर - 'नाज्ञो विज्ञत्वमायाति, विज्ञो नाज्ञत्वमृच्छति।
निमित्तमात्र मन्यस्तु, गतेधर्मास्तिकायवत्॥ 35॥'

अर्थात् :— अज्ञानी, विशेष प्रकार के ज्ञानभाव को प्राप्त नहीं करता और विशेष ज्ञानी, अज्ञानपने को प्राप्त नहीं करता। गति को जिस प्रकार धर्मास्तिकाय निमित्त है; उसी प्रकार अन्य तो निमित्तमात्र है। *[श्री इष्टोपदेश, श्लोक 35]*

(2) चैतन्यस्वभाव के कारण जानने और देखने की क्रिया का जीव ही कर्ता है। जहाँ जीव है, वहाँ चार अरूपी अचेतनद्रव्य भी हैं, तथापि वे, जिस प्रकार जानने और देखने की क्रिया के कर्ता नहीं हैं; उसी प्रकार जीव के सम्बन्ध में रहे हुए कर्म, नोकर्मरूप पुद्गल भी उस क्रिया के कर्ता नहीं हैं। *[श्री पञ्चास्तिकाय, गाथा 122 की टीका से]*

प्रश्न 17 – 'कुम्हार ने घड़ा बनाया' इस पर निमित्त की परिभाषा लगाओ ?

उत्तर – कुम्हार स्वयं तो घड़ेरूप परिणमित न हो, परन्तु घड़े की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस (कुम्हार) पर आरोप आ सके, उस पदार्थ को (कुम्हार को) निमित्तकारण कहते हैं।

प्रश्न 18 – जीव ने कर्म बाँधा, इस पर निमित्त की परिभाषा लगाओ ?

उत्तर – जीव, स्वयं तो कर्मबन्धरूप परिणमित न हों, परन्तु कर्मबन्ध की अवस्था में अनुकूल होने का जिस पर (अज्ञानी जीव पर) आरोप आ सके, उस पदार्थ को (अज्ञानी जीव को) निमित्तकारण कहते हैं।

प्रश्न 19 – (1) स्त्री ने रोटी बनायी; (2) दर्शनमोहनीय के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व हुआ; (3) केवलज्ञान से केवलज्ञानावरणीय का अभाव हुआ; (4) मैंने बिस्तरा उठाया; (5) दर्जी ने कपड़े बनाये; (6) दिव्यध्वनि सुनने से सम्यग्ज्ञान

की प्राप्ति हुई; (7) ज्ञेय से ज्ञान होता है; (8) मैंने मकान बनाया; (9) धर्मद्रव्य मुझे चलाता है; (10) अधर्मद्रव्य मुझे ठहराता है; (11) आकाशद्रव्य जगह देता है; (12) कालद्रव्य ने मुझे परिणमाया; (13) ज्ञानावरणीकर्म के क्षयोपशम से ज्ञान का उघाड़ होता है; (14) मैं हँसा; (15) मैं बोला; (16) मैं चला; (17) मैंने कपड़े पहिने; (18) मैंने पलंग बनाया; (19) मैंने हलुआ बनाया; (20) मैं उठा - आदि वाक्यों में निमित्त की परिभाषा लगाकर बताओ ?

उत्तर - (1) स्त्री स्वयं स्वत: रोटीरूप तो परिणमित न हो, परन्तु रोटी की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर (स्त्री पर) आरोप आ सके, उस पदार्थ को (स्त्री को) निमित्तकारण कहते हैं। इसी प्रकार अन्य उन्नीस वाक्यों पर पूर्व प्रश्न के अनुसार लगाकर अभ्यास करो।

प्रश्न 20- 'गुरु उपदेश निमित्त बिन, उपादान बलहीन।
ज्यों नर दूजे पाँव बिन, चलवे को आधीन॥'

अर्थात् :— गुरु के उपदेशरूप निमित्त के बिना, उपादान (शिष्यादि) बलहीन है, जैसे कि दूसरे पाँव के बिना, मनुष्य चल नहीं सकता है ? क्या यह मान्यता सत्य है -

उत्तर - यह मान्यता सत्य नहीं है — ऐसा बतलाने के लिये श्रीगुरु दोहे से उत्तर देते हैं कि —

'ज्ञान नैन किरिया चरन, दोऊ शिवमग धार।
उपादान निहचै जहाँ, तहाँ निमित्त व्योहार॥'

अर्थात् :— सम्यग्दर्शन-ज्ञानरूप नेत्र और स्थिरतारूप चरण लीनतारूप क्रिया - दोनों मिलकर मोक्षमार्ग जानो। जहाँ उपादानरूप

निश्चयकारण होता है, वहाँ निमित्तरूप व्यवहारकारण होता ही है।

तात्पर्य यह है कि उपादान तो निश्चय, अर्थात् सच्चा कारण है और निमित्त तो मात्र व्यवहार, अर्थात् उपचारकारण है; सच्चा कारण नहीं है; इसीलिए तो उसे अकारणवत् (अहेतुवत्) कहा है। उसे उपचार (आरोपित) कारण इसलिए कहा है कि वह उपादान का कुछ कार्य करता-कराता नहीं है, तथापि कार्य के समय उस पर अनुकूलता का आरोप आता है; इस कारण उसे उपचारमात्र कहा है। सम्यदर्शन-सम्यग्ज्ञान और चारित्ररूप लीनता को मोक्षमार्ग जानो — ऐसा कहा, उसमें शरीराश्रित उपदेश-उपवासादिक क्रिया और शुभरागरूप व्यवहार को मोक्षमार्ग न जानो, यह बात आ जाती है।

'उपादान निज गुण जहाँ, तहाँ निमित्त पर होय।
भेदज्ञान परमान विधि, बिरला बूझे कोय॥'

अर्थात् :— जहाँ निज शक्तिरूप उपादान हो, वहाँ पर निमित्त होता ही है, उसके द्वारा भेदज्ञान प्रमाण की विधि (व्यवस्था) हैं। यह सिद्धान्त कोई विरले ही समझते हैं।

जहाँ उपादान की योग्यता हो, वहाँ नियम से निमित्त होता ही है। निमित्त की प्रतीक्षा करनी पड़े - ऐसा नहीं होता; और निमित्त को हम जुटा सकते हैं— ऐसा कभी भी नहीं होता। निमित्त की प्रतीक्षा करनी पड़ती है या उसे मैं ला सकता हूँ— ऐसी मान्यता, परपदार्थ में अभेदबुद्धि, अर्थात् अज्ञानसूचक है। उपादान और निमित्त, दोनों असहायरूप स्वतन्त्र हैं, यह उनकी मर्यादा है।

'उपादान बल जहँ तहाँ, नहिं निमित्त को दाव।
एक चक्र सौ रथ चलै, रवि को यहि स्वभाव॥'

अर्थात् :— जहाँ देखो, वहाँ उपादान का ही बल है; (निमित्त

होता है) परन्तु निमित्त का (कार्य करने में) कोई भी दाव (बल) नहीं है। एक चक्र से रवि का (सूर्य का) रथ चलता है, वह उसका स्वभाव है। [उसी प्रकार प्रत्येक कार्य, उपादान की योग्यता से (सामर्थ्य से) ही होता है।]

प्रश्न 21- 'हौ जानै था एक ही, उपादान सों काज।
थकै सहाई पौन बिन, पानी माँहि जहाज॥'

अर्थात् :— अकेले उपादान से कार्य होता है तो पवन की सहायता के बिना जहाज पानी में क्यों नहीं चलता?

उत्तर - 'सधै वस्तु असहाय जहँ, तहँ निमित्त है कौन।
ज्यों जहाज परवाह में, तिरै सहज बिन पौन॥'

अर्थात् :—जहाँ प्रत्येक वस्तु स्वतन्त्ररूप से अपनी अवस्था को (कार्य को प्राप्त करती है, वहाँ निमित्त कौन है? जिस प्रकार जहाज, प्रवाह में सहज ही बिना पवन के तैरता है।)

आशय यह है कि जीव और पुद्गलद्रव्य, शुद्ध या अशुद्ध अवस्था में स्वतन्त्ररूप से ही अपने में परिणमन करते हैं। अज्ञानी जीव भी स्वतन्त्ररूप से निमित्ताधीन होकर परिणमन करता है; कोई निमित्त उसे आधीन नहीं कर सकता।

'उपादान विधि निर्वचन, है निमित्त उपदेश।
बसे जु जैसे देश में, करै सु तैसे भेष॥'

अर्थात् :—उपादान का कथन निर्वचन हैं; (अर्थात्, एक 'योग्यता' द्वारा ही होता है) उपादान अपनी योग्यता से अनेक प्रकार से परिणमन करता है, तब उपस्थित निमित्त पर भिन्न-भिन्न कारणपने का आरोप (भेष) आता है; उपादान की विधि निर्वचन होने से, निमित्त द्वारा यह कार्य हुआ — ऐसा व्यवहार से कहा जाता है।

उपादान जब जैसा कार्य करता है, तब वैसे कारणपने का आरोप (भेष) निमित्त पर आता है; जैसे कि कोई वज्रकायवान मनुष्य, सातवें नरकगति के योग्य मलीनभाव धारण करता है, तो वज्रकाय पर नरक के कारणपने का आरोप आता है, और यदि जीव, मोक्ष के योग्य निर्मलभाव करता है तो उस वज्रकाय पर, मोक्ष के कारणपने का आरोप आता है। इस प्रकार उपादान के कार्य अनुसार, निमित्त में कारणपने का भिन्न-भिन्न आरोप किया जाता है। इससे ऐसा सिद्ध होता है कि निमित्त से कार्य नहीं होता, परन्तु कथन होता है; इसलिए उपादान, सच्चा कारण है और निमित्त, आरोपितकारण है। वास्तव में तो निमित्त ऐसा प्रसिद्ध करता है कि — नैमित्तिक, स्वतन्त्र अपने कारण से परिणमन कर रहा है, तो उपस्थिति दूसरी अनुकूल वस्तु को निमित्त कहा जाता है।

प्रश्न 22 - हम निमित्त मिलावें या नहीं ?

उत्तर - कोई किसी भी द्रव्य को मिला नहीं सकता, क्योंकि सब द्रव्य पृथक्-पृथक् हैं। निमित्त मिलाने की बुद्धि, मिथ्यादृष्टियों की है।

प्रश्न 23 - हम निमित्त क्यों नहीं मिला सकते हैं ?

उत्तर - (1) निमित्त और उपादान के कार्य का एक ही समय है; (2) निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध, दो स्वतन्त्र द्रव्यों के एक समय की पर्यायों में ही होता है; (3) छद्मस्थ एक समय की पर्याय पकड़ नहीं सकता है; (4) एक द्रव्य की पर्याय, दूसरे द्रव्य की पर्याय में अकिंचित्कर है; (5) किस समय, किस द्रव्य का परिणमन नहीं होता ? सबका ही होता है। इसलिए निमित्त मिलाने की बुद्धि, अनन्त संसार का कारण है।

प्रश्न 24 - निमित्त का ज्ञान क्यों कराते हैं ?

उत्तर - (1) मिथ्यादृष्टियों ने अनादि से एक-एक समय करके

निमित्त का आश्रय माना है। (2) निमित्त परद्रव्य है, उससे तेरा सम्बन्ध नहीं है - ऐसा ज्ञान करके, स्वभाव का आश्रय ले, तो तेरा भला हो। (3) निमित्त का आश्रय छुड़ाने के लिए, निमित्त का ज्ञान कराया है। (4) जहाँ उपादान होता है, वहाँ निमित्त होता ही है; इसलिए निमित्त का ज्ञान कराया है।

प्रश्न 25 - निमित्त और उपादान के विषय में क्या-क्या बातें याद रखनी चाहिए ?

उत्तर - (1) जब तत् समय की योग्यतावाला क्षणिक-उपादानकारण होता है, वहाँ पर नियम से त्रिकाली उपादानकारण; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादानकारण और निमित्तकारण नियम से होता है; इनमें से कोई न होवे, ऐसा होता ही नहीं है। (2) उपादान का कार्य, उपादान से ही होता है, निमित्त से नहीं। (3) जितने भी प्रकार के निमित्त हैं, वे सब उपादान के लिए मात्र धर्मद्रव्य के समान ही हैं। (4) जब उपादान होता है, तब निमित्त होता ही है - ऐसी वस्तुस्थिति है। (5) निमित्तकारण, उपादान के प्रति निश्चय से (वास्तव में) अकिंचित्कर (कुछ न करनेवाला है); इसीलिए उसे निमित्तमात्र, बलाधानमात्र, सहायमात्र, अहेतुवत् आदि शब्दों द्वारा सम्बोधित किया जाता है। (6) किसी भी समय उपादान में निमित्त कुछ भी नहीं कर सकता है; निमित्त, उपादान में कुछ करता है - ऐसी बुद्धि, निगोद का कारण है। (7) उपादान के अनुकूल ही उचित निमित्तकारण होता है। (8) निमित्तकारण आये, तभी उपादान में कार्य होता है - ऐसी मान्यता मिथ्या है। (9) उपादान -निमित्त दोनों एक साथ अपने-अपने कारण से होते हैं। (10) कार्य, उपादान से ही होता है; निमित्त की अपेक्षा कथन होता है - ऐसा पात्र जीव जानता है।

प्रश्न 26 - अज्ञानी क्या देखते हैं ?

उत्तर - विशेष को देखते हैं; सामान्य को नहीं देखते हैं।

प्रश्न 27 - मात्र विशेष का देखने से, और सामान्य को नहीं देखने से क्या होता है ?

उत्तर - आस्रव-बन्ध करता हुआ, चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद में चला जाता है।

प्रश्न 28 - ज्ञानी क्या देखते हैं ?

उत्तर - सामान्य को देखते हैं।

प्रश्न 29 - सामान्य को देखने से क्या होता है ?

उत्तर - संवर-निर्जरा की प्राप्ति करके, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति करता है।

प्रश्न 30 - निमित्त क्या बताता है ?

उत्तर - निमित्त, उपादान की प्रसिद्धि करता है। जैसे, पानी का लोटा यह बतलाता है कि लोटा तो पीतल का है; पानी का नहीं; उसी प्रकार निमित्त कहता है कि जैसा मैं कहता हूँ, उसे झूठा मानना और उपादान जो कहता है, उसे सत्य मानना क्योंकि मैं किसी को किसी में मिलाकर कथन करता हूँ; मेरे श्रद्धान से मिथ्यात्व होगा और उपादान, किसी को किसी में मिलाकर निरूपण नहीं करता, उसके श्रद्धान से सम्यक्त्व होता है। जहाँ मेरी अपेक्षा (निमित्त की अपेक्षा) कथन किया हो, उसका अर्थ 'ऐसा है नहीं, निमित्तादि की अपेक्षा कथन किया है' - ऐसा जानना। निमित्त, पात्र जीव को ऐसा ज्ञान कराता है।

प्रश्न 31 - उपादान क्या बताता है ?

उत्तर - उपादान कहता है कि जो मैं कहता हूँ, उसे सत्य मानना;

निमित्त की बात झूठ मानना, क्योंकि मैं किसी को किसी में मिलाकर निरूपण नहीं करता; मेरे श्रद्धान से सम्यक्त्वादि की प्राप्ति होकर क्रम से मोक्षलक्ष्मी को प्राप्ति होती है और निमित्त, किसी को किसी में मिलाकर निरूपण करता है; उसके श्रद्धान से चारों गतियों मे घूमकर निगोद को प्राप्त होगा। जहाँ मेरी अपेक्षा (उपादान की अपेक्षा) कथन किया हो उसे 'ऐसा ही है'- ऐसा श्रद्धान करना। ऐसा पात्र जीव को उपादान, ज्ञान कराता है।

प्रश्न 32 - अज्ञानी कहते हैं कि ज्ञानी, निमित्त को नहीं मानते क्योंकि वे निमित्त से उपादान में कुछ होना नहीं मानते हैं ?

उत्तर - जैसे, अन्य मतावलम्बी कहते हैं कि जैनमतावलम्बी, ईश्वर को नहीं मानते हैं, क्योंकि वे ईश्वर को, उत्पन्न करनेवाला, रक्षा करनेवाला, पापियों को नष्ट करनेवाला नहीं मानते हैं; उसी प्रकार वर्तमान में दिगम्बरधर्मी नाम धराकर कहते हैं कि ज्ञानी, निमित्त की नहीं मानते हैं; अज्ञानियों की यह बात यथार्थ नहीं है।

प्रश्न 33 - क्या वास्तव में ज्ञानी निमित्त को नहीं मानते हैं ?

उत्तर - वास्तव में ज्ञानी ही निमित्त को मानते हैं, क्योंकि ज्ञानी कहते हैं कि निमित्त अपना कार्य शत-प्रतिशत अपने में करता है और उपादान, शत-प्रतिशत अपना कार्य अपने में करता है - ऐसा स्वतन्त्र निमित्त-नैमत्तिकसम्बन्ध है। खोटी दृष्टि से शास्त्र पढ़नेवाले अज्ञानी कहते हैं कि निमित्त, उपादान में कुछ करता है - यदि ऐसा मानो तो हम तुम्हारा निमित्त को मानना माने।

प्रश्न 34 - निमित्त, उपादान में कुछ करता है - ऐसा माना जाए तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - उसने निमित्त को निमित्त न मानकर, उपादान माना।

प्रश्न 35 – यह जीव, संसार में क्यों भ्रमण कर रहा है ?

उत्तर – निमित्त को निमित्त न मानकर, परन्तु निमित्त को उपादान मानकर संसार में भ्रमण कर रहा है।

प्रश्न 36 – क्या निमित्त नहीं है ?

उत्तर – (1) निमित्त है; (2) निमित्त जाननेयोग्य है; (3) आश्रय करनेयोग्य नहीं है।

प्रश्न 37 – निमित्त का प्रभाव पड़ता है – यह मान्यता किसकी है ?

उत्तर – अज्ञानी मिथ्यादृष्टियों की है।

प्रश्न 38 – आज कल के पण्डित कहते हैं कि निमित्त के बिना, काम नहीं होता; गुरु बिना, ज्ञान नहीं होता; कर्म का अभाव हुए बिना, मोक्ष नहीं होता है; शुभभाव करे तो धर्म की प्राप्ति हो – क्या यह उनका कहना गलत है ?

उत्तर – बिल्कुल गलत है – क्योंकि निमित्त के बिना, काम नहीं होता – आदि मान्यताएँ अन्य मतों की हैं। दिगम्बरधर्म की आड़ में अन्य मत की पुष्टि करनेवाले चारों गतियों में घूमकर निगोद के पात्र हैं।

प्रश्न 39 – उपादान और निमित्त, किस नय का कथन है ?

उत्तर – उपादान, निश्चयनय का कथन है और निमित्त, व्यवहारनय का कथन है।

प्रश्न 40 – याद रखनेयोग्य बातें क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय का व्यय होकर जो उत्पादरूप पर्याय होती है, वह द्रव्य में होनेयोग्य होवे, वह ही होती है; अन्य नहीं होती है। (2) जो स्वयं स्वत: कार्य करने में असमर्थ

है, उसका पर कुछ भी नहीं कर सकता है और जो स्वतः अपना कार्य करने में समर्थ है, उसका भी पर कुछ नहीं कर सकता है।

प्रश्न 41 - मुक्तदशा होने पर, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का क्या नाम है और क्या वह नियम से होता है ?

उत्तर - उसका नाम अयोगीकेवली चौदहवाँ गुणस्थान है और वह नियम से होता है।

प्रश्न 42 - कोई मात्र सामान्यअंश को ही उपादान कहे, तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - वह उपादान का स्वरूप न जाननेवाला, वेदान्तमत-वाला है।

प्रश्न 43 - कोई मात्र विशेषअंश को ही उपादान कहे, तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - वह उपादान का स्वरूप न जाननेवाला, बौद्धमतवाला है।

प्रश्न 44 - उपादान और निमित्त, कारण हैं या कार्य हैं ?

उत्तर - दोनों कारण हैं; कार्य नहीं हैं।

प्रश्न 45 - निमित्त और नैमित्तिक, कारण हैं या कार्य हैं ?

उत्तर - निमित्त, कारण है और नैमित्तिक, कार्य है।

प्रश्न 46 - पर्याय, नियत है या अनियत है ?

उत्तर - पर्याय स्वयं से नियत है।

प्रश्न 47 - पर्याय, नियत है - जरा स्पष्ट करो ?

उत्तर - तीन काल के जितने समय हैं, उतनी ही एक-एक गुण में पर्यायें होती हैं। उसे जरा भी आगे-पीछे नहीं किया जा सकता है,

क्योंकि एक पर्याय को आगे-पीछे करना माने तो गुण-द्रव्य के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होगा।

प्रश्न 48 - प्रत्येक कार्य, क्रमबद्ध और निश्चित है तो निमित्त मिलाने की बात कहाँ से आयी ?

उत्तर - (1) जब निश्चयकारण उपादान के कार्यरूप परिणमित होने का काल होता है, तब निमित्त की उपस्थिति स्वयंमेव होती है - ऐसा वस्तु का स्वभाव है। (2) जो जीव, निमित्त मिलाने के प्रयत्न में लगे रहते हैं, उन्हें धर्म की प्राप्ति नहीं होगी, क्योंकि निमित्त मिलाना पड़ता नहीं है, परन्तु होता है। (3) निमित्त मिलाने की बात निगोद से (मिथ्यात्व से) आयी है, क्योंकि प्रत्येक कार्य एक समय जितना होने से उसका (कार्य का) निमित्त के साथ एक समय का सम्बन्ध है। कार्य होने से पहले निमित्त किसे कहना और मिलाना कैसे ?

प्रश्न 49 - उपादान और निमित्त को जानने से क्या फल आना चाहिए ?

उत्तर - (1) व्यवहार से मोह छोड़ना; (2) व्यवहारनय में अविरोधरूप से मध्यस्थ रहना; (3) त्रिकाली उपादान के द्वारा मोह का अभाव करना; (4) मैं पर का नहीं हूँ, पर मेरे नहीं हैं - ऐसा स्व-पर का परस्पर स्व-स्वामीसम्बन्ध को त्याग देना; (5) मैं एक आत्मा ही हूँ; अनात्मा नहीं हूँ; (6) अपने में अपने को एकाग्र करना; (7) ध्रौव्य के लिए शुद्ध आत्मा ही उपलब्ध करनेयोग्य है; (8) अध्रुव शरीरादि उपलब्ध करनेयोग्य नहीं हैं; ***[श्री प्रवचनसार, गाथा 190 से 193 तके के शब्दों में]*** - यह फल आना चाहिए।

प्रश्न 50- कौनसा उपादानकारण हो, तब कार्य की उत्पत्ति नियम से होती हैं ?

उत्तर - उस समय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण हो, तब

नियम से कार्य की उत्पत्ति होती ही है।

प्रश्न 51 - पहले कारण या कार्य ?

उत्तर - वास्तव में सच्चे कारण-कार्य का एक ही समय होता है; तब फिर पहले कारण और फिर कार्य — ऐसा प्रश्न ही नहीं है।

प्रश्न 52 - उपादान के लिए और निमित्त के लिए आचार्यों ने क्या शब्द प्रयोग किया है ?

उत्तर - उपादान को 'अनुरूप' और निमित्त को 'अनुकूल' शब्द बताया है।

प्रश्न 53 - पर्याय का कारण, पर तो है नहीं, परन्तु द्रव्य भी कारण नहीं और अनन्तपूर्वक्षणवर्तीपर्याय भी कारण नहीं है; मात्र उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है- इसकी सिद्धि कैसे हो ?

उत्तर - देखो दरी, लड्डू, चश्मा, पुस्तक-यह चारों पुद्गल हैं। इन सब में वर्णगुण है; सब की अलग-अलग पर्याय क्यों है? वर्णगुण तो सब में है; इसलिए मानना पड़ेगा कि मात्र उस समय पर्याय की योग्यता ही कारण है।

प्रश्न 54 - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादान-कारण को जानने से क्या लाभ है ?

उत्तर - (1) जगत में जो-जो कार्य होता है, वह उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ही होता है; (2) पर तो उसका कारण है ही नहीं; (3) द्रव्य भी उसका करण नहीं है; (4) अनन्तर-पूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण भी सच्चा कारण नहीं है; (5) उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादानकारण ही सच्चा कारण और कार्य है - ऐसा जानने से अनादि काल से पर में कर्ता-भोक्ता की मिथ्याबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 55 - क्या निमित्त, उपादान में कुछ करता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं करता है, क्योंकि दोनों का स्वचतुष्ट्य पृथक्-पृथक् है।

प्रश्न 56- सोनगढ़ में निश्चय की बात तो ठीक है, परन्तु व्यवहार की बात ठीक नहीं है - क्या यह बात सत्य है ?

उत्तर - किसी सेठ के एक पुत्र था। उसे जवानी में वेश्या सेवन का व्यसन पड़ गया। जब सेठ ने अपने पुत्र से शादी की बात कही तो वह कहने लगा, मैं शादी नहीं कराऊँगा। सेठ ने सोचा - यह कैसे हो सकता है ? सेठ ने अच्छे खानदान की एक सुन्दर कन्या से उसकी सगाई कर दी। लड़का कहता है कि मुझे शादी नहीं करनी है, क्योंकि मैं उसका मुँह देखूँगा, तो अन्धा हो जाऊँगा। तब सेठ ने लड़कीवालों को बुलाकर कहा कि हमारे यहाँ लड़के की आँख पर पट्टी बाँध कर फेरे होते हैं - ऐसा रिवाज है।

लड़कीवाले सहमत हो गये और शादी हो गयी। लड़का घर में आँखों पर पट्टी बाँधकर आवे, तुरन्त चला जावे। लड़की होशियार थी। उसे पता चला, मेरा पति वेश्यागामी है और वेश्या ने उसे कहा है कि तू अपनी पत्नी का मुँह देखेगा तो अन्धा हो जाएगा।

एक दिन लड़की ने अपने पति का हाथ पकड़कर कहा, आपको मालूम है कि आप मुझे देखें तो अन्धे हो जाओगे। आप मेरे कहे से एक आँख पर पट्टी बँधी रहने दो और एक आँख से मुझे देख लो। उसने ऐसा ही किया, किन्तु आँख तो फूटी नहीं। तब उसने कहा अब दूसरी पर पट्टी बाँध लो और दूसरी आँख से मुझे देखो, तब वह भी नहीं फूटी। तब उसने कहा - अब दोनों आँखों से मुझे देखो; तो उसने जब दोनों पट्टियों को उताकर देखा तो आँखें फूटी नहीं, किन्तु वेश्या से दृष्टि उठ गयी; उसी प्रकार सोनगढ़ का निश्चय तो

ठीक है, तो भाई! वहाँ जाकर देख, कैसा व्यवहार सोनगढ़ में है। लाखों रुपयों का दान होता है, नाम कोई लिखाता नहीं। दो बार प्रवचन, पूजा-भक्ति होती है। देख! कन्दमूल कोई खाता नहीं, रात्रि को पानी पीता नहीं। ज्यादातर पति-पत्नी ब्रह्मचर्य से रहते हैं। लगभग साठ बहिनें आजन्म ब्रह्मचर्य से रहती हैं। इसलिए हे भाई! निश्चय तो सोनगढ़ से सीखना पड़ेगा, परन्तु व्यवहार भी सोनगढ़ से सीखना पड़ेगा। जहाँ पर व्यवहार को हेय कहा जाता है, देखो! वहाँ का व्यवहार कैसा है! इसलिए सोनगढ़ की निश्चय की बात ठीक है और व्यवहार की बात ठीक नहीं है, यह बात बिल्कुल झूठ है।

प्रश्न 57 - निमित्तकर्ता से क्या तात्पर्य है?

उत्तर - इसने ऐसा किया तो ऐसा हुआ - ऐसी मान्यता होना, यह निमित्तकर्ता से तात्पर्य है।

प्रश्न 58 - निमित्तकर्ता की मान्यता को उदाहरणों से समझाइये?

उत्तर - (1) मैंने शुभभाव किया तो जीव बच गया। (2) मैंने अशुभभाव किया तो जीव मर गया। (3) मैंने गाली दी तो उसे क्रोध आया। (4) जीव ने विकार किया तो कर्मबन्ध हुआ। (5) मैंने भाव किये तो ऐसे-ऐसे कार्य हुए - आदि निमित्तकर्ता के उदाहरण हैं।

प्रश्न 59 - निमित्तकर्ता मानने का क्या फल है?

उत्तर - चारों गतियों में घूमकर निगोद, निमित्तकर्ता मानने का फल है।

नोट *- निमित्त-उपादान / कारण-कार्य का सही स्वरूप समझने के लिए पूज्य गुरुदेवश्री के प्रवचन ग्रन्थ (1) वस्तुविज्ञानसार; (2) मूल में भूल; (3) स्वतन्त्रता की घोषणा; (4) स्वाधीनता का शंखनाद का अध्ययन करना चाहिए। सभी पुस्तकें तीर्थधाम मङ्गलायतन से प्राप्त की जा सकती हैं।*

5

कारण-कार्य रहस्य

निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध : स्वरूप एवं प्रयोजन

प्रश्न 1 - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध किसे कहते हैं ?

उत्तर - जब उपादान स्वयं स्वत: कार्यरूप परिणमित होता है, तब भावरूप (अस्तिरूप) या अभावरूप (नास्तिरूप) किस उचित (योग्य) निमित्तकारण का उसके साथ सम्बन्ध है, यह बतलाने के लिए उस कार्य को नैमित्तिक कहते हैं; इस प्रकार भिन्न-भिन्न पदार्थों के स्वतन्त्र सम्बन्ध को निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध कहते हैं।

प्रश्न 2 - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध किसमें होता है ?

उत्तर - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध दो स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है।

प्रश्न 3 - क्या निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध परतन्त्रता का सूचक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध परस्पर स्वतन्त्रता का सूचक है; परतन्त्रता का सूचक नहीं है। नैमित्तिक के साथ कौन निमित्तरूप पदार्थ है, उसका वह ज्ञान कराता है ?

प्रश्न 4 - कार्य को निमित्त की अपेक्षा क्या कहते हैं ?

उत्तर - नैमित्तिक कहते हैं।

प्रश्न 5 - कार्य को उपादान की अपेक्षा क्या कहते हैं?

उत्तर - उपादेय कहते हैं।

प्रश्न 6 - निमित्त-नैमित्तिक का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, एक ही है या भिन्न-भिन्न है?

उत्तर - निमित्त-नैमित्तिक का द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, भिन्न -भिन्न हैं।

प्रश्न 7 - क्या निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध एक द्रव्य में उसको पर्याय के साथ होता है?

उत्तर - बिल्कुल नहीं! निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध दो पृथक्-पृथक् स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है; एक द्रव्य में उसकी पर्याय के साथ नहीं होता है।

प्रश्न 8 - अनेक निमित्तकारणों में कौन-कौन से भेद पड़ते हैं?

उत्तर - अनेक निमित्तकारणों में जो मुख्य निमित्त हो, उसे अन्तरङ्ग (निमित्त) कारण कहा जाता है और गौण निमित्त हो, उसे बहिरङ्ग निमित्तकारण कहा जाता है।

प्रश्न 9 - जीव ने विकार किया तो कर्मबन्ध हुआ — इसमें निमित्त-नैमित्तिक बताओ?

उत्तर - कर्मबन्ध, नैमित्तिक और जीव का विकार, निमित्त।

प्रश्न 10 - 'कर्मबन्ध हुआ' इसमें कर्म की कितने प्रकार की दशाएँ होती हैं?

उत्तर - प्रकृति-प्रदेश-स्थिति और अनुभाग - चार प्रकार की दशा होती है।

प्रश्न 11- प्रकृति, प्रदेशबन्ध हुआ, इसमें निमित्त-नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर - प्रकृति-प्रदेशबन्ध नैमित्तिक, और योगगुण की विकारी पर्याय, निमित्त है।

प्रश्न 12- स्थिति, अनुभागबन्ध हुआ, इसमें निमित्त-नैमित्तिक कौन हैं ?

उत्तर - स्थिति-अनुभागबन्ध, नैमित्तिक और कषायभाव, निमित्त है।

प्रश्न 13 - कर्मबन्ध हुआ, इसमें पृथक्-पृथक् निमित्त-नैमित्तिक किस प्रकार हुए - जरा स्पष्ट समझाइये ?

उत्तर - (1) प्रकृति-प्रदेशबन्ध हुआ, नैमित्तिक और योगगुण की विकारीपर्याय, निमित्त; (2) स्थिति-अनुभागबन्ध हुआ, नैमित्तिक और कषायभाव, निमित्त।

कर्मबन्धन के लिए आत्मा के योगगुण के विकारीपरिणमन को बहिरङ्ग निमित्तकारण कहा और कर्मबन्धन के लिए जीव के कषायभाव को अन्तरङ्ग निमित्तकारण कहा, परन्तु कर्मबन्धन के लिए दोनों निमित्त, धर्मद्रव्य के समान हैं, तथापि निमित्तों की पहिचान के लिए यह स्पष्ट किया है।

प्रश्न 14- कर्मबन्धन में योग की विकारीपर्याय और कषायभाव कैसे निमित्त हैं ?

उत्तर - वास्तव में दोनों बहिरङ्ग निमित्त हैं।

प्रश्न 15 - आपने कर्मबन्धन के लिए योग के विकारी-परिणमन को बहिरङ्ग निमित्त और कषाय को अन्तरङ्ग निमित्त क्यों कहा है ?

उत्तर - (1) कषाय की मुख्यता बताने के लिए, उसे अन्तरङ्ग निमित्तकारण कहा है और योगगुण के विकारीपरिणमन की गौणता बताने के लिए, उसे बहिरङ्ग निमित्तकारण कहा है।

प्रश्न 16- कर्मबन्धन के लिए अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग निमित्तकारण बताने के पीछे क्या रहस्य है ?

उत्तर - (1) प्रकृति-प्रदेशबन्ध का नैमित्तिकपना अपने उपादान से हुआ; योगगुण के विकारी परिणमन के कारण नहीं। योगगुण में विकारीपरिणमन के कारण प्रकृति-प्रदेशबन्ध का कार्य हुआ - ऐसी श्रद्धा छोड़नी है। (2) स्थिति-अनुभागबन्ध का नैमित्तिकपना अपने उपादान से हुआ; कषाय के कारण नहीं। कषाय का परिणमन होने के कारण, कर्मों में स्थिति अनुभागबन्ध हुआ - ऐसी श्रद्धा छोड़नी है।

प्रश्न 17 - दर्शनमोहनीय के उपशम से औपशमिकसम्यक्त्व की प्राप्ति हुयी - इसमें निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध बताओ ?

उत्तर - औपशमिकसम्यक्त्व की प्राप्ति, नैमित्तिक और दर्शन-मोहनीय का उपशम, निमित्त।

प्रश्न 18 - औपशमिकसम्यक्त्व में दर्शनमोहनीयकर्म का उपशम, निमित्त बताया है। इसके अलावा क्या दूसरा कोई निमित्त भी है ?

उत्तर - सच्चा गुरु, दूसरा निमित्त है।

प्रश्न 19 - दर्शनमोहनीय का उपशम और गुरु, यह दो औपशमिकसम्यक्त्व में निमित्त हुए, इन दोनों निमित्तों को क्या कहा जाता है ?

उत्तर - दर्शनमोहनीय का उपशम, अन्तरङ्गनिमित्त और गुरु, बहिरङ्ग निमित्त कहे जाते हैं।

प्रश्न 20- गुरु जो निमित्त है, उसमें भी कोई भेद है ?

उत्तर - हाँ है; ज्ञानी गुरु का अभिप्राय, अन्तरङ्गनिमित्त और वाणी, बहिरङ्गनिमित्त।

प्रश्न 21- अन्तरङ्गनिमित्त, बहिरङ्गनिमित्त — यह निमित्तों के भेद क्यों किये ?

उत्तर - (1) निमित्तों के उपभेद बताने के लिए भेद किए हैं। (2) सम्यग्दर्शन अपने श्रद्धागुण के परिणमन के कारण हुआ है; निमित्तों के कारण नहीं; (3) जितने भी निमित्त हैं - चाहे अन्तरङ्ग हों या बहिरङ्ग हों, वे सब निमित्त, धर्मद्रव्य के समान ही हैं।

प्रश्न 22- बाई ने रोटी बनायी -इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - रोटी बनी, नैमित्तिक और बाई का राग, निमित्त।

प्रश्न 23 - कर्म के कारण, राग हुआ - इमसें निमित्त-नैमित्तिक बताओ ?

उत्तर - राग हुआ, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीयकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 24- धोबी ने कपड़ा धोया - इसमें निमित्त-नैमित्तिक बताओ ?

उत्तर - कपड़ा धुलना, नैमित्तिक और धोबी का राग, निमित्त।

प्रश्न 25- धर्मद्रव्य, जीव को चलाता है - इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव का चलना, नैमित्तिक और धर्मद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 26- (1) बढ़ई रथ बनता है। (2) मैं रोटी खाता हूँ। (3) कर्मों के अभाव से जीव मोक्ष जाता है। (4) देह से सुख

होता है। (5) मैंने बिस्तर बिछाया। (6) ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम से ज्ञान का उघाड़ होता है। (7) केवलज्ञान, लोकालोक को जानता है। (8) दर्शनमोहनीय के क्षय से क्षायिकसम्यक्त्व होता है।(9) मैंने किताब बनायी।(10) मैंने मेज उठायी। इन सब में निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध लगाओ ?

उत्तर - (1) रथ बनना, नैमित्तिक और बढ़ई का राग, निमित्त। इसी प्रकार बाकी के नौ वाक्यों के उत्तर स्वयं दें।

प्रश्न 27 - सकलचारित्र की प्राप्ति हुई - इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - सकलचारित्र, नैमित्तिक और अनन्तानुबन्धी आदि तीन चौकड़ीरूप द्रव्यकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 28- औपशमिकसम्यक्त्व की प्राप्ति हुई - इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - औपशमिकसम्यक्त्व, नैमित्तिक और दर्शनमोहनीय का उपशम और अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ; द्रव्यकर्म का क्षयोपशमादि, निमित्त।

प्रश्न 29 -मिथ्यात्वदशा हुई-इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - मिथ्यात्वदशा, नैमित्तिक और दर्शनमोहनीयकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 30- बारहवें गुणस्थान में क्षयोपशमदशा है - इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - बारहवें गुणस्थान में क्षयोपशमदशा, नैमित्तिक और ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तरायकर्म का क्षयोपशम, निमित्त।

प्रश्न 31- केवलज्ञान में निमित्त-नैमित्तिक कौन हैं ?

उत्तर - केवलज्ञान, नैमित्तिक और केवलज्ञानावरणीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 32- अरहन्तदशा में सिद्धपद नहीं है - इसमें निमित्त -नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर - अरहन्त को सिद्धपद नहीं होना, नैमित्तिक और चार अघातिकर्म का उदय, निमित्त है।

प्रश्न 33 - सच्चे श्रावकपने में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - सच्चा श्रावकपना, नैमित्तिक और दर्शनमोहनीयसहित अनन्तानुबन्धी और अप्रत्याख्यान — चारित्रमोहनीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 34- जीव की विभावव्यंजनपर्याय में निमित्त-नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर - जीव की विभावव्यंजनपर्याय, नैमित्तिक और शरीर तथा नामकर्म का सद्भाव, निमित्त।

प्रश्न 35- जीव की स्वभावव्यंजनपर्याय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव की स्वभावव्यंजनपर्याय, नैमित्तिक और शरीर तथा नामकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 36 - शुक्ललेश्या में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - शुक्ललेश्या का भाव, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीय-कर्म का मन्द उदय, निमित्त।

प्रश्न 37- नो कषाय में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – नो कषाय का भाव, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीयकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 38 – अकषायभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अकषायभाव, नैमित्तिक और गुणस्थानप्रमाण चारित्र-मोहनीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 39 – शुक्लध्यान में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – शुक्लध्यान, नैमित्तिक और संज्वलन चारित्रमोहनीयकर्म का गुणस्थानानुसार अभाव, निमित्त।

प्रश्न 40– अव्याबाधप्रतिजीवीगुण शुद्ध हुआ – इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अव्याबाधप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और वेदनीयकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 41– अवगाहनप्रतिजीवीगुण शुद्ध हुआ – इसमें निमित्त -नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अवगाहनप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और आयुकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 42 – अगुरुलघुत्वप्रतिजीवीगुण शुद्ध प्रगटा, इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर – अगुरुलघुत्वप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और गोत्रकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 43 – सूक्ष्मत्वप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, प्रगटी, इसमें निमित्त-नैमित्तिक कौन है ?

उत्तर – सूक्ष्मत्वप्रतिजीवीगुण की शुद्धपर्याय, नैमित्तिक और नामकर्म का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 44 - परम ज्ञायकस्वभाव में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - परम ज्ञायकस्वभाव, निरपेक्षस्वभाव है; इसमें निमित्त -नैमित्तिक नहीं होता है, क्योंकि निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध दो स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है।

प्रश्न 45 - क्या द्रव्यकर्म है, इसलिये जीव में दोष है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि दोनों द्रव्यों के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, पृथक्-पृथक् है; इसलिए द्रव्यकर्म है तो जीव में दोष हुआ— ऐसा नहीं है।

प्रश्न 46 - क्या जीव में दोष है, इसलिए द्रव्यकर्म है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं; क्योंकि दोनों पृथक्-पृथक् पदार्थ हैं।

प्रश्न 47- ऐसा कौनसा द्रव्य है, जिसकी पर्याय में निमित्त -नैमित्तिकपना न हो ?

उत्तर - ऐसी किसी भी द्रव्य की पर्याय नहीं है, क्योंकि पर्याय में निमित्त-नैमित्तिकपने का स्वभाव है और स्वभाव का कभी अभाव होता नहीं है।

प्रश्न 48- जीव की अशुद्धदशा में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध क्या है ?

उत्तर - जीव की अशुद्धदशा, नैमित्तिक और द्रव्यकर्म का उदय, निमित्त।

प्रश्न 49- जीव-पुद्गल की गति में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव-पुद्गल का गमन होना, नैमित्तिक और धर्मद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 50 - जीव-पुद्गल की स्थिति में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - जीव-पुद्गल की स्थिति होना, नैमित्तिक और अधर्मद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 51- छहों द्रव्यों को स्थान देने में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - छहों द्रव्यों का अपने-अपने स्थान (क्षेत्र) में रहना, नैमित्तिक और आकाशद्रव्य निमित्त।

प्रश्न 52 - छहों द्रव्यों के परिणमन में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - छहों द्रव्यों का परिणमन, नैमित्तिक और कालद्रव्य, निमित्त।

प्रश्न 53- क्षायिकसम्यग्दर्शन की प्राप्ति में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - क्षायिकसम्यग्दर्शन, नैमित्तिक और सातों कर्मप्रकृतियों का अभाव, अन्तरङ्गनिमित्त।

प्रश्न 54- रागादि का होना -इसमें निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - रागादि का होना, नैमित्तिक और चारित्रमोहनीय का उदय तथा नोकर्म, निमित्त।

प्रश्न 55- छठवें गुणस्थान में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - (अ) शुद्धपरिणति, नैमित्तिक और तीन चौकड़ी कषाय कर्म का अभाव, निमित्त तथा (आ) शुभभाव, नैमित्तिक और संज्वलन क्रोधादि का तीव्र उदय, निमित्त।

प्रश्न 56- सातवें गुणस्थान में निमित्त-नैमित्तिक क्या है ?

उत्तर - (अ) राग का अव्यक्तरूप से सद्‌भाव, नैमित्तिक और संज्वलन-क्रोधादि का मन्द उदय, निमित्त तथा (आ) शुद्धोपयोगदशा, नैमित्तिक और तीन चौकड़ी तथा संज्वलन के तीव्र उदय का अभाव, निमित्त।

प्रश्न 57- जीव का स्वभाव, द्रव्यकर्म के अभावरूप कब होता है ?

उत्तर - जीव के स्वभाव में, द्रव्यकर्म के अभाव के सद्‌भाव का कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि स्वभाव त्रिकाल एकरूप रहता है।

प्रश्न 58 - मोक्षमार्ग में प्रकाश किसका है ?

उत्तर - संवर-निर्जरारूप निश्चयरत्नत्रयरूप जैनधर्म का प्रकाश है।

प्रश्न 59 - क्या उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी का कारण द्रव्यकर्म है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि श्रेणी का कारण उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण है।

प्रश्न 60- एक जीव अनन्त काल पहले मोक्ष गया और एक अब जा रहा है और अन्य आगे जावेंगे - उसका क्या कारण है ?

उत्तर - 'उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान-कारण' है।

प्रश्न 61 - क्या जीव की अशुद्धता में उपादानकारण, द्रव्यकर्म है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिकउपादान सच्चा उपादानकारण है; द्रव्यकर्म, कारण नहीं है।

प्रश्न 62 - निमित्त-नैमित्तिक का स्वरूप जानने से कौनसी मिथ्यामान्यता दूर हो जानी चाहिए ?

उत्तर - एक-दूसरे में करने-कराने की और भोक्ता-भोग्य की मान्यता नष्ट हो जानी चाहिए।

प्रश्न 63 - क्या केवलज्ञानियों को ही पारमार्थिक सुख है ?

उत्तर - हाँ, केवलज्ञानियों को ही पारमार्थिक सुख है - ऐसा ज्ञानी जानते हैं।

प्रश्न 64 - केवलज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है - ऐसा कहीं श्री प्रवचनसार में आया है ?

उत्तर - गाथा 62 में आया कि:—

सूणी घातिकर्म विहीन को सुख, वह सुख उत्कृष्ट है।
श्रद्धे न वह अभव्य है अरु भव्य वह सम्मत करे॥

अर्थात् — जिनके घातिकर्म नष्ट हो गये हैं, उनका सुख (सर्व) सुखों में उत्कृष्ट है। यह सुनकर जो श्रद्धा नहीं करते, वे अभव्य हैं, और जो उसे स्वीकार करते हैं - उसकी श्रद्धा करते हैं, वे भव्य हैं।

प्रश्न 65- पारमार्थिकसुख की शुरुआत कौन से गुणस्थान से होती है ?

उत्तर - चौथे गुणस्थान से पारमार्थिक सुख की शुरुआत होती हैं। जिनको पारमार्थिकसुख की शुरुआत होती है, वे अल्प काल में ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

प्रश्न 66- ज्ञानियों को सुख है और ज्ञान भी है - ऐसा कौन कहते हैं ?

उत्तर - जिन-जिनवर और जिनवरवृषभ कहते हैं।

प्रश्न 67- ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है और ज्ञान भी है - ऐसा जानकर ज्ञानी क्या करते हैं ?

उत्तर - अपने ज्ञायकस्वभाव में विशेष स्थिरता करके, अल्प काल में ही मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

प्रश्न 68 - ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है और ज्ञान भी है; अज्ञानियों को न सुख है और न ज्ञान ही है - सुनकर ऐसा सम्यक्त्व के सन्मुख पात्र जीव क्या करता है ?

उत्तर - सम्यक्त्व के सन्मुख पात्र जीव, अपने ज्ञायकस्वभाव की श्रद्धा करके, क्रम से ज्ञानियों की तरह मोक्ष को प्राप्त करता है।

प्रश्न 69- ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख है और ज्ञान भी है अज्ञानियों को ना सुख है और ना ही ज्ञान है, ऐसा सुनकर अपात्र अज्ञानी क्या करता है ?

उत्तर - भगवान की वाणी का विरोध करके, चारों गतियों में घूमता हुआ निगोद चला जाता है।

प्रश्न 70 - ज्ञानियों को ही पारमार्थिकसुख और ज्ञान क्यों है ?

उत्तर - ज्ञानियों को अपना श्रद्धान-ज्ञान-आचरण होने से तथा वस्तुस्वरूप का ज्ञान होने से पारमार्थिकसुख और ज्ञान, दोनों वर्तते हैं।

प्रश्न 71- अज्ञानियों को पारमार्थिकसुख और ज्ञान क्यों नहीं है ?

उत्तर - अज्ञानियों को अपना श्रद्धान-ज्ञान-आचरण न होने से

तथा वस्तुस्वरूप का ज्ञान न होने से पारमार्थिकसुख और ज्ञान नहीं है।

प्रश्न 72- वस्तुस्वरूप कैसा है?

उत्तर - 'अनादि-निधन वस्तुएँ भिन्न-भिन्न अपनी-अपनी मर्यादासहित परिणमित होती हैं, कोई किसी के आधीन नहीं है, कोई किसी के परिणमित कराने से परिणमित नहीं होती' ऐसा वस्तुस्वरूप है।

प्रश्न 73- 'मैं सुबह उठकर यहाँ आया' - इस वाक्य में वस्तुस्वरूप (निमित्त-नैमित्तिक) किस प्रकार हैं?

उत्तर - (अ) मैं आत्मा अनादि-अनन्त ज्ञायकस्वरूप, अनन्त गुणों का धारी अमूर्तिक प्रदेशों का पुँज हूँ। मुझ आत्मा का अपनी क्रियावतीशक्ति के कारण गमनरूप परिणमन हुआ, फिर स्थिररूप परिणमन हुआ। गमनरूप परिणमन में धर्मद्रव्य, निमित्त है और स्थिररूप परिणमन में अधर्मद्रव्य, निमित्त है। मुझ आत्मा अपने असंख्यात प्रदेशों में रहा। इसमें निमित्त, आकाशद्रव्य है; मुझ आत्मा के अनन्त गुणों में निरन्तर परिणमन उसकी योग्यता से होता है, उसमें निमित्त, कालद्रव्य हैं। (आ) औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्माणशरीर, भाषा और मन का मुझ आत्मा के साथ मात्र एकक्षेत्रावगाहीसम्बन्ध है तथा व्यवहारनय से ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध है। वास्तव में तो ज्ञानपर्याय, ज्ञेय और मुझ आत्मा, ज्ञायक है, परन्तु यह भी भेद है और भेद के लक्ष्य से रागी जीव को राग की उत्पत्ति होती है; अतः मुझ आत्मा ज्ञायक, सो ज्ञायक ही है। इस प्रकार अभेद के लक्ष्य से जीव का कल्याण होता है। अतः मुझ आत्मा ज्ञायक-ज्ञायक।

(इ) औदारिकशरीर, तैजसशरीर, कार्माणशरीर, भाषा और मन

में अनन्त पुद्गल, परमाणु हैं। प्रत्येक परमाणु अपनी-अपनी क्रियावतीशक्ति के कारण गमन करता है, जिसमें धर्मद्रव्य निमित्त है; गमनपूर्वक करके स्थिर होता है, उसमें अधर्मद्रव्य, निमित्त है, और औदारिकशरीर आदि में अनन्त पुद्गल परमाणु अपने-अपने प्रदेश में अवगाहन करते हैं, उसमें निमित्त, आकाशद्रव्य है; औदारिक -शरीर आदि में अनन्त पुद्गल परमाणु हैं और प्रत्येक परमाणु में अनन्न-अनन्त गुण हैं, वे सब अपनी-अपनी योग्यता से परिणमन करते हैं, उसमें कालद्रव्य, निमित्त हैं। यह सब मूर्तिकद्रव्यों का पिण्ड; प्रसिद्ध ज्ञानादि गुणों से रहित; जिनका नवीन संयोग हुआ है - ऐसा औदारिक आदि शरीर (पुद्गल) पर हैं - ऐसी वस्तुस्थिति है। ऐसा वस्तुस्वरूप (निमित्त-नैमित्तिक) जानने-मानने से पात्र जीवों की पर में से कर्तृत्वबुद्धि छूट जाती है। वे उन सबके ज्ञाता-दृष्टा ही रहते हैं। अतः उन्हें सुख और ज्ञान भी प्रति समय रहता है और क्रम से मोक्षरूपी लक्ष्मी के नाथ बन जाते हैं।

प्रश्न 74- पूर्व प्रश्न के अनुसार वस्तुस्वरूप का ज्ञान, अर्थात् निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध के सच्चे ज्ञान और श्रद्धान का फल, भगवान ने क्या बताया है ?

उत्तर - 'भव बन्धन तड़-तड़ टूट पड़े, खिल जावे अन्तर की कलियाँ', अर्थात् अनादि का भव बन्धन समाप्त होकर, क्रम से मोक्ष की प्राप्ति, इसका फल बताया है।

प्रश्न 75- 'मैं सुबह उठकर यहाँ आया' - अज्ञानी इसमें कैसा निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध मानता है।

उत्तर - 'अज्ञानी की मान्यता में, मैं आत्मा था तो शरीर उठकर आया या शरीर था तो मैं आत्मा आया।' इस प्रकार अनन्त परद्रव्यों

में अपनेपने की, ममकारपने की , पर को अपनेरूप करने की, अपने को पररूप करने की मिथ्याबुद्धि पायी जाती है, जिसका फल, निगोद है, अर्थात् उल्टा निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध मानने का फल, निगोद है।

प्रश्न 76- अज्ञानी का अज्ञान दूर करने का उपाय भगवान ने क्या बताया है ?

उत्तर - जिस प्रकार कोई मोहित होकर मुर्दे को जीवित माने या जिलाना चाहे तो आप ही दुःखी होता है तथा उसे मुर्दा मानना और यह जिलाने से जीयेगा नहीं - ऐसा मानना, सो ही दुःख दूर होने का उपाय है। उसी प्रकार मिथ्यादृष्टि, पदार्थों को अन्यथा माने या अन्यथा परिणमित कराना चाहे तो आप ही दुःखी होता है; उन्हें यथार्थ मानना और यह परिणमित कराने से अन्यथा परिणमित नहीं होंगे - ऐसा मानना, सो ही उस दुःख के दूर होने का उपाय है। भ्रमजनित दुःख का उपाय, भ्रम दूर करना ही है। सो भ्रम दूर होने से सम्यक्श्रद्धान होता है। यही सत्य उपाय भगवान ने बताया है।

(श्री मोक्षमार्गप्रकाशक, पृष्ठ 52)

प्रश्न 77- क्या अज्ञानी, सुबह से शाम तक दिखनेवाले पुद्गल के कार्यों का निमित्तकर्ता भी नहीं है ?

उत्तर - वास्तव में सुबह से शाम तक जितने रूपीपदार्थों के कार्य होते हैं, उनका कर्ता पुद्गल ही है। अज्ञानी जीव भी पुद्गल के कार्यों का निमित्तकर्ता नहीं है परन्तु अज्ञानी अज्ञानवश यह मानता है कि मैंने रोटी बनायी, मैंने व्यापार किया, मैं हँसा, मैं सोया आदि विपरीत मान्यताओं में पागल बना रहता है, जिसका फल, परम्परा निगोद है।

प्रश्न 78- अज्ञानी दु:खी क्यों है ?

उत्तर - जड़ की क्रिया अपनी मानने के कारण ही दु:खी है।

प्रश्न 79- ज्ञानी सुखी क्यों है ?

उत्तर -जड़ की क्रिया को अपनी न मानने के कारण ही सुखी है। अपनी ज्ञानक्रिया है -ऐसी श्रद्धा-ज्ञान होने से ही ज्ञानी सुखी है।

प्रश्न 80- जितना जड़ का कार्य है - क्या उसका कर्ता-कर्म और भोक्ता-भोग्य सर्वथा जड़ ही है ?

उत्तर - हाँ, भाई! जड़ का कर्ता-कर्म, भोक्ता-भोग्य सर्वथा जड़ ही हैं; जीव नहीं है।

प्रश्न 81 - क्या अज्ञानी, जड़ के कार्य में निमित्त भी नहीं है ?

उत्तर - अज्ञानी, जड़ के कार्य में निमित्त भी नहीं है, परन्तु जड़ के कार्य मैं करता हूँ - ऐसी मान्यता होने से दु:खी है।

प्रश्न 82- क्या जड़ के कार्य में ज्ञानी का निमित्त-नैमित्तिकपना नहीं है ?

उत्तर - नहीं है, किन्तु मात्र ज्ञेय-ज्ञायकपना व्यवहार से है। अर्थात्, ज्ञान की पर्याय, नैमित्तिक और जड़पदार्थ की पर्याय, निमित्त है।

प्रश्न 83 - श्री मोक्षमार्गप्रकाशक के तीसरे अधिकार में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध के विषय में क्या बताया है ?

उत्तर - मोह के आवेश से उन इन्द्रियों के द्वारा विषय-ग्रहण करने की इच्छा होती है, और उन विषयों का ग्रहण होने पर, उस इच्छा के मिटने से निराकुल होता है, तब आनन्द मानता है। जैसे—कुत्ता, हड्डी चबाता है, उससे अपना लोहू निकले, उसका स्वाद

लेकर ऐसा मानता है कि यह हड्डियों का स्वाद है। उसी प्रकार यह जीव, विषयों को जानता है, उससे अपना ज्ञान प्रवर्तता है; उसका स्वाद लेकर ऐसा मानता है कि यह विषय का स्वाद है, सो विषय में तो स्वाद है नहीं। स्वयं ही इच्छा की थी, उसे स्वयं ही जानकर, स्वयं ही आनन्द मान लिया; परन्तु मैं अनादि-अनन्त ज्ञानस्वरूप आत्मा हूँ—ऐसा निःकेवलज्ञान का (पर से भिन्न अपनी आत्मा का) तो अनुभवन है नहीं।

प्रश्न 87- (1) मैं सुबह उठा; (2) मैं बोला; (3) मैंने रोटी खायी; (4) मैंने रुपया कमाया; (5) मैंने जीवों की रक्षा की; (6) मैं बीमार हूँ; (7)मैं शास्त्र प्रवचन करता हूँ; (8) मैं कपड़े धोता हूँ; (9) मैंने सिनेमा देखा; इन वाक्यों को पूर्व प्रश्न में दिये गये उत्तर के अनुसार समझाइये ? ●●

कारण-कार्य रहस्य

व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध : स्वरूप एवं परिज्ञान से लाभ

प्रश्न 1- व्याप्य व्यापक किसे कहते हैं ?

उत्तर - (1) जो सर्व अवस्थाओं में रहे, वह व्यापक है और एक अवस्था विशेष, (उस व्यापक का) व्याप्य है।

प्रश्न 2 - व्याप्य-व्यापक के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

उत्तर - व्यापक-व्याप्य कहो, कर्ता-कर्म कहो, परिणामी -परिणाम कहो, त्रिकाली उपादान-उपादेय कहो, एक ही बात है।

प्रश्न 3 - द्रव्य-गुण-पर्याय में व्याप्य-व्यापक किसमें है ?

उत्तर - द्रव्य-गुण, व्यापक है, और पर्याय, व्याप्य है।

प्रश्न 4 - क्या व्याप्य-व्यापकपना भिन्न-भिन्न पदार्थों में होता है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि व्याप्य-व्यापकपना तत्स्वरूप में ही, अर्थात् अभिन्न सत्तावान पदार्थों में ही होता है। अतत्स्वरूप में, अर्थात् जिनकी सत्ता भिन्न-भिन्न है - ऐसे पदार्थों में नहीं होता है।

प्रश्न 5 – व्याप्य-व्यापक को जानने से क्या लाभ हैं ?

उत्तर – सामान्य में से विशेष आता है, अर्थात् व्यापक में से व्याप्य आता है; पर से नहीं – ऐसा जानने से ज्ञानी हो जाता है और अनादि से परपदार्थों में जो कर्ता-कर्म माना था, उसका अभाव हो जाता है। जगत का ज्ञाता-दृष्टा साक्षीभूत बन जाता है।

प्रश्न 6 – सम्यग्दर्शन का व्याप्य-प्यापक कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – आत्मा का श्रद्धागुण, व्यापक और सम्यग्दर्शन, व्याप्य है। देव-गुरु-शास्त्र, दर्शनमोहनीय के उपशमादि, व्यापक नहीं हैं।

प्रश्न 7 – केवलज्ञान में व्याप्य-व्यापक कौन है और कौन नहीं है ?

उत्तर – आत्मा का ज्ञानगुण, व्यापक है और केवलज्ञान, व्याप्य है। व्रजवृषभनाराचसंहनन, ज्ञानावरणीय का अभाव, चौथा काल और शुभभाव, व्यापक नहीं हैं।

प्रश्न 8 – क्या रोटी, व्याप्य और बाई, व्यापक ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि आटा, व्यापक और रोटी, व्याप्य है।

प्रश्न 9 – यदि बाई को व्यापक कहे तो क्या होगा ?

उत्तर – बाई के नाश होने का प्रसङ्ग उपस्थित होगा। बाई, आटा बन जावे तो ऐसा कहा जा सकता है, लेकिन व्याप्य-व्यापक-सम्बन्ध एक ही द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; दो द्रव्यों में नहीं होता है।

प्रश्न 10 – क्या जीव के विकारीपरिणाम, व्यापक और पुद्गल के विकारीपरिणाम (कर्म), व्याप्य – यह ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि पुद्गल के विकारीपरिणाम, व्याप्य और कार्माणवर्गणा, व्यापक है।

प्रश्न 11 - कोई कहे, हम तो जीव के विकारीपरिणाम, व्यापक और पुद्गलकर्म, व्याप्य - ऐसा ही मानेंगे, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - जीव के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होगा। यदि जीव नष्ट होकर कार्माणवर्गणा बन जावे तो ऐसा कहा जा सकता है, किन्तु ऐसा नहीं होता है क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध एक द्रव्य का उसकी पर्याय में ही होता है; भिन्न-भिन्न पदार्थों में नहीं होता है।

प्रश्न 12 - क्या द्रव्यकर्म का उदय, व्यापक और संसार अवस्था, व्याप्य - ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि संसार अवस्था, व्याप्य और जीव, व्यापक है।

प्रश्न 13 - कोई कहे, हम तो कर्म का उदय, व्यापक और संसार अवस्था, व्याप्य - ऐसा ही मानेंगे तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - जीव के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और कर्म के उदय को जीव बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, लेकिन ऐसा होता नहीं है, क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक ही द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; भिन्न-भिन्न द्रव्यों में नहीं होता है।

प्रश्न 14 - क्या द्रव्यकर्म का अभाव, व्यापक और संसार का अभाव, व्याप्य ठीक है।

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि संसार का अभाव, व्याप्य और जीव, व्यापक है।

प्रश्न 15 - यदि द्रव्यकर्म का अभाव, व्यापक और संसार

का अभाव, व्याप्य - ऐसा ही माने तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - जीव के अभाव का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और कर्म के जीव बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, लेकिन ऐसा होता नहीं है, क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में ही होता है; अलग-अलग द्रव्यों में नहीं होता है।

प्रश्न 16 - क्या वायु का चलना, व्यापक और समुद्र में लहर उठना, व्याप्य - ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि समुद्र में लहर उठना, व्याप्य और समुद्र, व्यापक है।

प्रश्न 17 - कोई कहे, वायु का चलना, व्यापक और समुद्र में लहर उठना, व्याप्य तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - समुद्र के नष्ट होने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और वायु के नष्ट होकर समुद्र बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा,किन्तु ऐसा नहीं होता हैं क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; भिन्न-भिन्न द्रव्यों की पर्यायों में नहीं होता है।

प्रश्न 18 - क्या वायु का न चलना, व्यापक और तरंग नहीं उठना, व्याप्य, ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल नहीं, क्योंकि समुद्र में तरंग नहीं उठना, व्याप्य और समुद्र, व्यापक है।

प्रश्न 19 - कोई कहे, हवा नहीं चलना, व्यापक और तरङ्ग नहीं उठना, व्याप्य, तो क्या दोष आवेगा ?

उत्तर - समुद्र के नष्ट होने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा और वायु का नाश होकर समुद्र बन जाने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, किन्तु

ऐसा होता नहीं है, व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है; भिन्न-भिन्न द्रव्यों की पर्यायों में नहीं होता है।

प्रश्न 20 - विकारीभाव अहेतुक है या सहेतुक है ?

उत्तर - वास्तव में विकारीभाव अहेतुक है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य का परिणमन स्वतन्त्र है, और विकारीपर्याय के समय निमित्त होता है, इस अपेक्षा सहेतुक है।

प्रश्न 21 - विकारीभाव के अहेतुक या सहेतुक में कोई दूसरी भी अपेक्षा है ?

उत्तर - विकारीभाव, आत्मा स्वतन्त्ररूप से करता है, वह अपना हेतु है, इस अपेक्षा सहेतुक है; और कर्म सच्चा हेतु नहीं है, इस अपेक्षा अहेतुक है।

प्रश्न 22 - तुम विकारीभाव को आत्मा का स्वभाव कहते हो और स्वभाव का कभी अभाव होता नहीं; इसलिए विकार को कर्मकृत मानना चाहिए - क्या यह ठीक है ?

उत्तर - (1) विकारीभाव, व्याप्य, और द्रव्यकर्म, व्यापक - ऐसा माने तो ऐसा व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध नहीं बनेगा, क्योंकि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध, एक द्रव्य का उसकी पर्याय में ही होता है; भिन्न-भिन्न द्रव्यों में नहीं होता है; इसलिए आत्मा, व्यापक और विकारीभाव, व्याप्य - ऐसा मानने योग्य है। (2) हम विकार को एक समय का विकारीस्वभाव कहते हैं; त्रिकालीस्वभाव नहीं कहते हैं। (3) यदि जीव, विकार को एक समय का स्वयं का अपराध माने, तो त्रिकालीस्वभाव के आश्रय से विकार का अभाव कर सकता है। (4) यदि विकार को कर्मकृत माना जावे तो जीव कभी निगोद से नहीं निकले; जहाँ जो पड़ा हो, वहीं पड़ा रहेगा।

प्रश्न 23 - शुद्धनय की दृष्टि से रागादिक का व्याप्य-व्यापक कौन है ?

उत्तर - रागादिभाव, व्याप्य और पुद्गल, व्यापक है।

प्रश्न 24 - अशुद्धनिश्चयनय से रागादिक का व्याप्य-व्यापक कौन है ?

उत्तर - रागादिभाव, व्याप्य और अज्ञानी जीव का चारित्रगुण, व्यापक है।

प्रश्न 25 - कुन्दकुन्द भगवान ने समयसार बनाया — इसमें व्याप्य-व्यापक बताओ ?

उत्तर - समयसार बनना, व्याप्य; पुद्गलरूप आहारवर्गणा, व्यापक।

प्रश्न 26 - मैं बोला — इसमें व्याप्य-व्यापक बताओ ?

उत्तर - शब्द निकलना, व्याप्य और भाषावर्गणा, व्यापक है।

जय महावीर-जय महावीर

(7)

श्री समयसार, गाथाा 100 का रहस्य

आत्मा, निमित्त – नैमित्तिकभाव से भी........

प्रश्न 1 – श्री समयसार, गाथा 100 के चार बोल क्या-क्या हैं ?

उत्तर – (1) यदि आत्मा, व्याप्य-व्यापकभाव से परद्रव्य का कर्ता बने तो तन्मयपने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, अर्थात् अभिप्राय में आत्मा के नाश का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा; **(पररूपपना)** (2) यदि आत्मा, निमित्त-नैमित्तिकभाव से परद्रव्य का कर्ता बने तो नित्यकर्तृत्व का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, अर्थात् उसका संसार तीनों काल कायम रहेगा। **(त्रिकाल संसारपना)** (3) अज्ञानी का योग और उपयोग, परद्रव्य की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है; **(अज्ञानीपना)** (4) ज्ञानी का योग और उपयोग, परद्रव्य की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता नहीं, मात्र ज्ञाता है। **(ज्ञानीपना)**

प्रश्न 3 – कुम्हार ने घड़ा बनाया – क्या कुम्हार, व्यापक और घड़ा, व्याप्य – यह ठीक है।

उत्तर – बिल्कुल नहीं, क्योंकि मिट्टी, व्यापक और घड़ा, व्याप्य है।

प्रश्न 4 – कोई चतुर कहे कि कुम्हार, व्यापक और घड़ा, व्याप्य, तो क्या होगा।

उत्तर - यदि कुम्हार नष्ट होकर मिट्टी बन जावे, तो ऐसा कहा जा सकता है परन्तु ऐसा नहीं होता है, क्योंकि व्याप्य-व्यापक-सम्बन्ध तत्स्वरूप में ही होता है, अतत्स्वरूप में नहीं होता है।

प्रश्न 5- यह ठीक है कि व्याप्य-व्यापकसम्बन्ध तो एक द्रव्य का उसकी पर्याय में होता है परन्तु घड़ा बना, नैमित्तिक और कुम्हार, निमित्त तो है न ?

उत्तर - (1) कुम्हार, निमित्त नहीं है। यदि कुम्हार, घड़े का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बने, तो कुम्हार को नित्यकर्तृत्वपने का प्रसङ्ग उपस्थित होवेगा, अर्थात् उसका संसार तीनों काल कायम रहेगा, (2) याद रखें - निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध दो द्रव्यों की स्वतन्त्र पर्यायों के बीच में होता है; द्रव्य-गुण के बीच में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध नहीं होता है। दूसरा बोल, द्रव्य की अपेक्षा से है; इसलिए कुम्हार, निमित्त नहीं है।

प्रश्न 6 - हम भी द्रव्य-गुण में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध नहीं मानते हैं; इसलिए आपकी बात ठीक है, परन्तु घड़ा बना, नैमित्तिक और कुम्हार का उस समय का राग तो, निमित्त है न ?

उत्तर - (1) निमित्त तो है, परन्तु अज्ञानी, निमित्तकर्ता मानता है और निमित्तकर्ता मानने से, जब-जब घड़ा बने तो कुम्हार को उपस्थित रहना पड़ेगा। वह कभी भी अपने बाल-बच्चों को भी नहीं खिला सकेगा, स्वर्ग-मोक्ष में भी नहीं जा सकेगा, अर्थात् उसका संसार तीनों काल कायम रहेगा।

(2) जैसे, गाय का माँस निकला हो तो कौआ वहीं पर बैठता है; उसी प्रकार अज्ञानी की दृष्टि निमित्तकर्ता पर ही रहती है। (3) वास्तव में अज्ञानी, पर्याय में निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध शास्त्र के

आधार से कहता है, उसकी बुद्धि में कर्ता-कर्म बैठा है; इसलिए कहता है कि एक समय का निमित्त तो है न!

प्रश्न 7 - हमारी दृष्टि में कुछ भी बैठा हो, हम तो यह पूछते हैं कि घड़ा बना, नैमित्तिक और कुम्हार का उस समय का राग निमित्त है न ?

उत्तर - मानो घड़ा बना 10 नम्बर पर; कुम्हार का राग भी 10 नम्बर पर; हाथ आदि क्रिया भी 10 नम्बर पर; यह तीनों अलग-अलग द्रव्यों की स्वतन्त्र क्रियाएँ हैं। अज्ञानी को इनकी स्वतन्त्रता का पता नहीं है। (1) यहाँ पर कुम्हार के ज्ञान का, कषायों के साथ जुड़ना, उसे उपयोग कहा है (2) और हाथ आदि की क्रिया का मन-वचन-काय के निमित्त से आत्मप्रदेशों का चलन, वह योग है। (3) घड़ा बना, यह परद्रव्य की क्रिया है। अज्ञानी का योग और उपयोग परद्रव्य की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है; है नहीं।

चार्ट में देखो

त्रिकाली उपादान	कुम्हार का चारित्र गुण	आहारवर्गणा के स्कन्ध	मिट्टी
	1 2 3	1 2 3	1 2 3
	4 5 6 7 8	4 5 6 7 8	4 5 6 7 8
अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण	9	9	9
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण	10	10	10
(कार्य) उपादेय	कुम्हार का राग	हाथ आदि क्रिया	घड़ा बना

यह तीनों स्वतन्त्ररूप से परिणमन करते हुए अपने-अपने क्रम काल में 10 नम्बर पर आये। अज्ञानी कुम्हार को इसका पता नहीं है; इसलिए कुम्हार का योग और उपयोग घड़े की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है।

प्रश्न 8 - अज्ञानी कुम्हार, घड़े की पर्याय का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता बनता है, तो क्या ज्ञानी कुम्हार हो, वह स्वतन्त्र पर्यायों का निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता नहीं है?

उत्तर - वास्तव में ज्ञानी तो अस्थिरता के राग का, हाथ आदि क्रिया का, और घड़ा बना, उन सब का मात्र व्यवहार से ज्ञाता है। क्योंकि ज्ञानी जानता है कि सब द्रव्य अपने-अपने स्वरूप से परिणमते हैं; कोई किसी का परिणमाया परिणमता नाहीं।

चार्ट को ध्यान से देखो

त्रिकाली उपादान	कुम्हार का ज्ञानगुण 1 2 3 4 5 6 7 8	कुम्हार का चारित्रगुण 1 2 3 4 5 6 7 8	हाथ आदि आहारवर्गणा के स्कन्ध 1 2 3 4 5 6 7 8	मिट्टी 1 2 3 4 5 6 7 8
अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती पर्याय क्षणिक-उपादानकारण	9	9	9	9
उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण	10	10	10	10
(कार्य) उपादेय	ज्ञान हुआ	अस्थिरता का राग	हाथ आदि की क्रिया	घड़ा बना

प्रश्न 9 - क्या ज्ञानी कुम्हार का घड़ा बनने में निमित्त -नैमित्तिकपना नहीं है ?

उत्तर - ज्ञातापना है; ज्ञेय-ज्ञायकसम्बन्ध भी व्यवहार से है, क्योंकि ज्ञानी कुम्हार तो योग, हाथ आदि क्रिया का; अस्थिरता के राग का; घड़ा बनने की क्रिया का, निमित्त-नैमित्तिकभाव से कर्ता नहीं है; मात्र ज्ञाता है।

प्रश्न 10 - क्या ज्ञानी कुम्हार, ज्ञायक, और अस्थिरता का राग; हाथ आदि की क्रिया; घड़ा बना, ये सब ज्ञेय हैं ?

उत्तर - हाँ, यह सब व्यवहार से ज्ञान के ज्ञेय हैं। वास्तव में ज्ञानी ने अपनी ज्ञानपर्याय का ज्ञान किया है।

प्रश्न 11 - आत्मा, ज्ञायक और ज्ञान की पर्याय, ज्ञेय - यह तो ठीक है न ?

उत्तर - यह भी व्यवहारकथन है; बस ! ज्ञायक तो ज्ञायक ही है।

प्रश्न 12 - श्री समयसार की 100 वीं गाथा के चार बोलों से क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - (1) द्रव्यदृष्टि से तो कोई द्रव्य, अन्य किसी द्रव्य का कर्ता नहीं है। (2) परन्तु पर्यायदृष्टि से किसी द्रव्य की पर्याय, किसी समय, किसी अन्य द्रव्य की पर्याय को निमित्त होती है; इसलिए इस अपेक्षा से एक द्रव्य के परिणाम, अन्य के परिणाम के निमित्तकर्ता कहलाते हैं। (3) परमार्थतः प्रत्येक द्रव्य अपने ही परिणामों का कर्ता है; अन्य के परिणामों का अन्य द्रव्य, कर्ता नहीं है।

प्रश्न 13- इस 100 वीं गाथा के चार बोल समझने से क्या लाभ हैं ?

उत्तर - (1) पर में कर्ता-भोक्ताबुद्धि का अभाव होकर, धर्म की प्राप्ति होना; (2) पंच परावर्तन का अभाव होना; (3) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (4) पंचम परिणामिकभाव का महत्त्व आना; और (5) पञ्च परमेष्टियों में गिनती होना - ये लाभ हैं।

प्रश्न 14 - इस 100 वीं गाथा में योग और उपयोग किसे कहा है ?

उत्तर - (1) योग, अर्थात् मन-वचन-काय के निमित्त से आत्मप्रदेशों का चलन; (2) उपयोग, अर्थात् ज्ञान का कषायों के साथ उपयुक्त होना-जुड़ना।

प्रश्न 31 - योग और उपयोग को तो घटादिक व द्रव्यकर्म का निमित्तकर्ता कहा जाता है, किन्तु आत्मा को उनका कर्ता क्यों नहीं कहा जाता है ?

उत्तर - (1) त्रिकाली आत्मा, उसका कर्ता नहीं है। (2) जिसको स्वभाव की दृष्टि हुई है, वह ज्ञानी आत्मा, योग-उपयोग और घटादिक, द्रव्यकर्म का निमित्त-नैमित्तिकभाव से भी कर्ता नहीं है; मात्र ज्ञाता है; इसलिए आत्मा को उनका कर्ता नहीं कहा जाता है। (3) आत्मा को संसारदशा में अज्ञान से मात्र योग-उपयोग का कर्ता कहा जा सकता है, परन्तु किसी भी आत्मा को घटादिक और द्रव्यकर्म का कर्ता तो किसी भी अपेक्षा से नहीं कहा जा सकता है।

जय महावीर — जय महावीर

8

श्रीसमयसार, कलश 211वें का रहस्य

स्वतन्त्रता की घोषणा

प्रश्न 1- 211 वाँ कलश क्या बताता है ?

उत्तर - स्वतन्त्रता की घोषणा करता है।

प्रश्न 2- 211 वाँ कलश एवं उसका अर्थ बताओ ?

उत्तर - ननु परिणाम एव किल कर्म विनिश्चयत:
स भवति नापरस्य परिणामिन एव भवेत्।
न भवति कर्तृशून्यमिह कर्म न चैकतया
स्थितिरिह वस्तुनो भवतु कर्तृतदैव तत: ॥211॥

वस्तु स्वयं ही अपने परिणाम की कर्ता है; उसका (वस्तु का) दूसरे के साथ कर्ता-कर्मपना नहीं है। इस बात को इस कलश में चार बोलों द्वारा समझाया है —

(1) वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्म है।

(2) परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही होता है; अन्य का नहीं।

(3) कर्म, कर्ता के बिना नहीं होता।

(4) वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती।

इस कलश में महासिद्धान्त भरा है। विश्व में जीव अनन्त, पुद्गलद्रव्य अनन्तानन्त, धर्म अधर्म-आकाशद्रव्य एक-एक और

लोकप्रमाण असंख्यात कालद्रव्य हैं; इन सब द्रव्यों के स्वरूप का नियम क्या है ? यह बात इस कलश में समझायी है।

(1) कोई गाली देता है; (2) धन चोरी चला जाता है; (3) शरीर में अनुकूलता या प्रतिकूलता होती है; (4) घर में कोई मर जाता है; (5) बच्चे कहना नहीं मानते; (6) लड़की भाग जाती है; (7) लाखों रुपयों का लाभ-नुकसान होता है - आदि प्रसङ्ग उपस्थित होने पर यदि 211 वाँ कलश हमारे सामने होगा तो अशान्ति नहीं आयेगी, क्योंकि ज्ञानी तो जानता है कि 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है'।

प्रश्न 3- वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्म है - इसे समझाइये ?

उत्तर - परिणाम, कार्य, कर्म, दशा, हालत, कन्डीशन - ये सब पर्यायवाची शब्द हैं। परिणाम, परिणामी का ही होता है। सबसे पहले निर्णय करना चाहिए - यह क्या है ? जैसे, किसी ने कहा - बाई ने रोटी बनायी तो विचारो, यहाँ कार्य क्या है ? रोटी बनना कार्य है। वह आटे से ही बनी है। इसी प्रकार संसार में जो कार्य होता है, वह परिणामी से होता है, ऐसा जो समझा, उसने 'वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्म है' ऐसा माना। वास्तव में पहला बोल समझने से -

(1) ज्ञान हुआ, वह ज्ञान में से आया, (2) सम्यग्दर्शन हुआ, वह श्रद्धागुण में से हुआ, (3) दिव्यध्वनि हुई, वह भाषावर्गणा में से हुई, (4) राग आया, वह चारित्रगुण में से आया आदि बातों का निर्णय हो जाता है।

प्रश्न 4- परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही है; अन्य का नहीं - इससे क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - जो पहले बोल में नहीं समझा, उसे और स्पष्ट करने के लिए आचार्य भगवान ने अति कृपा की है। जैसे —

(1) ज्ञान हुआ, वह ज्ञानगुण में से ही आया; वह आँख, कान, नाक, कर्म के क्षयोपशमादि से नहीं आया।

(2) सम्यग्दर्शन हुआ, वह श्रद्धागुण में से ही हुआ है; देव-गुरु से, दर्शनमोहनीय के उपशमादि से नहीं हुआ।

(3) दिव्यध्वनि, भाषावर्गणा से ही आयी है; भगवान से नहीं

(4) ज्ञानगुण में से ही ज्ञान आया है; चारित्र आदि गुणों से नहीं आया है।

(5) यथाख्यातचारित्र प्रगटा, वह चारित्रगुण में से ही आया है; ज्ञान-श्रद्धा आदि गुणों में से नहीं आया-आदि बातों का स्पष्टीकरण दूसरे बोल में अस्ति-नास्ति से समझाया है। इसमें जो कार्य हुआ है, वह द्रव्य का ही है; अन्य का नहीं। एक द्रव्य में अनन्त गुण हैं; एक गुण का कार्य, दूसरे गुण से हुआ नहीं है - यह बात भी समझायी है। इससे जीव को अनादि काल से पर में कर्ता-भोक्ताबुद्धि का अभाव होकर धर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 5- 'कर्म, कर्ता के बिना नहीं होता' - इससे क्या तात्पर्य है?

उत्तर - संसार में जो कार्य होता है, वह कार्य, कर्ता के बिना नहीं होता है; जैसे (1) ज्ञान हुआ, वह ज्ञानगुण बिना नहीं होता।

(2) दिव्यध्वनि हुई, वह भाषावर्गणा के बिना नहीं हुई।

(3) गाली, वह भाषावर्गणा के बिना नहीं हुई। जो मात्र पर्याय को ही मानते हैं, द्रव्य को नहीं मानते हैं, उनसे कहा कि 'पर्याय, द्रव्य बिना नहीं होती है।' जब अनादि-अनन्त कर्ता स्वयं स्वतन्त्रता

-पूर्वक अपना-अपना कार्य करता है - ऐसा जाने-माने, तो उसे तुरन्त धर्म की प्राप्ति होती है।

प्रश्न 6- 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती' - इससे क्या तात्पर्य है ?

उत्तर - जो वस्तु है, एक-एक समय करके बदलना उसका स्वभाव है। जैसे - (1) अभी-अभी यह आदमी हमारी प्रशंसा कर रहा था, इतने में निन्दा क्यों करने लगा ? अरे भाई 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती'।

(2) अभी थोड़ा ज्ञान था, ज्यादा कैसे हो गया ? 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती'।

(3) पहले ज्ञान ज्यादा था, अब कम कैसे हो गया ? अरे भाई ! 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती'।

(4) इन्द्रभूति गृहीतमिथ्यादृष्टि था, उसे भगवान महावीर के समवसरण में आने पर सम्यग्दर्शन, मुनिपना, गणधरपना, अवधि-मन:पर्ययज्ञान कैसे हो गया ? अरे भाई ! 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है'।

(5) मारीच को भगवान आदिनाथ के समवसरण में सम्यक्त्व नहीं हुआ, शेर पर्याय में कैसे हो गया ? अरे भाई ! 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है'। जीव ऐसा जाने तो नियम से विकार का अभाव होकर, धर्म की शुरुआत, वृद्धि और पूर्णता होती ही है।

प्रश्न 7- कलश 211 के चार बोल समझनेवाले जीव को कैसे-कैसे भाव एकत्वबुद्धिपूर्वक नहीं आते ?

उत्तर - (1) ऐसा क्यों, (2) इससे यह, (3) यह हो, यह ना हो आदि प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं, न ऐसे भाव एकत्वबुद्धिपूर्वक

आते हैं। ज्ञानी तो सबका ज्ञाता है क्योंकि वह जानता है कि 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है।'

प्रश्न 8- 'ऐसा क्यों' ऐसे प्रश्न के लिए ज्ञानस्वभाव में स्थान क्यों नहीं है?

उत्तर - (1) एक मनुष्य, दूसरे मनुष्य की निन्दा कर रहा था, एकाएक उसकी प्रशंसा करने लगा।

(2) पार्श्वनाथ भगवान का जीव, हाथी की पर्याय में पागल बना फिरता था, उसे उसी पर्याय में सम्यग्दर्शन की प्राप्ति हुई। अज्ञानी होने से ऐसा लगता है - 'ऐसा क्यों' परन्तु ज्ञातास्वभाव को जाननेवाले ज्ञानी के लिए यह प्रश्न नहीं उठता क्योंकि 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है' और परिणाम, परिणामी का ही होता है, अन्य का नहीं।

प्रश्न 9- निन्दा या गाली के शब्द सुनकर अज्ञानी को और ज्ञानी को कैसे-कैसे भाव होते हैं?

उत्तर - 'किसी ने गाली दी।' (1) ज्ञानी तो जानता है 'गाली तो मात्र शब्दों की अवस्था है।' अमूक-अमूक अक्षरों के मिलने से गालीरूप शब्द बने हैं, यह कोई निन्दा नहीं है। अज्ञानी ऐसा मानता है 'यह मेरी निन्दा हुई' यह उसकी मान्यता का दोष है और वह मान्यता ही दु:ख का कारण है।

(2) ज्ञानी जानता है - जीव, चेतन होने से जड़शब्दों की अवस्था कर ही नहीं सकता क्योंकि शब्द, भाषावर्गणा का ही कार्य है। अज्ञानी जीव भी निन्दा के शब्दों को तो परिणमन करा नहीं सकता, किन्तु वह गाली देने का द्वेषभाव करता है और वह मात्र द्वेषभाव से ही दु:खी हो रहा है।

प्रश्न 10- 'किसी ने गाली दी' - इस पर ऐसा क्यों ? इस अपेक्षा पर ज्ञानी क्या विचार करते हैं ?

उत्तर - (1) ज्ञानी जानता है — सामनेवाला जीव, निन्दा के शब्दों को परिणमन करा नहीं सकता, क्योंकि निन्दा के शब्दों का कर्ता, भाषावर्गणा है और द्वेषभाव का कर्ता, अज्ञानी का चारित्रगुण है, इसलिए (दूसरे जीव पर) क्रोध करने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता है।

(2) सामनेवाला जीव, मुझ अरूपी ज्ञायकस्वभावी आत्मा को देख नहीं सकता; इसलिए जब वह देख नहीं सकता तो उसने मुझे कुछ कहा ही नहीं। अज्ञानी तो शरीर और नाम को उद्देश्य करके निन्दा करता है परन्तु ज्ञानी विचारता है - शरीर और नाम तो मेरा है ही नहीं; शरीर और नाम तो मेरे से पर हैं; इसलिए ज्ञानी को दु:ख नहीं है। शरीर और नाम अपना नहीं होने पर भी, उसे अपना माननेरूप भूल, अज्ञानी जीव करता है, वह ही उसके दु:ख का कारण है।

(3) जिस समय इस जीव के ज्ञान का उघाड़ निन्दा के शब्दों का ज्ञान करनेरूप होता है, उस सयम वह शब्द ही सामने ज्ञेयरूप होता है - ऐसा ज्ञानी जानता है लेकिन अज्ञानी विचारता है कि मेरी निन्दा न हो, अर्थात् अव्यक्तरूप से ऐसा मानता है कि निन्दा के शब्दों की ज्ञानपर्याय मुझे न हो। ज्ञानपर्याय तो ज्ञानगुण की है; अर्थात् मेरा ज्ञानगुण मुझे न हो - ऐसा माना। ज्ञानगुण, आत्मा का है, अर्थात् मेरी आत्मा मुझे ना हो, ऐसा माना। ऐसी मान्यतावाला जीव, आत्मघाती महापापी है।

इससे सिद्ध हुआ, सामनेवाला जीव, मेरी निन्दा करता है - ऐसा क्यों ? ऐसे प्रश्न का, ज्ञानस्वभाव को जाननेवाले के लिए स्थान ही नहीं। इस प्रकार समझकर ज्ञातास्वभावी बनकर कलश 211 का

मर्म समझकर, सुखी रहना ज्ञानी का कार्य हैं क्योंकि ज्ञानी जानता है वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है और परिणाम, परिणामी का ही होता है; अन्य का नहीं।

प्रश्न 11– 'इससे यह' क्या ऐसा प्रश्न भी ज्ञानस्वभावी ज्ञानी को नहीं उठता?

उत्तर – जैसे, हजार रुपये खो गये – अज्ञानी ऐसा मानता है कि मेरा रुपया गया; इसलिए मुझे दुःख होता है। वास्तव में रुपया खो जाने के कारण दुःख नहीं, परन्तु 'मेरा खो गया' – यह मान्यता ही दुःख का कारण है। ज्ञानी तो विचारता है कि रुपया गया, वह तो पुद्गल की क्रियावतीशक्ति के कारण गया। उसके जाने के कारण मुझे दुःख है ही नहीं। मैं तो स्वपरप्रकाशक ज्ञानस्वभावी आत्मा हूँ। इसलिए स्व के ज्ञान के समय, रुपया खो जानेरूप पुद्गल की अवस्था हुई, उसका तो मैं मात्र परज्ञेयरूप से जाननेवाला हूँ, ऐसा जानने से ज्ञानी को दुःख नहीं होता है। इससे सिद्ध होता है कि पर के कारण आत्मा में कुछ भी नहीं हो सकता। फिर 'इससे यह' का प्रश्न ज्ञानी को नहीं उठता; मात्र अज्ञानी को ही उठता है। ज्ञानी तो जानता है 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं है;' परिणाम, परिणामी का ही होता है, अन्य का नहीं।

प्रश्न 12– 'यह हो, यह ना हो' – क्या ऐसा प्रश्न भी ज्ञानस्वभावी ज्ञानी को नहीं उठता ?

उत्तर – (1) संसार में मेरे मित्र ही हों, कोई दुश्मन ना हो।

(2) सदा ज्ञानी ही हो, अज्ञानी न हों।

(3) मेरी अनुमोदना करनेवाले हो, विरोध करनेवाले ना हों।

(4) अच्छा ही हो, बुरा ना होवे। ऐसा अज्ञानी मानता है परन्तु

ऐसा कभी हो नहीं सकता, क्योंकि सब पदार्थ सत् हैं, प्रत्येक पदार्थ कायम रहकर पलटना ही उसका स्वभाव है, क्योंकि 'वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है' – ऐसा माननेवाले ज्ञानी जीव को 'यह हो, यह ना हो' ऐसा प्रश्न उठता ही नहीं। ज्ञानी तो समझता है कि संसार में सम्पूर्ण पदार्थ सत् हैं तथा सदा काल कायम रहते हुए, पलटते रहना उनका स्वभाव है। फिर अमूक ज्ञेय हो और अमुक ना हो – ऐसा भेद पाड़ना, वह ज्ञानस्वभाव में नहीं है। इसलिए ज्ञानी तो सबका ज्ञाता ही रहता है क्योंकि वह 'सत् द्रव्य लक्षणम्' 'उत्पाद व्यय ध्रौव्ययुक्तं सत्' के रहस्य को जानता है और भगवान अमृतचन्द्राचार्य रचित कलश 211 के चार बोलों को जानता है कि—

(1) वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्म है।

(2) परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही है; अन्य का नहीं।

(3) कर्म, कर्ता के बिना नहीं होता।

(4) वस्तु की एकरूप स्थिति नहीं रहती है।

इसलिए ज्ञानी को (1) ऐसा क्यों, (2) इससे यह, (3) यह हो, यह ना हो – ऐसे प्रश्न उपस्थित नहीं होते हैं। वह तो सिद्धभगवान के समान ज्ञाता-दृष्टा रहता है। जानने में विरुद्धता नहीं; मात्र प्रत्यक्ष-परोक्ष का भेद है। ऐसा ज्ञानस्वभावी का रहस्य बतानेवाले जिन, जिनवर और जिनवर वृषभों को बारम्बार नमस्कार।*

परिशिष्ट प्रवचन

स्वतन्त्रता की घोषणा

कर्ता-कर्म सम्बन्धी भेदज्ञान कराते हुए आचार्यदेव कहते हैं कि वस्तु स्वयं अपने परिणाम की कर्ता है; अन्य के साथ उसका कर्ता-कर्म का सम्बन्ध नहीं है। इस सिद्धान्त को आचार्यदेव ने समयसार कलश - 211 में इस प्रकार समझाया है -

(नर्दटक छन्द)

ननु परिणाम एव किल कर्म विनिश्चयतः
स भवति नापरस्य परिणामिन एव भवेत्।
न भवति कर्तृशून्यमिह कर्म न चैकतया
स्थितिरिह वस्तुनो भवतु कर्तृ तदेव ततः॥ 211॥

अर्थात्, *वास्तव में परिणाम ही निश्चय से कर्म है और परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी का ही होता है; अन्य का नहीं (क्योंकि परिणाम अपने-अपने द्रव्य के आश्रित हैं; अन्य के परिणाम का अन्य आश्रय नहीं होता) और कर्म, कर्ता के बिना नहीं होता तथा वस्तु की एकरूप (कूटस्थ) स्थिति नहीं होती (क्योंकि वस्तु द्रव्य-पर्यायस्वरूप होने से सर्वथा नित्यत्व, बाधासहित है); इसलिए वस्तु स्वयं ही अपने परिणामरूप कर्म की कर्ता है।*

(इस कलश में स्वतन्त्रता के सिद्धान्त को प्रतिपादित करनेवाले चार बोल इस प्रकार हैं -)

(1) परिणाम; अर्थात्, पर्याय ही कर्म; अर्थात्, कार्य है।

(2) परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी के ही होते हैं, अन्य के नहीं होते, क्योंकि परिणाम अपने-अपने आश्रयभूत परिणामी (द्रव्य) के आश्रय से होते हैं; अन्य का परिणाम अन्य के आश्रय से नहीं होता।

(3) कर्ता के बिना कर्म नहीं होता; अर्थात्, परिणाम, वस्तु के बिना नहीं होता।

(4) वस्तु की निरन्तर एक समान स्थिति नहीं रहती, क्योंकि वस्तु, द्रव्य-पर्यायस्वरूप है।

इस प्रकार आत्मा और जड़ सभी वस्तुएँ स्वयं ही अपने परिणामस्वरूप कर्म की कर्ता हैं - ऐसा वस्तुस्वरूप का महान् सिद्धान्त आचार्यदेव ने समझाया है।

देखो ! इसमें वस्तुस्वरूप को चार बोलों द्वारा समझाया है। इस जगत् में छह वस्तुएँ हैं - आत्मा, अनन्त; पुद्‌गलपरमाणु अनन्तानन्त; धर्म, अधर्म व आकाश, एक-एक और काल, असंख्यात। इन छहों प्रकार की वस्तुओं और उनके स्वरूप का वास्तविक नियम क्या है ? सिद्धान्त क्या है ? उसे यहाँ चार बोलों में समझाया जा रहा है।

(1) परिणाम ही कर्म है।

'ननु परिणाम एव किल कर्म विनिश्चयतः'; अर्थात्, परिणामी वस्तु का जो परिणाम है, वही निश्चय से उसका कर्म है। कर्म अर्थात् कार्य; परिणाम अर्थात् अवस्था। पदार्थ की अवस्था ही वास्तव में उसका कर्म / कार्य है। परिणामी अर्थात् अखण्ड वस्तु; वह जिस भाव से परिणमन करे, उस भाव को परिणाम कहते हैं। परिणाम

कहो, कार्य कहो, पर्याय कहो या कर्म कहो – ये सब शब्द वस्तु के परिणाम के पर्यायवाची ही हैं।

जैसे कि आत्मा ज्ञानगुणस्वरूप है; उसका परिणमन होने से जो जानने की पर्याय हुई, वह उसका कर्म है – वर्तमान कर्म है। राग या शरीर, वह कोई ज्ञान का कार्य नहीं, परन्तु 'यह राग है, यह शरीर है' – ऐसा उन्हें जाननेवाला जो ज्ञान है, वह आत्मा का कार्य है। आत्मा के परिणाम, वह आत्मा का कार्य है और जड़ के परिणाम; अर्थात्, जड़ की अवस्था, वह जड़ का कार्य है। इस प्रकार एक बोल पूर्ण हुआ।

(2) परिणाम, वस्तु का ही होता है, दूसरे का नहीं।

अब, इस दूसरे बोल में कहते हैं कि जो परिणाम होता है, वह परिणामी पदार्थ का ही होता है; वह किसी अन्य के आश्रय से नहीं होता। जिस प्रकार सुनते समय जो ज्ञान होता है, वह कार्य है – कर्म है। यह ज्ञान, किस का कार्य है ? वह ज्ञान, शब्दों का कार्य नहीं है परन्तु परिणामी वस्तु जो आत्मा है, उसी का वह कार्य है। परिणामी के बिना परिणाम नहीं होता।

आत्मा, परिणामी है, उसके बिना ज्ञानपरिणाम नहीं होता – यह सिद्धान्त है परन्तु वाणी के बिना ज्ञान नहीं होता – यह बात सत्य नहीं है। शब्दों के बिना ज्ञान नहीं होता – ऐसा नहीं, परन्तु आत्मा के बिना ज्ञान नहीं होता – ऐसा है। इस प्रकार परिणामी आत्मा के आश्रय से ही ज्ञानादि परिणाम हैं।

देखो ! यह महासिद्धान्त है, वस्तुस्वरूप का अबाधित नियम है।

परिणामी के आश्रय से ही उसके परिणाम होते हैं। जाननेवाला आत्मा, वह परिणामी है, उसके आश्रित ही ज्ञान होता है; वे ज्ञानपरिणाम आत्मा के हैं, वाणी के नहीं। ज्ञानपरिणाम, वाणी के रजकणों के

आश्रित नहीं होते, परन्तु ज्ञानस्वभावी आत्मवस्तु के आश्रय से होते हैं। आत्मा, त्रिकाल स्थित रहनेवाला परिणामी है, वह स्वयं रूपान्तरित होकर नवीन-नवीन अवस्थाओं को धारण करता है। ज्ञान-आनन्द इत्यादि जो उसके वर्तमानभाव हैं, वे उसके परिणाम हैं।

परिणाम, परिणामी के ही हैं; अन्य के नहीं - इसमें जगत् के सभी पदार्थों का नियम आ जाता है। परिणाम, परिणामी के ही आश्रित होते हैं। ज्ञानपरिणाम, आत्मा के आश्रित हैं, भाषा आदि के आश्रित नहीं हैं; इसलिए इसमें पर की ओर देखना नहीं रहता, परन्तु अपनी -अपनी वस्तु के सामने देखकर स्वसन्मुख परिणमन करना रहता है, उसमें मोक्षमार्ग आ जाता है।

वाणी तो अनन्त जड़ परमाणुओं की अवस्था है, वह अपने जड़ परमाणुओं के आश्रित है। बोलने की जो इच्छा हुई, उस इच्छा के आश्रित भाषा के परिणाम तीन काल में भी नहीं हैं। जब इच्छा हुई और भाषा निकली, उस समय उसका जो ज्ञान हुआ, वह ज्ञान, आत्मा के आश्रय से ही हुआ है; भाषा के आश्रय से तथा इच्छा के आश्रय से ज्ञान नहीं हुआ है।

परिणाम अपने आश्रयभूत परिणामी के आश्रय से ही होते हैं; अन्य के आश्रय से नहीं होते। इस प्रकार यहाँ अस्ति-नास्ति से अनेकान्त द्वारा वस्तुस्वरूप समझाया है। यह बात सत्य के सिद्धान्त की; अर्थात्, वस्तु के सत्स्वरूप की है। अज्ञानी इस बात को पहिचाने बिना मूढ़तापूर्वक अज्ञानता में ही जीवन पूर्ण कर डालता है।

भाई! आत्मा क्या है और जड़ क्या है? - इनकी भिन्नता समझकर वस्तुस्वरूप के वास्तविक सत् को समझे बिना ज्ञान में सत्पना नहीं आता; अर्थात्, सम्यग्ज्ञान नहीं होता; वस्तुस्वरूप के

सत्यज्ञान के बिना सच्ची रुचि और श्रद्धा भी नहीं होती और सच्ची श्रद्धा के बिना वस्तु में स्थिरतारूप चारित्र प्रगट नहीं होता, शान्ति नहीं होती, समाधान और सुख नहीं होता; इसलिए वस्तु क्या है ? उसे प्रथम समझना चाहिए। वस्तुस्वरूप को समझने से मेरे परिणाम पर से और पर के परिणाम मुझ से होते हैं – ऐसी पराश्रितबुद्धि नहीं रहती; अर्थात्, स्वाश्रित स्वसन्तुख परिणाम प्रगट होता है, यही धर्म है।

आत्मा का जो ज्ञान होता है, उसको जाननेवाला परिणाम, आत्मा के आश्रित है; वह परिणाम, वाणी के आश्रय से नहीं होता है, कान के आश्रय से नहीं होता है तथा उस समय की इच्छा के आश्रय से भी नहीं होता है। यद्यपि इच्छा भी आत्मा का परिणाम है परन्तु उस इच्छापरिणाम के आश्रित ज्ञानपरिणाम नहीं है; ज्ञानपरिणाम, आत्मवस्तु के आश्रित है; इसलिए वस्तु के सन्मुख दृष्टि कर।

बोलने की इच्छा हो, होंठ हिलें, भाषा निकले और उस समय उस प्रकार का ज्ञान हो – ऐसी चारों क्रियाएँ एक साथ होते हुए भी कोई क्रिया किसी के आश्रित नहीं है; सभी अपने-अपने परिणामी द्रव्य के ही आश्रित हैं। जो इच्छा है, वह आत्मा के चारित्रगुण का परिणाम है। होंठ हिले, वह होंठ के रजकणों की अवस्था है; वह अवस्था इच्छा के आधार से नहीं हुई। भाषा प्रगट हो, वह भाषावर्गणा के रजकणों की अवस्था है; वह अवस्था इच्छा के आश्रित या होंठ के आश्रित नहीं हुई, परन्तु परिणामीरूप रजकणों के आश्रय से उत्पन्न हुई और उस समय का ज्ञान, आत्मवस्तु के आश्रित है; इच्छा अथवा भाषा के आश्रित नहीं है – ऐसा वस्तुस्वरूप है।

भाई! तीन काल-तीन लोक में सर्वज्ञ भगवान का देखा हुआ यह वस्तुस्वभाव है; अज्ञानी उसे जाने बिना और समझने की परवाह

किये बिना अन्धे की भाँति चला जाता है परन्तु वस्तुस्वरूप के सच्चे ज्ञान के बिना किसी प्रकार कहीं भी कल्याण नहीं हो सकता। इस वस्तुस्वरूप को बारम्बार लक्ष्य लेकर परिणामों से भेदज्ञान करने के लिए यह बात है। एक वस्तु के परिणाम, अन्य वस्तु के आश्रित तो हैं नहीं, परन्तु उस वस्तु में भी उसके एक परिणाम के आश्रित दूसरे परिणाम नहीं हैं। परिणामी वस्तु के आश्रित ही परिणाम हैं - यह महान् सिद्धान्त है।

प्रतिक्षण इच्छा, भाषा और ज्ञान - यह तीनों एक साथ होते हुए भी इच्छा और ज्ञान, जीव के आश्रित हैं और भाषा, जड़ के आश्रित हैं; इच्छा के कारण भाषा हुई और भाषा के कारण ज्ञान हुआ - ऐसा नहीं है; उसी प्रकार इच्छा के आश्रित भी ज्ञान नहीं है। इच्छा और ज्ञान - ये दोनों आत्मा के परिणाम हैं, तथापि एक के आश्रित दूसरे के परिणाम नहीं हैं। ज्ञानपरिणाम और इच्छापरिणाम दोनों भिन्न - भिन्न हैं। जो ज्ञान हुआ, वह इच्छा का कार्य नहीं है और जो इच्छा हुई, वह ज्ञान का कार्य नहीं है। जहाँ इच्छा भी ज्ञान का कार्य नहीं, वहाँ जड़ भाषा आदि तो ज्ञान के कार्य कहाँ से हो सकते हैं? वे तो जड़ के ही कार्य हैं।

जगत् में जो भी कार्य होते हैं, वे सत् की अवस्थाएँ हैं। किसी वस्तु के ही परिणाम होते हैं परन्तु वस्तु के बिना अधर से नहीं होते। परिणामी का परिणाम होता है, नित्य स्थित वस्तु के आश्रित परिणाम होते हैं; पर के आश्रित नहीं होते।

परमाणु में होंठों का हिलना और भाषा का परिणमन - ये दोनों भी भिन्न वस्तुएँ हैं। आत्मा में इच्छा और ज्ञान - ये दोनों परिणाम भी भिन्न-भिन्न हैं।

होंठ हिलने के आश्रित, भाषा की पर्याय नहीं है। होंठ का हिलना, वह होंठ के पुद्‌गलों के आश्रित है; भाषा का परिणमन, वह भाषा के पुद्‌गलों के आश्रित है। होंठ और भाषा; इच्छा और ज्ञान – इन चारों का काल एक होने पर भी चारों परिणाम अलग हैं।

उसमें भी इच्छा और ज्ञान – ये दोनों परिणाम, आत्माश्रित होने पर भी इच्छापरिणाम के आश्रित ज्ञानपरिणाम नहीं हैं। ज्ञान, वह आत्मा का परिणाम है, इच्छा का नहीं; इसी प्रकार इच्छा, वह आत्मा का परिणाम है, ज्ञान का नहीं। इच्छा को जाननेवाला ज्ञान, वह इच्छा का कार्य नहीं है; उसी प्रकार वह ज्ञान, इच्छा को उत्पन्न भी नहीं करता। इच्छापरिणाम, आत्मा का कार्य अवश्य है परन्तु ज्ञान का कार्य नहीं है। भिन्न-भिन्न गुण के परिणाम भिन्न-भिन्न हैं। एक ही द्रव्य में होने पर भी एक गुण के आश्रित दूसरे गुण के परिणाम नहीं हैं।

अहो! कितनी स्वतन्त्रता!! इसमें पर के आश्रय की बात ही कहाँ रही?

आत्मा में चारित्रगुण इत्यादि अनन्त गुण हैं। उनमें चारित्र का विकृतपरिणाम इच्छा है, वह चारित्रगुण के आश्रित है और उस समय इच्छा का ज्ञान हुआ, वह ज्ञानगुणरूप परिणामी का परिणाम है; वह कहीं इच्छा के परिणाम के आश्रित नहीं है। इस प्रकार इच्छापरिणाम और ज्ञानपरिणाम – इन दोनों का भिन्न-भिन्न परिणमन है; दोनों एक-दूसरे के आश्रित नहीं है।

भाई! सत् जैसा है, उसी प्रकार उसका ज्ञान करे तो सत् ज्ञान हो और सत् का ज्ञान करे तो उसका बहुमान एवं यथार्थ का आदर प्रगट हो, रुचि हो, श्रद्धा दृढ़ हो और उसमें स्थिरता हो; उसे ही धर्म कहा जाता है। सत् से विपरीत ज्ञान करे, उसे धर्म नहीं होता। स्व में

स्थिरता ही मूलधर्म है परन्तु वस्तुस्वरूप के सच्चे ज्ञान बिना स्थिरता कहाँ करेगा?

आत्मा और शरीरादि रजकण भिन्न-भिन्न तत्त्व हैं; शरीर की अवस्था, हलन-चलन, बोलना - ये सब परिणामी पुद्गलों के परिणाम हैं; उन पुद्गलों के आश्रिय वे परिणाम उत्पन्न हुए हैं, इच्छा के आश्रित नहीं; उसी प्रकार इच्छा के आश्रित ज्ञान भी नहीं है। पुद्गल के परिणाम, आत्मा के आश्रित मानना और आत्मा के परिणाम, पुद्गलाश्रित मानना, इसमें तो विपरीतमान्यतारूप मूढ़ता है।

जगत् में भी जो वस्तु जैसी हो, उससे विपरीत बतलानेवाले को लोग मूर्ख कहते हैं तो फिर सर्वज्ञकथित यह लोकोत्तर वस्तुस्वभाव जैसा है, वैसा न मानकर विरुद्ध माननेवाला तो लोकोत्तर मूर्ख और अविवेकी ही है। विवेकी और विलक्षण कब कहा जाए? जबकि वस्तु के जो परिणाम हुए, उसे कार्य मानकर, उसे परिणामी - वस्तु के आश्रित समझे और दूसरे के आश्रित न माने, तब स्व-पर का भेदज्ञान होता है और तभी विवेकी है - ऐसा कहने में आता है। आत्मा के परिणाम, पर के आश्रित नहीं होते। विकारी और अविकारी जितने भी परिणाम जिस वस्तु के हैं, वे उस वस्तु के आश्रित हैं; अन्य के आश्रित नहीं।

पदार्थ के परिणाम, वे उसी पदार्थ का कार्य है - यह एक बात। दूसरी बात यह कि वे परिणाम, उसी पदार्थ के आश्रय से होते हैं; अन्य के आश्रय से नहीं होते - यह नियम जगत् के समस्त पदार्थों में लागू होता है।

देखो भाई! यह तो भेदज्ञान के लिए वस्तुस्वभाव के नियम बतलाये गये। अब, धीरे-धीरे दृष्टान्तपूर्वक युक्ति से वस्तुस्वरूप सिद्ध किया जाता है।

देखो! किसी को ऐसे भाव उत्पन्न हुए कि मैं सौ रुपये दान में दूँ, उसका वह परिणाम आत्मवस्तु के आश्रित हुआ है; वहाँ रुपये जाने की जो क्रिया होती है, वह रुपये के रजकणों के आश्रित है, जीव की इच्छा के आश्रित नहीं। अब उस समय उन रुपयों की क्रिया का ज्ञान अथवा इच्छा के भाव का ज्ञान होता है, वह ज्ञानपरिणाम आत्माश्रित होता है। इस प्रकार परिणामों का विभाजन करके वस्तुस्वरूप का ज्ञान करना चाहिए।

भाई! तेरा ज्ञान और तेरी इच्छा - ये दोनों परिणाम, आत्मा में होते हुए भी जब एक-दूसरे के आश्रित नहीं हैं तो फिर पर के आश्रय की तो बात ही कहाँ रही? दान की इच्छा हुई और रुपये दिये गये; वहाँ रुपये जाने की क्रिया भी हाथ के आश्रित नहीं है, हाथ का हिलना इच्छा के आश्रित नहीं है और इच्छा का परिणमन, ज्ञान के आश्रित नहीं है; सभी अपने-अपने आश्रयभूत वस्तु के आधार से हैं।

देखो! यह सर्वज्ञ के पदार्थ-विज्ञान का पाठ है - ऐसे वस्तुस्वरूप का ज्ञान, सच्चा पदार्थ-विज्ञान है। जगत् के पदार्थों का स्वभाव ही ऐसा है कि वे सदा एकरूप नहीं रहते, परन्तु परिणमन करके नवीन-नवीन अवस्थारूप कार्य किया करते हैं - ये बात चौथे बोल में कही जाएगी। जगत् के पदार्थों का स्वभाव ऐसा है कि वे नित्य स्थायी रहें और उनमें प्रतिक्षण नवीन-नवीन अवस्थारूप कार्य उनके अपने ही आश्रित हुआ करे। वस्तुस्वभाव का ऐसा ज्ञान ही सम्यग्ज्ञान है।

- जीव को इच्छा हुई, इसलिए हाथ हिला और सौ रुपये दिये गये - ऐसा नहीं है।

- इच्छा का आधार आत्मा है; हाथ और रुपयों का आधार परमाणु है।

– रुपयों के ज्ञान से इच्छा हुई – ऐसा भी नहीं है।

– हाथ का हलन-चलन, वह हाथ के परमाणुओं को आधार से है।

– रुपयों का आना-जाना, वह रुपयों के परमाणुओं के आधार से है।

– इच्छा का होना, वह आत्मा का चारित्रगुण के आधार से है।

यह तो भिन्न-भिन्न द्रव्य के परिणामों की भिन्नता की बात हुई; यहाँ तो उससे भी आगे अन्दर की बात लेना है। एक ही द्रव्य के अनेक परिणाम भी एक-दूसरे के आश्रित नहीं हैं – ऐसा बतलाना है। राग और ज्ञान दोनों के कार्य भिन्न हैं; एक-दूसरे के आश्रित नहीं हैं।

किसी ने गाली दी और जीव को द्वेष के पापपरिणाम हुए; वहाँ वे पाप के परिणाम प्रतिकूलता के कारण नहीं हुए और गाली देनेवाले के आश्रित भी नहीं हुए, परन्तु चारित्रगुण के आश्रित हुए हैं। चारित्रगुण ने उस समय उस परिणाम के अनुसार परिणमन किया है; अन्य तो निमित्तमात्र हैं।

अब, द्वेष के समय उसका ज्ञान हुआ कि 'मुझे यह द्वेष हुआ' – यह ज्ञानपरिणाम, ज्ञानगुण के आश्रित है; क्रोध के आश्रित नहीं है। ज्ञानस्वभावी द्रव्य के आश्रित ज्ञानपरिणाम होते हैं; अन्य के आश्रित नहीं होते। इसी प्रकार सम्यग्दर्शनपरिणाम, सम्यग्ज्ञानपरिणाम, आनन्द परिणाम इत्यादि में भी ऐसा ही समझना। यह ज्ञानादि परिणाम, द्रव्य के आश्रित हैं; अन्य के आश्रित नहीं हैं तथा परस्पर एक-दूसरे के आश्रित भी नहीं हैं।

गाली के शब्द अथवा द्वेष के समय उसका जो ज्ञान हुआ, वह

ज्ञान, शब्दों के आश्रित नहीं है और क्रोध के आश्रित भी नहीं है, उसका आधार तो ज्ञानस्वभावी वस्तु है; इसलिए उस पर दृष्टि लगा तो तेरी पर्याय में मोक्षमार्ग प्रगट हो जाएगा। इस मोक्षमार्गरूपी कार्य का कर्ता भी तू ही है; अन्य कोई नहीं।

अहो! यह तो सुगम और स्पष्ट बात है। लौकिक पढ़ाई अधिक न की हो, तथापि यह समझ में आ जाए – ऐसा है। जरा अन्तर में उतरकर लक्ष्य में लेना चाहिए कि आत्मा अस्तिरूप है, उसमें ज्ञान है, आनन्द है, श्रद्धा है, अस्तित्व है; इस प्रकार अनन्त गुण हैं। इन अनन्त गुणों के भिन्न-भिन्न अनन्त परिणाम प्रति समय होते हैं, उन सभी का आधार परिणामी – ऐसा आत्मद्रव्य है; अन्य वस्तु तो उनका आधार नहीं है परन्तु अपने में दूसरे गुणों के परिणाम भी उनका आधार नहीं है। जैसे कि श्रद्धापरिणाम का आधार ज्ञानपरिणाम नहीं है और ज्ञानपरिणाम का आधार श्रद्धापरिणाम नहीं है; दोनों परिणामों का आधार, आत्मा ही है। इसी प्रकार सर्व गुणों के परिणामों के लिये समझना। इस प्रकार परिणामी का ही परिणाम है; अन्य का नहीं।

इस 211 वें कलश में आचार्यदेव द्वारा कहे गये वस्तुस्वरूप के चार बोलों में से अभी दूसरे बोल का विवेचन चल रहा है। प्रथम तो कहा कि **'परिणाम एव किल कर्म'** और फिर कहा कि **'स भवति परिणामिन एव, न अपरस्य भवेत्'** परिणाम ही कर्म है और वह परिणामी का ही होता है, अन्य का नहीं – ऐसा निर्णय करके स्वद्रव्योन्मुख लक्ष्य जाने से सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है।

सम्यग्ज्ञान व सम्यग्दर्शनपरिणाम हुआ, वह आत्मा का कर्म है, वह आत्मारूप परिणामी के आधार से हुआ है। पूर्व के मन्दराग के आश्रय से अथवा वर्तमान में शुभराग के आश्रय से सम्यग्दर्शन या

सम्यग्ज्ञान के परिणाम नहीं होते। यद्यपि राग भी है तो आत्मा का परिणाम, तथापि श्रद्धापरिणाम से रागपरिणाम अन्य हैं, वे श्रद्धा के परिणाम, राग के आश्रित नहीं हैं क्योंकि परिणाम, परिणामी के ही आश्रय से होते हैं; अन्य के आश्रय से नहीं होते।

उसी प्रकार चारित्रपरिणाम में-आत्मस्वरूप में स्थिरता, वह चारित्र का कार्य है; वह कार्य श्रद्धापरिणाम के आश्रित नहीं है, ज्ञानपरिणाम के आश्रित नहीं, परन्तु चारित्रगुण धारण करनेवाले आत्मा के ही आश्रित है। शरीरादि के आश्रय से चारित्रपरिणाम नहीं है।

श्रद्धा के परिणाम, आत्मद्रव्य के आश्रित हैं।
ज्ञान के परिणाम, आत्मद्रव्य के आश्रित हैं।
स्थिरता के परिणाम, आत्मद्रव्य के आश्रित हैं।
आनन्द के परिणाम, आत्मद्रव्य के आश्रित हैं।

बस, मोक्षमार्ग के सभी परिणाम स्वद्रव्याश्रित हैं; अन्य के आश्रित नहीं हैं। उस समय अन्य (रागादि) परिणाम होते हैं, उनके आश्रित भी ये परिणाम नहीं हैं। एक समय में श्रद्धा-ज्ञान-चारित्र इत्यादि अनन्त गुणों के परिणाम होते हैं, वे कर्म हैं; उनका आधार धर्मी अर्थात् परिणमित होनेवाली वस्तु है; उस समय अन्य जो अनेक परिणाम होते हैं, उनके आधार से श्रद्धा इत्यादि के परिणाम नहीं हैं। निमित्तादि के आधार से तो नहीं हैं परन्तु अपने दूसरे परिणाम के आधार से भी कोई परिणाम नहीं है। एक ही द्रव्य में एक साथ होनेवाले परिणामों में भी एक परिणाम, दूसरे परिणाम के आश्रित नहीं है, द्रव्य के ही आश्रित सभी परिणाम हैं। सभी परिणामरूप से परिणमन करनेवाला 'द्रव्य' ही है; अर्थात्, द्रव्यसन्मुख लक्ष्य जाते ही सम्यक् पर्यायें प्रगट होने लगती हैं।

वाह ! देखो, आचार्यदेव की शैली !! थोड़े में बहुत समा देने की अद्‌भुत शैली है। चार बोलों के इस महान् सिद्धान्त में वस्तुस्वरूप के बहुत से नियमों का समावेश हो जाता है। यह त्रिकाल सत्य, सर्वज्ञ द्वारा निश्चित किया हुआ सिद्धान्त है।

अहो ! यह परिणामी के परिणाम की स्वाधीनता, सर्वज्ञदेव द्वारा कहा हुआ वस्तुस्वरूप का तत्त्व है। सन्तों ने इसका विस्तार करके आश्चर्यकारी कार्य किया है, पदार्थ का पृथक्करण करके भेदज्ञान कराया है। अन्तर में इसका मन्थन करके देख, तो मालूम हो कि अनन्त सर्वज्ञों तथा सन्तों ने ऐसा ही वस्तुस्वरूप कहा है और ऐसा ही वस्तु का स्वरूप है।

सर्वज्ञ भगवन्त दिव्यध्वनि द्वारा ऐसा तत्त्व कहते आये हैं – ऐसा व्यवहार से कहा जाता है किन्तु वस्तुतः दिव्यध्वनि तो परमाणुओं के आश्रित है।

कोई कहे कि अरे, दिव्यध्वनि भी परमाणु-आश्रित हैं ? हाँ, दिव्यध्वनि, वह पुद्‌गल का परिणाम है और पुद्‌गलपरिणाम का आधार तो पुद्‌गलद्रव्य ही होता है; जीव उसका आधार नहीं हो सकता। भगवान का आत्मा तो अपने केवलज्ञानादि का आधार है। भगवान का आत्मा तो केवलज्ञान-दर्शन-सुख इत्यादि निज-परिणामरूप परिणमन करता है परन्तु कहीं देह और वाणीरूप अवस्था धारण करके परिणमित नहीं होता; उस रूप तो पुद्‌गल ही परिणमित होता है। परिणाम, परिणामी के ही होते हैं; अन्य के नहीं।

भगवान की सर्वज्ञता के आधार से दिव्यध्वनि के परिणाम हुए – ऐसा वस्तुस्वरूप नहीं है। भाषारूप परिणाम, अनन्त पुद्‌गलाश्रित हैं और सर्वज्ञता आदि परिणाम, जीवाश्रित है; इस प्रकार दोनों की भिन्नता है। कोई किसी का कर्ता या आधार नहीं है।

देखो! यह भगवान आत्मा की अपनी बात है। समझ में नहीं आयेगी - ऐसा नहीं मानना; अन्तरलक्ष्य करे तो समझ में आये - ऐसी सरल है। देखो, लक्ष्य में लो कि अन्दर कोई वस्तु है या नहीं ? और यह जो जानने के या रागदि के भाव होते हैं - इन भावों का कर्ता कौन है ? आत्मा स्वयं उनका कर्ता है। इस प्रकार आत्मा को लक्ष्य में लेने के लिये दूसरी पढ़ाई की कहाँ आवश्यकता है ? यह अज्ञानी जीव, दुनियाँ की बेगार / मजदूरी करके दुःखी होता है, उसके बदले यदि वस्तुस्वभाव को समझे तो कल्याण हो जाए। अरे जीव! ऐसे सुन्दर न्याय द्वारा सन्तों ने वस्तुस्वरूप समझाया है, उसे तू समझ!

इस प्रकार वस्तुस्वरूप के दो बोल हुए।

अब, तीसरा बोल -

(3) कर्ता के बिना, कर्म नहीं होता

कर्ता; अर्थात्, परिणमित होनेवाली वस्तु और कर्म; अर्थात्, उसकी अवस्थारूप कार्य; कर्ता के बिना कर्म नहीं होता; अर्थात्, वस्तु के बिना पर्याय नहीं होती; सर्वथा शून्य में से कोई कार्य उत्पन्न हो जाए - ऐसा नहीं होता।

देखो! यह वस्तुविज्ञान के महान सिद्धान्त हैं, इस पर 211 वें कलश में चार बोलों द्वारा चारों पक्षों से स्वतन्त्रता सिद्ध की है। अज्ञानी, विदेशों में अज्ञान की पढ़ाई के पीछे हैरान होते हैं, उसकी अपेक्षा सर्वज्ञदेव कथित इस परमसत्य वीतरागी-विज्ञान को समझे तो अपूर्व कल्याण हो।

(1) परिणाम, सो कर्म - यह एक बात।

(2) वह परिणाम किसका ? कि परिणामी वस्तु का परिणाम है, दूसरे का नहीं। यह दूसरा बोल; इसका बहुत विस्तार किया।

अब, यहाँ इस तीसरे बोल में कहते हैं कि परिणामी के बिना परिणाम नहीं होता। परिणामी वस्तु से भिन्न अन्यत्र कहीं परिणाम हो – ऐसा नहीं होता। परिणामी वस्तु में ही उसके परिणाम होते हैं; इसलिए परिणामी वस्तु, वह कर्ता है; उसके बिना कार्य नहीं होता। देखो, इसमें निमित्त के बिना नहीं होता – ऐसा नहीं कहा। निमित्त, निमित्त में रहता है, वह कहीं इस कार्य में नहीं आ जाता; इसलिए निमित्त के बिना कार्य होता है परन्तु परिणामी के बिना कार्य नहीं होता। निमित्त भले हो परन्तु उसका अस्तित्व तो निमित्त में है; इसमें (कार्य में) उसका अस्तित्व नहीं है। परिणामी वस्तु की सत्ता में ही उसका कार्य होता है।

आत्मा के बिना सम्यक्त्वादि परिणाम नहीं होते। अपने समस्त परिणामों का कर्ता आत्मा है, उसके बिना कर्म नहीं होता। **'कर्म कृतं शून्यं न भवति'** – प्रत्येक पदार्थ की अवस्था उस-उस पदार्थ के बिना नहीं होती। सोना नहीं है और गहने बन गये; वस्तु नहीं है और अवस्था हो गयी – ऐसा नहीं हो सकता। अवस्था है, वह त्रैकालिक वस्तु को प्रगट करती है – प्रसिद्ध करती है कि यह अवस्था इस वस्तु की है।

जैसे कि पुद्गल, जड़कर्मरूप होते हैं, वे कर्मपरिणाम, कर्ता के बिना नहीं होते। अब उनका कर्ता कौन? – तो कहते हैं कि उस पुद्गलकर्मरूप परिणमित होनेवाले रजकण ही कर्ता हैं; आत्मा उनका कर्ता नहीं है।

– आत्मा, कर्ता होकर जड़कर्म का बन्ध करे – ऐसा वस्तुस्वरूप में नहीं है।

– जड़कर्म, आत्मा को विकार करायें – ऐसा वस्तुस्वरूप में नहीं है।

– मन्दकषाय के परिणाम, सम्यक्त्व का आधार हों – ऐसा वस्तुस्वरूप में नहीं है।

– शुभराग से क्षायिकसम्यक्त्व हो – ऐसा वस्तुस्वरूप में नहीं है।

तथापि अज्ञानी ऐसा मानता है कि यह सब तो विपरीत है, अन्याय है। भाई! तेरे यह अन्याय वस्तुस्वरूप को सहन नहीं होंगे। वस्तुस्वरूप को विपरीत मानने से तेरे आत्मा को बहुत दुःख होगा – ऐसी करुणा सन्तों को आती है। सन्त नहीं चाहते कि कोई जीव दुःखी हो। जगत के सारे जीव सत्यस्वरूप को समझें और दुःख से छूटकर सुख प्राप्त करें – ऐसी उनकी भावना है।

भाई! तेरे सम्यग्दर्शन का आधार, तेरा आत्मद्रव्य है; शुभराग कहीं उसका आधार नहीं है। मन्दराग, वह कर्ता और सम्यग्दर्शन उसका कार्य – ऐसा त्रिकाल में नहीं है। वस्तु का जो स्वरूप है, वह तीन काल में आगे-पीछे नहीं हो सकता। कोई जीव, अज्ञान से उसे विपरीत माने, उससे कहीं सत्य बदल नहीं जाता। कोई समझे या न समझे, सत्य तो सदा सत्यरूप ही रहेगा, वह कभी बदलेगा नहीं। जो उसे यथावत् समझेंगे, वे अपना कल्याण कर लेंगे और जो नहीं समझेंगे, उनकी तो बात ही क्या? वे तो संसार में भटक ही रहे हैं।

देखो! वाणी सुनी, इसलिए ज्ञान होता है न? परन्तु सोनगढ़वाले इन्कार करते हैं कि वाणी के आधार से ज्ञान नहीं होता – ऐसा कहकर कुछ लोग कटाक्ष करते हैं – लेकिन भाई! यह तो वस्तुस्वरूप है, त्रिलोकीनाथ सर्वज्ञ परमात्मा भी दिव्यध्वनि में यही कहते हैं कि ज्ञान, आत्मा के आश्रय से होता है; ज्ञान, आत्मा का कार्य है, दिव्यध्वनि के परमाणु का कार्य नहीं है। ज्ञानकार्य का कर्ता, आत्मा है; न कि वाणी के रजकण। जिस पदार्थ के जिस गुण का जो वर्तमान होता है,

वह अन्य पदार्थ के अन्य गुण के आश्रय से नहीं होता। उसका कर्ता कौन? तो कहते हैं कि वस्तु स्वयं। कर्ता और उसका कार्य दोनों एक ही वस्तु में होने का नियम है, वे भिन्न वस्तु में नहीं होते।

यह लकड़ी ऊपर उठी, वह कार्य है; यह किसका कार्य है? कर्ता का कार्य है। कर्ता के बिना कार्य नहीं होता। कर्ता कौन है? कि लकड़ी के रजकण ही लकड़ी की इस अवस्था के कर्ता है; यह हाथ, अँगुली या इच्छा उसके कर्ता नहीं हैं।

अब, अन्तर का सूक्ष्म दृष्टान्त लें तो किसी आत्मा में इच्छा और सम्यग्ज्ञान दोनों परिणाम वर्तते हैं; वहाँ इच्छा के आधार से सम्यग्ज्ञान नहीं है और इच्छा, सम्यग्ज्ञान का कर्ता नहीं है। आत्मा ही कर्ता होकर उस कार्य को करता है। कर्ता के बिना कर्म नहीं है और दूसरा कोई कर्ता नहीं है; इसलिए जीव कर्ता द्वारा ज्ञान कार्य होता है। इस प्रकार समस्त पदार्थों के सर्व कार्यों में सर्व पदार्थ का कर्तापना है – ऐसा समझना चाहिए।

देखो भाई! यह तो सर्वज्ञ भगवान के घर की बात है, इसे सुनकर सन्तुष्ट होना चाहिए। अहा! सन्तों ने वस्तुस्वरूप समझाकर मार्ग स्पष्ट कर दिया है; सन्तों ने सारा मार्ग सरल और सुगम बना दिया है, उसमें बीच में कहीं अटकना पड़े – ऐसा नहीं है। पर से भिन्न ऐसा स्पष्ट वस्तुस्वरूप समझे तो मोक्ष हो जाए। बाहर से तथा अन्तर से ऐसा भेदज्ञान समझने पर, मोक्ष हथेली में आ जाता है। मैं तो पर से पृथक् हूँ और मुझमें एक गुण का कार्य दूसरे गुण से नहीं है – यह महान् सिद्धान्त समझने पर स्वाश्रयभाव से अपूर्व कल्याण प्रगट होता है।

कर्म अपने कर्ता के बिना नहीं होता – यह बात तीसरे बोल में कहीं और चौथे बोल में कर्ता की (वस्तु की) स्थिति एकरूप;

अर्थात्, सदा एक समान नहीं होती, परन्तु वह नये-नये परिणामरूप से बदलती रहती है - यह बात कहेंगे। हर बार प्रवचन में इस चौथे बोल का विशेष विस्तार होता है; इस बार दूसरे बोल का विशेष विस्तार आया है।

कर्ता के बिना कार्य नहीं होता - यह सिद्धान्त है। वहाँ कोई कहे कि यह जगत्, कार्य है और ईश्वर उसका कर्ता है - तो यह बात वस्तुस्वरूप की नहीं है। प्रत्येक वस्तु स्वयं ही अपने पर्याय का ईश्वर है और वही कर्ता है; उससे भिन्न दूसरा कोई या अन्य कोई पदार्थ कर्ता नहीं है। पर्याय, वह कार्य और पदार्थ उसका कर्ता। कर्ता के बिना कार्य नहीं और दूसरा कोई कर्ता नहीं है।

कोई भी अवस्था हो - शुद्ध अवस्था, विकारी अवस्था या जड़ अवस्था; उसका कर्ता न हो - ऐसा नहीं होता तथा दूसरा कोई कर्ता हो - ऐसा भी नहीं होता।

प्रश्न - तो क्या भगवान उसके कर्ता हैं ?

उत्तर - हाँ, भगवान कर्ता अवश्य हैं परन्तु कौन भगवान है ? अन्य कोई भगवान नहीं, परन्तु यह आत्मा स्वयं अपना भगवान है, वह कर्ता होकर अपने शुद्ध-अशुद्धपरिणामों का कर्ता है। जड़ के परिणाम को जड़ पदार्थ करता है, वह अपना भगवान है। प्रत्येक वस्तु अपनी -अपनी अवस्था की रचयिता - ईश्वर है। प्रत्येक पदार्थ अपना / स्व का स्वामी है; उसे पर का स्वामी मानना मिथ्यात्व है।

संयोग के बिना अवस्था नहीं होती - ऐसा नहीं है परन्तु वस्तु परिणमित हुए बिना अवस्था नहीं होती - ऐसा सिद्धान्त है। पर्याय के कर्तृत्व का अधिकार वस्तु का अपना है, उसमें पर का अधिकार नहीं है।

इच्छारूपी कार्य हुआ, उसका कर्ता आत्मद्रव्य है। पूर्व पर्याय में तीव्र राग था, इसलिए वर्तमान में राग हुआ - इस प्रकार पूर्व पर्याय में इस पर्याय का कर्तापना नहीं है। वर्तमान में आत्मा वैसे भावरूप परिणमित होकर स्वयं कर्ता हुआ है। इसी प्रकार ज्ञानपरिणाम, श्रद्धापरिणाम, आनन्दपरिणाम, उन सबका कर्ता आत्मा है; पर नहीं। पूर्व के परिणाम भी कर्ता नहीं तथा वर्तमान में उसके साथ वर्तते हुए अन्य परिणाम भी कर्ता नहीं हैं; आत्मद्रव्य स्वयं कर्ता है। शास्त्र में पूर्व पर्याय को कभी-कभी उपादान कहते हैं, वह तो पूर्व -पश्चात् की सन्धि बतलाने के लिये कहा है परन्तु पर्याय का कर्ता तो उस समय वर्तता हुआ द्रव्य है; वही परिणामी होकर कार्यरूप परिणमित हुआ है। जिस समय सम्यग्दर्शनपर्याय हुई, उस समय उसका कर्ता आत्मा ही है; पूर्व की इच्छा, वीतराग की वाणी या शास्त्र - वे कोई वास्तव में इस सम्यग्दर्शन के कर्ता नहीं हैं।

उसी प्रकार ज्ञानकार्य का कर्ता भी आत्मा ही है। इच्छा का ज्ञान हुआ, वहाँ वह ज्ञान कहीं इच्छा का कार्य नहीं है और वह इच्छा, ज्ञान का कार्य नहीं है। दोनों परिणाम एक ही वस्तु के होने पर भी उनमें कर्ता-कर्मपना नहीं है, कर्ता तो परिणामी वस्तु है।

पुद्गल में खट्टी-खारी अवस्था थी और ज्ञान के तदनुसार जाना; वहाँ खट्टे-खारे तो पुद्गल के परिणाम हैं और पुद्गल उनका कर्ता है; तत्सम्बन्धी जो ज्ञान हुआ, उसका कर्ता आत्मा है, उस ज्ञान का कर्ता वह खट्टी-खारी अवस्था नहीं है। अहो! कितनी स्वतन्त्रता!! उसी प्रकार शरीर में रोगादि कार्य हो, उसके कर्ता वे पुद्गल हैं; आत्मा नहीं और उस शरीर की अवस्था का जो ज्ञान हुआ, उसका कर्ता आत्मा है। आत्मा, कर्ता होकर ज्ञानपरिणाम को करता है परन्तु शरीर की अवस्था को वह नहीं करता।

भाई ! यह तो परमेश्वर होने के लिये परमेश्वर के घर की बात है। परमेश्वर सर्वज्ञदेव कथित यह वस्तुस्वरूप है।

जगत् में चेतन या जड़ अनन्त पदार्थ अनन्तरूप से नित्य रहकर अपने वर्तमान कार्य को करते हैं, प्रत्येक परमाणु में स्पर्श -रङ्ग आदि अनन्त गुण; स्पर्श की चिकनी आदि अवस्थाएँ; रङ्ग की काली आदि अवस्थाएँ उन-उन अवस्थाओं का कर्ता परमाणुद्रव्य है; चिकनी अवस्था, वह काली अवस्था की कर्ता नहीं है।

इस प्रकार आत्मा में - प्रत्येक आत्मा में अनन्त गुण हैं। ज्ञान में केवलज्ञान पर्यायरूप कार्य हुआ, आनन्द प्रगट हुआ, उसका कर्ता, आत्मा स्वयं है। मनुष्यशरीर अथवा स्वस्थ शरीर के कारण वह कार्य हुआ - ऐसा नहीं है। पूर्व की मोक्षमार्ग पर्याय के आधार से वह कार्य हुआ - ऐसा भी नहीं है। ज्ञान और आनन्द के परिणाम भी एक-दूसरे के आश्रित नहीं हैं, द्रव्य ही परिणमित होकर उस कार्य का कर्ता हुआ है। भगवान आत्मा स्वयं ही अपने केवलज्ञानादि कार्य का कर्ता है; अन्य कोई नहीं। यह तीसरा बोल हुआ।

(4) वस्तु की स्थिति सदा एकरूप (कूटस्थ) नहीं रहती।

सर्वज्ञदेव द्वारा देखा हुआ वस्तु का स्वरूप ऐसा है कि वह नित्य अवस्थित रहकर प्रतिक्षण नवीन अवस्थारूप परिणमित होती रहती है। पर्याय बदले बिना ज्यों का त्यों कूटस्थ ही रहे - ऐसा वस्तु का स्वरूप नहीं है। वस्तु, द्रव्य-पर्यायस्वरूप है; इसलिए उसमें सर्वथा अकेला नित्यपना नहीं है, पर्याय से परिवर्तनपना भी है। वस्तु स्वयं ही अपनी पर्यायरूप से पलटती है, कोई दूसरा उसे परिवर्तित करे - ऐसा नहीं है।

नयी-नयी पर्यायरूप होना, वह वस्तु का अपना स्वभाव है तो

कोई उसका क्या करेगा ? इन संयोगों से कारण यह पर्याय हुई – इस प्रकार संयोग के कारण जो पर्याय मानता है, उसने वस्तु के परिणमनस्वभाव को नहीं जाना है, दो द्रव्यों को एक माना है। भाई! तू संयोगों से न देख, वस्तुत्वभाव को देख! वस्तुस्वभाव ही ऐसा है कि वह नित्य एकरूप न रहे। द्रव्यरूप से एकरूप रहे, परन्तु पर्यायरूप से एकरूप न रहे, पलटता ही रहे – ऐसा वस्तुस्वरूप है।

इन चार बोलों से ऐसा समझाया है कि वस्तु ही अपने परिणामरूप कार्य की कर्ता है – यह निश्चित सिद्धान्त है।

इस पुस्तक का पृष्ठ पहले ऐसा था और फिर पलट गया – वह हाथ लगने से पलटा हो – ऐसा नहीं है परन्तु उन पृष्ठों के रजकणों में ही ऐसा स्वभाव है कि सदा एकरूप उनकी स्थिति नहीं रहता, उनकी अवस्था बदलती रहती है; इसलिए वे स्वयं पहली अवस्था छोड़कर दूसरी अवस्थारूप हुए हैं, दूसरे के कारण नहीं। वस्तु में भिन्न-भिन्न अवस्थाएँ होती ही रहती है; वहाँ संयोग के कारण वह भिन्न अवस्था हुई – ऐसा अज्ञानी का भ्रम है क्योंकि वह संयोग को ही देखता है परन्तु वस्तुस्वभाव को नहीं देखता। वस्तु स्वयं परिणमनस्वभावी है, इसलिए वह एक ही पर्यायरूप नहीं रहती – ऐसे स्वभाव को जाने तो किसी संयोग से अपने में या अपने से पर में परिवर्तन होने की बुद्धि छूट जाए और स्वद्रव्य की ओर देखना रहे; इसलिए मोक्षमार्ग प्रगट हो।

पानी पहले ठण्डा था और चूल्हे पर आने के बाद गर्म हुआ; वहाँ उन रजकणों का ही ऐसा स्वभाव है कि उनकी सदा एक अवस्थारूप स्थिति न रहे; इसलिए वे अपने स्वभाव से ही ठण्डी अवस्था को छोड़कर, गर्म अवस्थारूप परिणमित हुए हैं। इस प्रकार

स्वभाव को न देखकर अज्ञानी, संयोग को देखता है कि अग्नि के आने से पानी गर्म हुआ। एक समय में तीन काल तीन लोक को जाननेवाले सर्वज्ञ परमात्मा वीतराग तीर्थङ्करदेव की दिव्यध्वनि में आया हुआ यह तत्त्व है और सन्तों ने इसे प्रगट किया है। आचार्यदेव ने चार बोलों से स्वतन्त्र वस्तुस्वरूप समझाया है, उसे समझ ले तो कहीं भ्रम न रहे।

बर्फ के संयोग से पानी ठण्डा हुआ और अग्नि के संयोग से गर्म हुआ – ऐसा अज्ञानी देखता है परन्तु पानी के रजकणों में ही ठण्डा-गर्म अवस्थारूप परिणमित होने का स्वभाव है, उसे अज्ञानी नहीं देखता। भाई! वस्तु का स्वरूप ऐसा ही है कि अवस्था की स्थिति एकरूप न रहे। वस्तु कूटस्थ नहीं है परन्तु बहते हुए पानी की भाँति द्रवित होती है – पर्याय को प्रवाहित करती है, उस पर्याय का प्रवाह वस्तु में से आता है; संयोग में से नहीं आता। भिन्न प्रकार के संयोग के कारण अवस्था की भिन्नता हुई अथवा संयोग बदले, इसलिए अवस्था बदल गयी – ऐसा भ्रम अज्ञानी को होता है परन्तु वस्तुस्वरूप ऐसा नहीं है।

यहाँ चार बोलों द्वारा वस्तु का स्वरूप एकदम स्पष्ट किया है।

1. परिणाम ही कर्म है।

2. परिणामी वस्तु के ही परिणाम हैं; अन्य के नहीं।

3. वह परिणामरूपी कर्म, कर्ता के बिना नहीं होता।

4. वस्तु की स्थिति एकरूप नहीं रहती।

इसलिए वस्तु स्वयं ही अपने परिणामरूप कर्म की कर्ता है – यह सिद्धान्त है।

इन चारों बोलों में तो बहुत रहस्य भर दिया है। उसका निर्णय करने से भेदज्ञान तथा द्रव्यसन्मुखदृष्टि से मोक्षमार्ग प्रगट होगा।

प्रश्न – संयोग के आने पर तद्नुसार अवस्था बदलती दिखाई देती है न?

उत्तर – यह सत्य नहीं है, वस्तुस्वभाव को देखने से ऐसा दिखायी नहीं देता; अवस्था बदलने का स्वभाव वस्तु का अपना है – ऐसा दिखायी देता है। कर्म का मन्द उदय हो, इसलिए मन्दराग और तीव्र उदय हो, इसलिए तीव्रराग – ऐसा नहीं है। अवस्था एकरूप नहीं रहती, परन्तु अपनी योग्यता से मन्द-तीव्ररूप से बदलती है – ऐसा स्वभाव वस्तु का अपना है, वह कहीं पर के कारण नहीं है।

भगवान के निकट जाकर पूजा करे या शास्त्रश्रवण करे, उस समय अलग परिणाम होते हैं और घर पहुँचने पर अलग परिणाम हो जाते हैं, तो क्या संयोग के कारण वे परिणाम बदले? नहीं; वस्तु एकरूप न रहकर उसके परिणाम बदलते रहें – ऐसा ही उसका स्वभाव है; उन परिणामों का बदलना वस्तु के आश्रय से ही होता है; संयोग के आश्रय से नहीं। इस प्रकार वस्तु स्वयं अपने परिणाम की कर्ता है – यह निश्चित सिद्धान्त है।

इन चार बोलों के सिद्धान्तानुसार वस्तुस्वरूप को समझे तो मिथ्यात्व की जड़ें उखड़ जाएँ और पराश्रितबुद्धि छूट जाए। ऐसे स्वभाव की प्रतीति होने से अखण्ड स्व-वस्तु पर लक्ष्य जाता है और सम्यग्ज्ञान प्रगट होता है, उस सम्यग्ज्ञानपरिणाम का कर्ता आत्मा स्वयं है। पहले अज्ञानपरिणाम भी वस्तु के ही आश्रय से थे और अब ज्ञानपरिणाम हुए, वे भी वस्तु के ही आश्रय से हैं।

मेरी पर्याय का कर्ता, दूसरा कोई नहीं है; मेरा द्रव्य परिणमित होकर मेरी पर्याय का कर्ता होता है – ऐसा निश्चय करने से स्वद्रव्य पर लक्ष्य जाता है और भेदज्ञान तथा सम्यग्ज्ञान होता है। अब, उस काल में चारित्रदोष से कुछ रागादि परिणाम रहे, वे भी अशुद्धनिश्चयनय से आत्मा का परिणमन होने से आत्मा का कार्य है – ऐसा धर्मीजीव जानता है; उसे जानने की अपेक्षा से व्यवहार को उस काल में जाना हुआ प्रयोजनवान कहते हैं।

धर्मी को द्रव्य का शुद्धस्वभाव लक्ष्य में आ गया है; इसलिए सम्यक्त्वादि निर्मल कार्य होते हैं और जो राग शेष रहा है, उसे भी वे अपना परिणमन जानते हैं परन्तु अब उसकी मुख्यता नहीं है। मुख्यता तो स्वभाव की हो गयी है। पहले अज्ञानदशा में मिथ्यात्वादि परिणाम थे, वे भी स्वद्रव्य के अशुद्धउपादान के आश्रय से ही थे परन्तु जब निश्चित किया कि मेरे परिणाम अपने द्रव्य के ही आश्रय से होते हैं, तब उस जीव को मिथ्यात्वपरिणाम नहीं रहते; उसे तो सम्यक्त्वादिरूप परिणाम ही होते हैं।

अब, जो रागपरिणमन, साधकपर्याय में शेष रहा, उसमें यद्यपि उसे एकत्वबुद्धि नहीं है, तथापि वह परिणमन अपना है – ऐसा वह जानता है। ऐसा व्यवहार का ज्ञान, उस काल का प्रयोजनवान है। सम्यग्ज्ञान होता है, तब निश्चय-व्यवहार का यथार्थ स्वरूप ज्ञात होता है, तब द्रव्य-पर्याय का स्वरूप ज्ञात होता है; तब कर्ता-कर्म का स्वरूप ज्ञात होता है और स्वद्रव्य के लक्ष्य से मोक्षमार्गरूप कार्य प्रगट होता है; उसका कर्ता, आत्मा स्वयं है।

इस प्रकार इस 211 वें कलश में आचार्यदेव ने चार बोलों द्वारा स्पष्टरूप से अलौकिक वस्तुस्वरूप समझाया है, उसका विवेचन पूर्ण हुआ। ●●

(श्रावकधर्म प्रकाश में परिशिष्ट प्रवचन)

⑨

कारण-कार्य स्वरूप : प्रयोगात्मक प्रश्नोत्तर

A **प्रश्न 1**- मैं मुँह से **बोला**।

B **प्रश्न 2**- मुझ आत्मा और बोलने से **मुँह खुला**।

C **प्रश्न 3**- बोलने और मुँह खुलने से **राग हुआ**।

D **प्रश्न 4**- राग, बोलने और मुँह खुलने से **ज्ञान हुआ**।

मैंने मुँह से शब्द बोला (चार्ट ध्यान से देखो)

त्रिकाली उपादानकारण	ज्ञानगुण	चारित्रगुण	मुँहरूप आहारवर्गणा स्कन्ध	भाषा-वर्गणा
	1 2 3 4 5 6 7 8	1 2 3 4 5 6 7 8	1 2 3 4 5 6 7 8	1 2 3 4 5 6 7 8
अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय, क्षणिक-उपादानकारण	9	9	9	9
उस समय पर्याय की योग्यता, क्षणिक-उपादानकारण	10	10	10	10
(कार्य) उपादेय नैमित्तिक	ज्ञान हुआ	राग हुआ	मुँह खुला	शब्द हुआ

नैमित्तिक / कार्य / उपादेय

(1) जब बोलने को नैमित्तिक कहेंगे,

(2) जब मुँह हिलने को नैमित्तिक कहेंगे,

(3) जब राग कार्य को नैमित्तिक कहेंगे,

(4) जब ज्ञान कार्य को नैमित्तिक कहेंगे

निमित्तकारण

(1) तब ज्ञान-राग, मुँह, निमित्तकारण

(2) तब ज्ञान-राग, बोलना, निमित्तकारण

(3) तब ज्ञान-बोलना, मुँह, निमित्तकारण

(4) तब राग-बोलना, मुँह, निमित्तकारण

नोट - जहाँ 'मुझ आत्मा' या 'मैं', कहा जाये, वहाँ ज्ञान-राग, इन दो कार्यों को गिनना।

☆ ☆ ☆

1

A प्रश्न - मैं मुँह से बोला — इस वाक्य पर निमित्त की परिभाषा लगाकर बताओ ?

उत्तर - आत्मा का ज्ञान, राग तथा मुँह, स्वयं स्वतः बोलनेरूप परिणमित न हो, परन्तु बोलनेरूप कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने

का जिस पर आरोप आ सके, उस आत्मा के ज्ञान, राग तथा मुँह को बोलनेरूप कार्य का निमित्तकारण कहते हैं।

B प्रश्न – आत्मा का ज्ञान, राग और बोलने के कारण, मुँह खुला— इस वाक्य पर निमित्त की परिभाषा लगाकर बताओ ?

उत्तर – आत्मा का ज्ञान, राग, और बोलना, स्वयं स्वतः मुँह खुलनेरूप परिणमित न हो, परन्तु मुँह खुलनेरूप कार्य की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर आरोप आ सके, उस आत्मा के ज्ञान, राग और बोलने को निमित्तकारण कहते हैं।

C प्रश्न – ज्ञान, बोलने और मुँह खुलने के कारण, राग हुआ —इस वाक्य पर निमित्त की परिभाषा लगाइये ?

उत्तर – ज्ञान, बोलना और मुँह खुलना, स्वयं स्वतः रागरूप परिणमित न हो, परन्तु राग की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर आरोप आ सके, उस ज्ञान, बोलने और मुँह खुलने को निमित्तकारण कहते हैं।

D प्रश्न – राग, बोलना और मुँह खुलने के कारण, ज्ञान हुआ — इस वाक्य पर निमित्त की परिभाषा लगाइये ?

उत्तर – राग, बोलना, मुँह खुलना, स्वयं स्वतः ज्ञानरूप परिणमित न हो, परन्तु ज्ञान की उत्पत्ति में अनुकूल होने का जिस पर आरोप आ सके, उस राग, बोलना, मुँह खुलने को निमित्तकारण कहते हैं।

2

A प्रश्न – मैं मुँह से बोला— इस वाक्य पर निमित्त-नैमित्तिक-सम्बन्ध की परिभाषा लगाइये ?

उत्तर – जब भाषावर्गणा स्वयं स्वतः बोलनेरूप परिणमित होती है, तब भावरूप ज्ञान, राग और मुँह, किस उचित निमित्तकारण का

बोलने के साथ सम्बन्ध है, यह बतलाने के लिए बोलने के कार्य को नैमित्तिक कहते हैं; इस प्रकार ज्ञान, राग, मुँह और बोलने के भिन्न-भिन्न पदार्थों के स्वतन्त्र सम्बन्ध को निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध कहते हैं।

B प्रश्न - ज्ञान, राग और बोलने के कारण, मुँह खुला— इस वाक्य पर निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध की परिभाषा लगाकर बताओ ?

उत्तर - जब मुँहरूप आहारवर्गणा स्वयं स्वत: मुँह खुलनेरूप परिणमित होती है, तब ज्ञान, राग, और बोलने के भावरूप किस उचित निमित्तकारण का मुँह खुलने के साथ सम्बन्ध है, यह बतलाने के लिए मुँह खुलनेरूप कार्य को नैमित्तिक कहते हैं। इस प्रकार ज्ञान, राग, बोलना और मुँह खुलना, इन भिन्न-भिन्न पदार्थों के स्वतन्त्र सम्बन्ध को निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध कहते हैं।

C प्रश्न - ज्ञान, बोलने और मुँह खुलने के कारण, राग हुआ — इस वाक्य पर निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध की परिभाषा लगाकर बताओ ?

उत्तर - जब आत्मा का चारित्रगुण स्वयं स्वत: रागरूप परणिमित होता है, तब ज्ञान, बोलना, मुँह खुलने के भावरूप किस उचित निमित्तकारण का राग के साथ सम्बन्ध है, यह बतलाने के लिए रागरूप कार्य को नैमित्तिक कहते हैं; इस प्रकार ज्ञान, बोलना, मुँह खुलना और रागरूप भिन्न-भिन्न पदार्थों के स्वतन्त्र सम्बन्ध को निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध कहते हैं।

D प्रश्न - राग, बोलना, मुँह खुलने के कारण, ज्ञान हुआ — इस वाक्य पर निमित्त-नैमित्तिकसम्बन्ध की परिभाषा लगाकर बताओ ?

उत्तर – जब आत्मा का ज्ञानगुण स्वयं स्वत: ज्ञानरूप परिणमित होता है, तब राग बोलना, मुँह खुलने के भावरूप किस उचित निमित्त –कारण का ज्ञान के साथ सम्बन्ध है, यह बतलाने के लिये ज्ञानरूप कार्य को नैमित्तिक कहते हैं; इस प्रकार राग, बोलना, मुँह खुलना और ज्ञानरूप कार्य के भिन्न–भिन्न पदार्थों के स्वतन्त्र सम्बन्ध को निमित्त–नैमित्तिकसम्बन्ध कहते हैं।

3

A प्रश्न – मुझ आत्मा और मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादान–कारण और बोलना, उपादेय — क्या यह उपादान–उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ पर भाषावर्गणा, त्रिकाली उपादानकारण और बोलना कार्य, उपादेय है।

B प्रश्न – मुझ आत्मा और बोलनेरूप भाषावर्गणा, उपादान–कारण और मुँह खुला, उपादेय — क्या यह उपादान–उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ पर मुँहरूप आहारवर्गणा, त्रिकाली उपादानकारण और मुँह खुला, उपादेय है।

C प्रश्न – बोलनेरूप भाषावर्गणा और मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और राग, उपादेय — क्या यह उपादान–उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर – बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ पर आत्मा का चारित्रगुण, त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय है।

D प्रश्न – रागरूप चारित्रगुण, बोलनेरूप भाषावर्गणा,

मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय— क्या यह उपादान -उपादेय का ज्ञान ठीक है ?

उत्तर - बिल्कुल ठीक नहीं है, क्योंकि यहाँ पर आत्मा का ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय है।

4

A प्रश्न - यदि कोई चतुर माने कि मुझ आत्मा और मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और बोलनेरूप कार्य, उपादेय - तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - मुझ आत्मा और मुँहरूप आहारवर्गणा नष्ट होकर, भाषावर्गणा बन जावे तो ऐसा माना जा सकता है कि मुझ आत्मा और मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और बोलनेरूप कार्य, उपादेय - लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है, क्योंकि उपादान-उपादेय सम्बन्ध अभिन्न सत्तावाले पदार्थों में ही होता है। आत्मा, मुँह, बोलना - जिनकी सत्ता-सत्त्व भिन्न-भिन्न है, ऐसे पदार्थों में उपादान-उपादेय -सम्बन्ध नहीं होता है।

B प्रश्न - यदि कोई - चतुर — माने कि मुझ आत्मा और बोलनेरूप भाषावर्गणा, उपादानकारण और मुँह खुला, उपादेय - तो क्या दोष आता है ?

उत्तर - मुझ आत्मा और बोलनेरूप भाषावर्गणा नष्ट होकर, मुँहरूप आहारवर्गणा बन जाये तो ऐसा माना जा सकता है, कि मुझ आत्मा और बोलनेरूप भाषावर्गणा, उपादानकारण और मुँह खुला, उपादेय - लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है, क्योंकि उपादान-उपादेय सम्बन्ध अभिन्न सत्तावाले पदार्थों में ही होता है। आत्मा, बोलना, मुँह खुलना-जिनकी सत्ता-सत्त्व भिन्न-भिन्न है - ऐसे पदार्थों में उपादान-उपादेयसम्बन्ध नहीं होता है।

C प्रश्न – यदि कोई चतुर माने कि – बोलनेरूप भाषावर्गणा और मुँह खुलनेरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और राग, उपादेय – तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – यदि बोलनेरूप भाषावर्गणा और मुँहरूप आहारवर्गणा नष्ट होकर, आत्मा का चारित्रगुण बन जाये तो ऐसा माना जा सकता है कि बोलनेरूप भाषावर्गणा, मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और राग, उपादेय – लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है, क्योंकि उपादान–उपादेयसम्बन्ध अभिन्न सत्तावाले पदार्थों में ही होता है; बोलना, मुँह खुलना, राग–जिनकी सत्ता–सत्त्व भिन्न–भिन्न है – ऐसे पदार्थों में उपादान–उपादेयसम्बन्ध नहीं होता है।

D प्रश्न – यदि कोई चतुर माने कि रागरूप चारित्रगुण, बोलनेरूप भाषावर्गणा, मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय, तो क्या दोष आता है ?

उत्तर – यदि रागरूप चारित्रगुण, बोलनेरूप भाषावर्गणा, मुँहरूप आहारवर्गणा नष्ट होकर, आत्मा का ज्ञानगुण बन जावे तो ऐसा माना जा सकता है कि रागरूप चारित्रगुण, बोलनेरूप भाषावर्गणा, मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और ज्ञान, उपादेय – लेकिन ऐसा नहीं हो सकता है, क्योंकि उपादान–उपादेयसम्बन्ध अभिन्न सत्तावाले पदार्थों में ही होता है; राग, बोलना, मुँह खुलना, ज्ञान – जिनकी सत्ता–सत्त्व भिन्न–भिन्न है – ऐसे पदार्थों में उपादान–उपादेयसम्बन्ध नहीं होता है।

5

A-D प्रश्न – जो निमित्तकारणों से ही बोलने, मुँह खुलने, राग और ज्ञान आदि की उत्पत्ति मानते हैं, उन्हें जिनवाणी में किन–किन नामों से सम्बोधन किया है।

उत्तर - उन्हें (1)श्री समयसार, कलश 55 में कहा है कि 'उनका सुलटना दुर्निवार है और यह उनका अज्ञान-मोह अन्धकार है।' (2) श्री प्रवचनसार, गाथा 55 में कहा है कि 'वह पद-पद पर धोखा खाता है।' (3) श्री पुरुषार्थसिद्धियुपाय गाथा 6 में कहा है कि 'तस्य देशना नास्ति।' (4) श्री आत्मावलोकन में कहा है कि 'यह उसका हरामजादीपना है।'

6

प्रश्न - (A) भाषावर्गणा, त्रिकाली उपादानकारण और बोलनेरूप कार्य, उपादेय; (B) आहारवर्गणा, त्रिकाली उपादान-कारण और मुँह खुलना, उपादेय; (C) चारित्रगुण त्रिकाली उपादानकारण और राग, उपादेय; (D) ज्ञानगुण, त्रिकाली उपादानकारण और ज्ञान होना उपादेय - इसे समझने से क्या लाभ है?

उत्तर - **(A)** आत्मा, मुँह आदि निमित्तकारणों से बोलनेरूप कार्य हुआ — ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है; (2) बोलनेरूप कार्य के लिये भाषावर्गणा को छोड़कर, दूसरी वर्गणाओं की ओर देखना नहीं रहता।

(B) (1) आत्मा, बोलना आदि निमित्तकारणों से मुँह खुला — ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है; (2) मुँह खुलनेरूप कार्य के लिये आहारवर्गणा को छोड़कर, दूसरी वर्गणाओं तथा आत्मा की ओर देखना नहीं रहता।

(C) (1) बोलना, मुँह खुलना आदि निमित्तकारणों से राग हुआ — ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है; (2) आत्मा में अनन्त गुण हैं, उनमें से रागकार्य के लिये चारित्रगुण को छोड़कर, बाकी गुणों तथा मुँह, बोलना आदि की ओर देखना नहीं रहा।

(D) (1) राग, बोलना, मुँह खुला आदि निमित्तकारणों से ज्ञान हुआ – ऐसी मिथ्यामान्यता का अभाव हो जाता है; (2) आत्मा में अनन्त गुण हैं, उनमें से ज्ञानरूप कार्य के लिये ज्ञानगुण को छोड़कर, बाकी गुणों तथा मुँह बोलना आदि की ओर देखना नहीं रहा।

7

A प्रश्न 7 – आप कहते हो बोलनेरूप कार्य का आत्मा, मुँह आदि निमित्तकारणों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो विश्व में भाषावर्गणा तो भरी पड़ी है, अब बोलनेरूप कार्य क्यों नहीं होता है ? अतः आपका ऐसा कहना कि भाषावर्गणा, उपादान-कारण और बोलनेरूप कार्य, उपादेय – यह मिथ्या सिद्ध होता है ?

उत्तर – अरे भाई! हमने भाषावर्गणा को बोलनेरूप कार्य का उपादानकारण कहा है, वह तो आत्मा, मुँह आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने के लिये कहा है। वास्तव में भाषावर्गणा भी बोलनेरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

B प्रश्न 7 – आप कहते हो कि मुँह खुलनेरूप कार्य का, आत्मा, बोलने आदि निमित्तकारणों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है तो विश्व में आहारवर्गणा तो पहले से ही भरी पड़ी है, तब उन सब में मुँह खुलनेरूप कार्य क्यों नहीं होता है ? अतः आपका ऐसा कहना कि, मुँहरूप आहारवर्गणा, उपादानकारण और मुँह खुला उपादेय— मिथ्या सिद्ध होती है।

उत्तर – अरे भाई! हमने मुँहरूप आहारवर्गणा को, मुँह खुलनेरूप कार्य का उपादानकारण कहा है, वह तो आत्मा, बोलना आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने के लिये से कहा है। वास्तव में मुँहरूप आहारवर्गणा भी मुँह खुलनेरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

C प्रश्न 7 - आप कहते हो कि रागरूप कार्य का, बोलना, मुँह आदि निमित्तकारणों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, तो चारित्रगुण तो सिद्ध और अरहन्त भगवान आदि में भी है, उनमें राग उत्पन्न क्यों नहीं होता है ? अतः आपका ऐसा कहना कि आत्मा का चारित्रगुण उपादानकारण और रागरूप कार्य, उपादेय-मिथ्या सिद्ध होता है ?

उत्तर - अरे भाई ! हमने आत्मा के चारित्रगुण को रागरूप कार्य का उपादानकारण कहा है, वह तो बोलना, मुँह आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने के लिये कहा है। वास्तव में चारित्रगुण भी राग का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

D प्रश्न 7 - आप कहते हो कि ज्ञानरूप कार्य का - राग, बोलना, मुँह आदि निमित्तकारणों से सर्वथा सम्बन्ध नहीं है, तो ज्ञानगुण तो सब आत्माओं के पास है, उन सबको, राग, बोलना, मुँह सम्बन्धी आदि का ज्ञान क्यों नहीं होता है; अतः आपका यह कहना कि ज्ञानागुण, उपादानकारण और राग, बोलना, मुँह खुलने सम्बन्धी का ज्ञान, उपादेय — मिथ्या सिद्ध होता है ?

उत्तर - अरे भाई ! हमने आत्मा के ज्ञान गुण को राग, बोलना, मुँह खुलना आदि सम्बन्धी ज्ञानरूप कार्य का उपादानकारण कहा है, वह तो राग, बोलना, मुँह खुलना आदि निमित्तकारणों से पृथक् करने के लिये कहा है। वास्तव में आत्मा का ज्ञानगुण भी राग, बोलना, मुँह खुलना सम्बन्धी ज्ञानरूप कार्य का सच्चा उपादान कारण नहीं है।

8

A प्रश्न 8- यदि भाषावर्गणा भी बोलनेरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण नहीं है। तो यहाँ पर बोलनेरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – भाषावर्गणा में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है। मानो दस नम्बर की पर्याय में बोलनेरूप कार्य बना तो उसमें अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय नौ नम्बर क्षणिक उपादानकारण यहाँ पर बोलनेरूप कार्य का यहाँ पर सच्चा उपादान कारण है।

B प्रश्न 8– यदि मुँहरूप आहारवर्गणा भी मुँह खुलनेरूप कार्य का सच्चा उपादान कारण नहीं है, तो मुँह खुलनेरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – मुँहरूप आहारवर्गणा में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है। मानो दस नम्बर की पर्याय में मुँह खुलनेरूप कार्य हुआ, तो उसमें अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय नौ नम्बर क्षणिक उपादानकारण यहाँ पर मुँह खुलनेरूप कार्य का सच्चा उपादान –कारण है।

C प्रश्न 8– यदि आत्मा का चारित्रगुण भी रागरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण नहीं है, तो रागरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – आत्मा के चारित्रगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है। मानो दस नम्बर पर्याय में रागरूप कार्य हुआ, तो उसमें अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय नौ नम्बर क्षणिक उपादानकारण, यहाँ पर रागरूप कार्य का सच्चा उपादान कारण है।

D प्रश्न 8– आत्मा का ज्ञानगुण भी ज्ञानरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण नहीं है। यहाँ पर तो ज्ञानरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण कौन है ?

उत्तर – आत्मा के ज्ञानगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है। मानो दस नम्बर पर्याय में ज्ञानरूप कार्य हुआ – तो

उसमें अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय नौ नम्बर क्षणिक उपादानकारण यहाँ पर ज्ञानरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण है।

9

प्रश्न 9 - (A) भाषावर्गणा, (B) आहारवर्गणा, (C) चारित्रगुण, और (D) ज्ञानगुण में अनादि काल से पर्यायों का प्रवाह क्यों चला आ रहा है?

उत्तर - प्रत्येक द्रव्य-गुण, अनादि-अनन्त ध्रौव्य रहता हुआ, एक पर्याय का व्यय और दूसरी पर्याय का उत्पाद, एक ही समय में स्वयं स्वत: अपने परिणमनस्वभाव के कारण करता रहा है, करता है और भविष्य में करता रहेगा— ऐसा वस्तु स्वरूप है; इसी कारण अनादि काल से (A) भाषावर्गणा, (B) आहारवर्गणा, (C) चारित्रगुण और (D) ज्ञानगुण में पर्यायों का प्रवाह चला आ रहा है।

10

प्रश्न 10 - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादान-कारण और (A) बोलना, (B) मुँह खुलना, (C) राग और (D) ज्ञान होना उपादेय — इसे जानने-मानने से क्या लाभ हुआ?

उत्तर - (1) भूत-भविष्य की पर्यायों से दृष्टि हट जाती है। (2) जो त्रिकाली उपादानकारण था, वह भी व्यवहार कारण हो गया। (3) अब यहाँ पर (A) बोलने, (B) मुँह खुलने, (C) राग होने और (D) ज्ञान होनेरूप कार्य के लिए, मात्र अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, क्षणिक उपादान कारण की ओर देखना रहा।

11

A प्रश्न 11- कोई चतुर फिर प्रश्न करता है कि अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती हैं और पर्याय में से पर्याय नहीं

आती है, ऐसा जिनवाणी में कहा है, फिर यह मानना कि अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक उपादानकारण और बोलना, मुँह खुलना, राग होना और ज्ञान होना कार्य, उपादेय - यह बात मिथ्या सिद्ध होती है।

उत्तर - अरे भाई! अभाव में से भाव की उत्पत्ति नहीं होती है और पर्याय में से पर्याय नहीं आती है— जिनवाणी की यह बात बिल्कुल ठीक है, परन्तु हमने तो कार्य से पहिले कौनसी पर्याय होती है, उसकी अपेक्षा अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय को बोलने, मुँह खोलने, राग होने और ज्ञान होनेरूप कार्य का क्षणिक उपादानकारण कहा है, परन्तु अनन्तरपूर्वक्षणवर्ती-पर्याय भी कार्य का सच्चा उपादानकारण नहीं है।

12

A-D प्रश्न 12- यदि अनन्तर पूर्व क्षणवर्ती पर्याय भी बोलने, मुँह खुलने, राग और ज्ञान होनेरूप कार्य का सच्चा उपादानकारण नहीं है, तो कैसा कारण है और कैसा कारण नहीं है?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय बोलनेरूप कार्य का अभावरूप कारण है, कालसूचक है परन्तु कार्य का जनक नहीं है।

13

A-D प्रश्न 13 - यदि ऐसा है तो तो वास्तव में कार्य का सच्चा उपादानकारण कौन है?

उत्तर - वास्तव में उस समय पर्याय की योग्यतारुप, क्षणिक उपादानकारण ही कार्य का सच्चा उपादानकारण है।

14

A-D प्रश्न 14- ऐसा जानने-मानने से क्या-क्या लाभ हुआ?

उत्तर - (1) किसी भी कार्य के लिए, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण की तरफ देखना नहीं रहा। (2) कार्य के लिए एकमात्र उस समय पर्याय की योग्यतारूप क्षणिक उपादानकारण की तरफ देखना रहा।

15

A प्रश्न 15- (1) भाषावर्गणा, त्रिकालीउपादानकारण और बोलना उपादेय। (2) अनन्तरपूर्वक्षणतर्वीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण और बोलना उपादेय। (3) बोलना उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण, और बोलना उपादेय ऐसा जिनवाणी में आया है, परन्तु इतना विस्तृत कथन करने से क्या लाभ था, सीधे कह देते कि— बोलनेरूप कार्य, उस समय पर्याय की योग्यतारूप क्षणिकउपादानकारण से ही होता है।

उत्तर - (1) निमित्तकारणों से पृथक् करने के लिए त्रिकाली उपादानकारण भाषावर्गणा को बताना आवश्यक था। (2) भूत-भविष्य की पर्यायों से पृथक् करने और अभावरूप कारण का ज्ञान कराने के लिए क्षणिकउपादानकारण अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय को बताना आवश्यक था। (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक -उपादानकारण से पृथक् करने और सच्चे कारण-कार्य का ज्ञान कराने के लिए क्षणिकउपादानकाराण, उस समय पर्याय की योग्यता का ज्ञान कराना आवश्यक था। इस प्रकार तीनों कारणों का सच्चा ज्ञान कराने के लिये जिनवाणी में इतना विस्तार से समझाया है। इसी प्रकार अन्य तीन प्रश्नों पर भी घटित करना चाहिए।

16

A-D प्रश्न 16- (A) बोलना, (B) मुँह खुलना, (C) राग और

(D) ज्ञानरूप कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादानकारण ही हुए हैं — इसे जानने-मानने से क्या लाभ हुआ ?

उत्तर - जैसे ये कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक -उपादानकारण से हुए हैं; वैसे ही विश्व में जितने भी कार्य हैं, वे सब उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हो चुके हैं, हो रहे हैं और भविष्य में होते रहेंगे - ऐसा केवली के समान सच्चा ज्ञान हो जाता है।

17

A-D प्रश्न 17- केवली के समान ऐसा सच्चा ज्ञान होते ही क्या-क्या अपूर्व कार्य देखने में आता है ?

उत्तर - सभी कार्य अपनी-अपनी योग्यता से ही होते हैं—ऐसा मानते ही (1) अनादि काल की पर में करूँ-करूँ की खोटी मान्यता का अभाव होना; (2) दृष्टि अपने ज्ञायक स्वभाव पर आना; (3) सम्यग्दर्शनादि की प्राप्ति होकर क्रम से शुद्धि-वृद्धि होकर मोक्ष लक्ष्मी का नाथ बनना; (4) मिथ्यात्वादि संसार के पाँच कारणों का अभाव होना; (5) द्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भावरूप पंच परातर्वन का अभाव होना; और (6) पंच परमेष्ठियों में गिनती होना - ये अपूर्व कार्य देखने में आते हैं।

18

A-D प्रश्न 18- विश्व में प्रत्येक कार्य उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण से ही होता है, उसमें कौन-कौन सी चार बातें एक ही साथ, एक ही समय में नियम से होती हैं ?

उत्तर - (1) उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान (उत्पाद) (2) अनन्तर पूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिक उपादान कारण (व्यय) (3) त्रिकाली उपादानकारण (ध्रौव्य) (4) (निमित्त कारण)। ये चार बातें, प्रत्येक कार्य में एक ही साथ एक ही काल में नियम से होती हैं। *[श्री प्रवचनसार, गाथा टीका 95]*

19

A-D प्रश्न 19 - उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादानकारण से ही होनवाले (A) बोलना, (B) मुँह खुलना, (C) राग और (D) ज्ञान रूप कार्य क्या निरपेक्ष है ?

उत्तर - हाँ, स्वयं पर की अपेक्षा नहीं रखते हैं, ये कार्य इसलिए निरपेक्ष है। और अपनी अपेक्षा रखते हैं इसलिए सापेक्ष हैं। पात्र भव्य जीवों को प्रथम काय की निरपेक्ष सिद्धि करनी चाहिए। फिर जो कार्य हुआ, उसका अभावरूप कारण कौन है; त्रिकाली उपादान-कारण कौन है और निमित्तकारण कौन है - इन बातों का ज्ञान करना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक कार्य के समय चारों बातें नियम से होती हैं।

20

A-D प्रश्न 20- (A) बोलना, (B) मुँह खुलना, (C) राग और (D) ज्ञानरूप कार्य — उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादान कारण से ही हुए हैं। -ऐसा जानने-मानने से किस-किस कारण पर दृष्टि नहीं जाती है ?

उत्तर - (1) निमित्तकारण; (2) त्रिकाली उपादानकारण; (3) अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण पर, कार्य के लिए दृष्टि नहीं जाती है।

21

A प्रश्न 21- आत्मा का ज्ञान, कारण और बोलना, कार्य

— कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - भाषावर्गणा में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बोलनेरूप कार्य हुआ है; आत्मा के ज्ञान से नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और बोलनेरूप कार्य, आत्मा के ज्ञान से हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

B प्रश्न 21-आत्मा का ज्ञान कारण और मुँह खुला कार्य-कारणानु-विधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - मुँहरूप आहारवर्गणा में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक उपादानकारण से मुँह खुला है; आत्मा के ज्ञान से नहीं खुला है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और बोलनेरूप कार्य, आत्मा के ज्ञान से हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

C प्रश्न 21- आत्मा का ज्ञान, कारण और राग कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा के चारित्रगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से राग हुआ है; आत्मा के ज्ञान के कारण राग नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और आत्मा के ज्ञान के कारण राग हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

D प्रश्न 21- राग, कारण और ज्ञान, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा के ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है; राग के कारण ज्ञान नहीं हुआ है तो कारणानुविधायिनी कार्याणि को माना और राग के कारण से ज्ञान हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

22

A प्रश्न 22- राग, कारण और बोलना, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - भाषावर्गणा में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बोलनेरूप कार्य हुआ है; राग के कारण नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना और राग के कारण बोलनेरूप कार्य हुआ - ऐसी मान्यता वाले कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

B प्रश्न 22- राग, कारण और मुँह, खुला कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - मुँहरूप आहारवर्गणा में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से मुँह खुलनेरूप कार्य हुआ है; राग के कारण नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना और राग के कारण मुँह खुला है - ऐसी मान्यतावाले कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

C प्रश्न 22- बोलना, कारण और राग, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा के चारित्रगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से रागरूप कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना और बोलने के कारण रागरूप कार्य हुआ है - ऐसी मान्यतावाले कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

D प्रश्न 22- मुँह खुलना, कारण और ज्ञान, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा के ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ज्ञानरूप कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और मुँह खुलने के कारण ज्ञान हुआ है — ऐसी मान्यतावाले कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

23

A प्रश्न 23- मुँह खुलना, कारण और बोलना, कार्य-कारणानुविधायीनि को कब माना और कब नहीं माना।

उत्तर - भाषावर्गणा में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बोलनेरूप कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्यणि को माना और मुँह खुलने के कारण बोलनेरूप कार्य हुआ है — ऐसी मान्यतवाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

B प्रश्न 23- बोलना, कारण मुख खुलना, कार्य- कारणानुविधायीनि को कब माना और कब नहीं माना।

उत्तर - मुँहरूप आहारवर्गणा में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से मुँह खुलनेरूप कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना और बोलनेरूप कार्य के कारण मुँह खुला है - तो ऐसी मान्यतावाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

C प्रश्न 23-मुँह खुलना, कारण और राग, कार्य-कारणानुविधायीनि को कब माना और कब नहीं माना।

उत्तर - आत्मा के चारित्रगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से रागरूप कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना, और मुँह खुलने से रागरूप कार्य हुआ है - ऐसी मान्यतावाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

D प्रश्न 23- बोलना, कारण और ज्ञान, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - आत्मा के ज्ञानगुण में से, अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ज्ञान हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना, और बोलनेरूप कारण से ज्ञानरूप कार्य हुआ है - ऐसी मान्यतावाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना है।

24

A प्रश्न 24- भाषावर्गणा, कारण और बोलना, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादान का अभाव

करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से बोलनेरूप कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना और भाषावर्गणा के कारण बोलनेरूप कार्य हुआ है — ऐसी मान्यता-वाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

B प्रश्न 24- मुँहरूप आहारवर्गणा, कारण और मुँह खुला, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादान का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से मुँह खुलनेरूप कार्य हुआ है; मुँहरूप आहारवर्गणा से नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना है और मुँहरूप आहारवर्गणा के कारण मुँह खुलनेरूप कार्य हुआ है — ऐसी मान्यतावाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

C प्रश्न 24- आत्मा का चारित्रगुण, कारण और राग, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से रागरूप कार्य हुआ है; आत्मा के चारित्रगुण के कारण नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और आत्मा के चारित्रगुण के कारण रागरूप कार्य हुआ है — ऐसी मान्यतावाले ने कारणानु-विधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

D प्रश्न 24- आत्मा का ज्ञानगुण, कारण और ज्ञान हुआ, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण का अभाव करके, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से ज्ञानरूप कार्य हुआ है; आत्मा के ज्ञानगुण के कारण नहीं हुआ तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और आत्मा के ज्ञानगुण के कारण, ज्ञानरूप कार्य हुआ है — ऐसी मान्यतावाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

25

A प्रश्न 25- अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय, कारण और बोलना कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - बोलनारूप कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण से नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय से बोलनेरूपकार्य हुआ — ऐसी मान्यतावाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

B प्रश्न 25- अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कारण और मुँह खुला, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - मुँह खुलनेरूप कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण से नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्व क्षणवर्ती पर्याय क्षणिकउपादानकारण से मुँह खुलनेरूप का कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

C प्रश्न 25- अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कारण और राग, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - रागरूप कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिक-उपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिक-उपादानकारण से नहीं हुआ है, तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण से रागरूप कार्य हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

D प्रश्न 25- अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय, कारण और ज्ञान, कार्य-कारणानुविधायीनि कार्याणि को कब माना और कब नहीं माना ?

उत्तर - ज्ञानरूप कार्य, उस समय पर्याय की योग्यता क्षणिकउपादानकारण से हुआ है; अनन्तरपूर्वक्षणवर्तीपर्याय से नहीं हुआ है तो कारणानुविधायीनि कार्याणि को माना; और अनन्तरपूर्व-क्षणवर्तीपर्याय क्षणिकउपादानकारण से ज्ञानरूप कार्य हुआ तो ऐसी मान्यतावाले ने कारणानुविधायीनि कार्याणि को नहीं माना।

इसी प्रकार अन्य अनेक वाक्य बनाकर उक्त प्रकार से अभ्यास करना चाहिए। ●●

भैया भगवतीदास कृत

उपादान-निमित्त संवाद

मङ्गलाचरण

पाद प्रणमि जिनदेव के, एक उक्ति उपजाय।
उपादान अरु निमित्त को, कहूँ संवाद बनाय॥ 1॥

शिष्य का प्रश्न -

पूछत है कोऊ तहाँ, उपादान किह नाम।
कहो निमित्त कहिये कहा, कब के हैं इह ठाम॥ 2॥

शिष्य के प्रश्न का उत्तर -

उपादान निज शक्ति है, जिय को मूल स्वभाव।
है निमित्त परयोग तें, बन्यो अनादि बनाव॥ 3॥

निमित्त -

निमित्त कहै मोकों सबै, जानत है जगलोय।
तेरो नाम न जान हीं, उपादान को होय॥ 4॥

उपादान -

उपादान कहै रे निमित्त, तू कहा करै गुमान।
मोकों जानें जीव वे, जो है सम्यक्वान॥ 5॥

निमित्त –

कहैं जीव सब जगत के, जो निमित्त सोई होय।
उपादान की बात को, पूछे नाहीं कोय॥ 6॥

उपादान –

उपादान बिन निमित्त तू, कर न सके इक काज।
कहा भयौ जग ना लखै, जानत हैं जिनराज॥ 7॥

निमित्त –

देव जिनेश्वर गुरु यती, अरु जिन आगम सार।
इह निमित्त से जीव सब, पावत है भवपार॥ 8॥

उपादान –

यह निमित्त इस जीव के, मिल्यो अनन्तीवार।
उपादान पलट्यो नहीं, तो भटक्यो संसार॥ 9॥

निमित्त –

कै केवलि कै साधु के, निकट भव्य जो होय।
सो क्षायक सम्यक् लहै, यह निमित्त बल जोय॥ 10॥

उपादान –

केवलि अरु मुनिराज के, पास रहे बहु लोय।
पै जाको सुलट्यो धनी, क्षायिक ताकों होय॥ 11॥

निमित्त –

हिंसादिक पापन किये, जीव नर्क में जाहिं।
जो निमित्त नहिं काम को, तो इस काहे कहाहिं॥ 12॥

उपादान -

हिंसा में उपयोग जहाँ, रहे ब्रह्म के राच।
तेई नर्क में जात है, मुनि नहिं जाहिं कदाच॥ 13 ॥

निमित्त -

दया दान पूजा किये, जीव सुखी जग होय।
जो निमित्त झूठौ कहो, यह क्यों माने लोय॥ 14 ॥

उपादान -

दया-दान-पूजा भली, जगत माहिं सुखकार।
जहं अनुभव को आचरण, तहँ यह बन्ध विचार॥15 ॥

निमित्त -

यह तो बात प्रसिद्ध है, सोच देख उर माहिं।
नरदेही के निमित्त बिन, जिय क्यों मुक्ति न जाहिं॥16 ॥

उपादान -

देह पींजरा जीव को, रोकै शिवपुर जात।
उपादान की शक्ति सों, मुक्ति होत रे भ्रात॥ 17 ॥

निमित्त -

उपादान सब जीव पै, रोकनहारौ कौन ?
जाते क्यों नहिं मुक्ति में, बिन निमित्त के हौन॥ 18 ॥

उपादान -

उपादान सु अनादि को, उलट रह्यौ जगमाहिं।
सुलटत ही सूधे चलें, सिद्धलोक को जाहिं॥ 19 ॥

निमित्त -

कहुँ अनादि बिन निमित्त ही, उलट रह्यौ उपयोग।
ऐसी बात न संभवै, उपादान तुम जोग॥ 20॥

उपादान -

उपादान कहे रे निमित्त, हम पै कही न जाय।
ऐसी ही जिन केवली, देखे त्रिभुवन राय॥ 21॥

निमित्त -

जो देख्यो भगवान ने, सो ही सांचो आहिं।
हम तुम संग अनादि के, बली कहोगे काहिं॥ 22॥

उपादान -

उपादान कहे वह बली, जाको नाश न होय।
जो उपजत विनशत रहे, बली कहाँ तैं सोय॥ 23॥

निमित्त -

उपादान तुम जोर हो, तो क्यों लेत अहार।
पर निमित्त के योग सों, जीवत सब संसार॥ 24॥

उपादान -

जो अहार के जोग सों, जीवत है जगमांहिं।
तो वासी संसार के, मरते कोऊ नांहिं॥ 25॥

निमित्त -

सूर सोम मणि अग्नि के, निमित्त लखें ये नैन।
अन्धकार में कित गयो, उपादान दृग दैन॥ 26॥

उपादान -

सूर सोम मणि अग्नि जो, करे अनेक प्रकाश।
नैन शक्ति बिना ना लखैं, अंधकार सम भास॥ 27॥

निमित्त -

कहे निमित्त वे जीव को, मो बिन जग के माहिं।
सबै हमारे वश परे, हम बिन मुक्ति न जाहिं॥ 28॥

उपादान -

उपादान कहै रे निमित्त! ऐसे बोल न बोल।
तोकों तज निज भजत हैं, ते ही करें किलोल॥ 29॥

निमित्त -

कहै निमित्त हमको तजै, ते कैसे शिव जात।
पंच महाव्रत प्रगट हैं, और हु क्रिया विख्यात॥ 30॥

उपादान -

पंच महाव्रत जोग त्रय, और सकल व्यवहार।
पर कौ निमित्त खपाय के, तब पहुँचे भवपार॥ 31॥

निमित्त -

कहै निमित्त जग में बड्यो, मो तै बड़ौ न कोय।
तीन लोक के नाथ सब, मो प्रसाद तें होय॥ 32॥

उपादान -

उपादान कहै तू कहा, चहुँगति में ले जाय।
तो प्रसाद तैं जीव सब, दुःखी होहिं रे भाय॥ 33॥

निमित्त -

कहै निमित्त जो दुःख सहै, सो तुम हमहिं लगाय।
सुखी कौन तैं होत है, ताको देहु बताय॥ 34॥

उपादान -

जो सुख को तू सुख कहै, सो सुख तो सुख नांहिं।
ये सुख दुःख के मूल हैं, सुख अविनाशी मांहिं॥ 35॥

निमित्त -

अविनाशी घट घट वसे, सुख क्यों विलसत नांहिं।
शुभ निमित्त के योग बिन, परे परे बिललाहिं॥ 36॥

उपादान -

शुभ निमित्त इह जीव को, मिल्यो कई भवसार।
पै इक सम्यक्‌दर्श बिन, भटकत फिर्‌यो गँवार॥ 37॥

निमित्त -

सम्यग्दर्शन भये कहा, त्वरित मुक्ति में जाहिं ?
आगे ध्यान निमित्त है, ते शिव को पहुँचाहिं॥ 38॥

उपादान -

छोर ध्यान की धारणा, मोर योग की रीत।
तोरि कर्म के जाल को, जोर लई शिव प्रीत॥ 39॥

निमित्त द्वारा पराजय की स्वीकृति

तब निमित्त हार्‌यो तहाँ, अब नहिं जोर बसाय।
उपादान शिव लोक में, पहुँच्यो कर्म खपाय॥ 40॥

उपादान को लाभ -

उपादान जीत्यो तहाँ, निजबल कर परकाश।
सुख अनन्त ध्रुव भोगवे, अन्त न वरन्यो तास॥ 41॥

तत्त्व स्वरूप -

उपादान अरु निमित्त ये, सब जीवन पै वीर।
जो निजशक्ति संभार ही सो पहुँचें भव तीर॥ 42॥

उपादान की महिमा -

भैया महिमा ब्रह्म की, कैसे वरनी जाय?
वचन अगोचर वस्तु है, कहिवो वचन बताय॥ 43॥

इस संवाद से ज्ञानी और अज्ञानी का अभिप्राय -

उपादान अरु निमित्त को, सरस बन्यौ संवाद।
समदृष्टि को सरल है, मूरख को बकवाद॥ 44॥

संवाद के रहस्य को कौन जानता है?

जो जानै गुण ब्रह्म के, सो जानै यह भेद।
साख जिनागम सों मिलै, तो मत कीज्यो खेद॥ 45॥

ग्रन्थकर्ता का नाम और स्थान एवं रचनाकाल -

नगर आगरा अग्र है, जैनी जन को वास।
तिह थानक रचना करी, भैया स्वमति प्रकाश॥ 46॥

संवत् विक्रम भूप का, सत्तरहसैं पंचास।
फाल्गुन पहले पक्ष में, दशों दिशा परकाश॥ 47॥

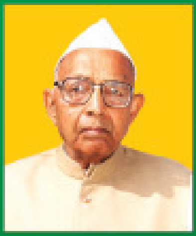

पण्डित कैलाशचन्द्र जैन

जन्म : सन् 1913

देह परिवर्तन : 19 दिसम्बर 2012

जन्मस्थान : ग्राम टिकरी, जिला मेरठ, उत्तरप्रदेश

पिता – श्री मिट्ठनलाल जैन

माता – श्रीमती भरतोदेवी जैन

आपकी प्रारम्भिक शिक्षा, मथुरा–चौरासी एवं तत्पश्चात् जम्बू–विद्यालय, सहारनपुर में हुई। लघुवय में लाहौर में स्वतन्त्र व्यवसाय किया। देश के स्वाधीन होने के पश्चात्, स्वदेश वापिसी और बुलन्दशहर (उ०प्र०) में आजाद ट्रेडिंग कम्पनी के नाम से, पुस्तकों एवं स्टेशनरी का व्यवसाय किया। अपनी सहधर्मिणी श्रीमती विमलादेवी, चार पुत्रियों तथा एक पुत्र के साथ, पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वहन करते हुए, धर्ममार्ग पर गतिशील रहे।

सिद्धक्षेत्र श्री गिरनारजी की यात्रा के समय, सोनगढ़ में विराजित दिव्यविभूति पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के मंगल साक्षात्कार के उपरान्त, आपके जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हुआ। फलस्वरूप, निरन्तर तत्त्वाराधना एवं तत्त्वप्रचार ही आपके जीवन के अभिन्न अंग बन गये और सम्पूर्ण देश में तत्त्वज्ञान की पताका फहराने के लिये, आप एकाकी निकल पड़े।

पूज्य गुरुदेवश्री के मंगल प्रवचनों एवं माननीय श्री रामजीभाई दोशी एवं खेमचन्दभाई सेठ की कक्षाओं में जो कुछ सीखा, उसे 'जैन–सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला' के, आठ भाग के रूप में संकलन का कार्य कर, जन–जन को जिनधर्म के गूढ़ रहस्य को साधारण भाषा में प्रस्तुत करने का अपूर्व कार्य किया।

आपकी तत्त्वज्ञान की प्रचार–प्रसार की उत्कृष्ट भावनाओं के फलस्वरूप, उन्हें क्रियान्वित करने हेतु, **तीर्थधाम मङ्गलायतन** के रूप में आपके स्वप्न को आपके परिवार व समग्र मुमुक्षु–समाज ने साकार किया। यहाँ से प्रकाशित मासिक–पत्रिका, **मङ्गलायतन** के आप आजीवन प्रधान सम्पादक रहे।

स्वाभिमानीवृत्ति के साथ ही, निर्भीकता, निस्पृहता, सिद्धान्तों पर अडिगता आदि आपके व्यक्तित्व की उल्लेखनीय विशेषताएँ रही हैं।

आपके उपकारों के प्रति नतमस्तक होते हुए, आपके श्रीचरणों में वन्दन समर्पित करते हैं, और आपकी इस अनुपम कृति को समाज के लाभार्थ प्रस्तुत कर रहे हैं।

जैन सिद्धान्त प्रवेश रत्नमाला (भाग-2)